• लेखक की अन्य प्रकाशित पुस्तकें •



सप्तम महाविद्या

श्री धूमावती साधना और सिद्धि





यदि किसी व्यक्ति को विशिष्ट पूजा-अनुष्ठान आदि करने पर भी कोई फल प्राप्त नहीं हो रहा है तो इसका तात्पर्य यह है कि उसकी ग्रहों की मारकेश दशा चल रही है, अपने प्रारब्ध का फल उसे भोगना पड़ रहा है। ऐसी स्थिति में उसे धूमावती महाविद्या का आश्रय लेना चाहिए।

धूमावती की साधना रात्रि-काल में ही की जाती है। इन देवी का स्वरूप बड़ा विचित्र है। इनके शरीर का आकार स्थूल है। केश रूखे-सूखे हैं, वेश मलिन है, दोनों स्तन नीचे की ओर लटके हुए हैं, सूखे हुए हैं, जैसे किसी वृद्धा स्त्री के होते हैं।

वैसे तो साधारणतया सभी प्रकार की मनोकामनाएं लेकर धूमावती की साधना की जाती है, परन्तु दरिद्रता को दूर करने के लिए, कर्ज से छुटकारे के लिए, किसी को कर्ज दिया हो और वह पैसा वापिस न दे रहा हो, कोई आपको अकारण सता रहा हो, आपकी जमीन-मकान पर कब्जा किये बैठा हो, अनाधिकृत रूप से आपका हक मार रहा हो, घर में हमेशा दरिद्रता, बीमारी बनी रहती हो, सब कुछ ठीक होते हुए भी संतान की प्राप्ति न होना आदि - जब ऐसी स्थितियां दिखायी दें तो भगवती धूमावती की उपासना करना अत्यन्त ही हितकारी होता है। किसी के द्वारा कील-बंधन कर दिया गया हो, आपका व्यावसायिक प्रतिष्ठान बांध दिया गया हो, रोजगार, आमदनी बांध दी हो, मित्र से, अधिकारी से, घर के लोगों से विद्वेषण, उच्चाटन करा दिया गया हो, तो उसके लिए इन भगवती की उपासना करनी चाहिए।

ISBN: 978-93-5311-363-6



आस्था प्रकाशन मन्दिर
बागपत • दिल्ली
Mob. : 09410030994, 9540674788
Email : asthaprakashanmandir@gmail.com
www.asthaprakashan.com

सप्तम महाविद्या श्री धूमावती साधना और सिद्धि

योगेश्वरानन्द एवं सुमित गिरधरवाल



सप्तम महाविद्या

श्री धूमावती साधना और सिद्धि



योगेश्वरानन्द एवं सुमित गिरधरवाल



योगेश्वरानन्द

श्री योगेश्वरानन्द द्वारा लिखित अन्य ग्रन्थ

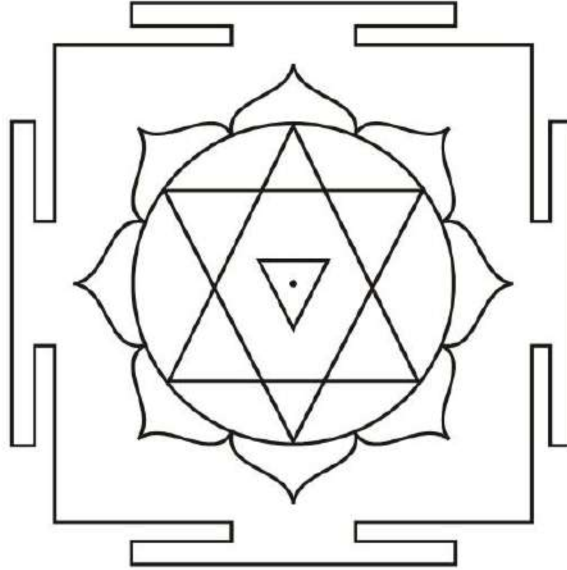
- श्री बगलामुखी-साधना और सिद्धि
- षोडशी महाविद्या (श्रीयन्त्र-पूजन पद्धति)
- मन्त्र-साधना
- षट्कर्म-विधान
- आगम-रहस्य
- श्री बगलामुखी-तन्त्रम्
- श्री प्रत्यंगिरा साधना रहस्य
- यन्त्र-साधना

आगामी पुस्तकें

- महाविद्या श्रीतारा साधना और सिद्धि
- अघोरी
- श्री बगलामुखी साधना-रहस्य "ब्रह्मास्त्र साधना
- सूर्य आस्था से स्वास्थ्य तक
- मन्त्र-सिद्धि-रहस्य
- श्री धूमावती साधना और सिद्धि

सप्तम् महाविद्या

श्री धूमावती साधना
और
सिद्धि



विवर्ण्णा चञ्चला दुष्टा दीर्घा च मलिनाम्बरा।
विमुक्त-कुन्तला वै सा विधवा विरलद्विजा॥
काकध्वज - रथारूढ़ा विलम्बित - पयोधरा।
शूर्प - हस्तातिरुक्षाक्षा धूतहस्ता वरानना॥
प्रवृद्ध - घोणा तु भृशं कुटिला कुटिलेक्षणा।
क्षुत्पिपासादिर्दता नित्यं भयदा कलहास्पदा॥

सप्तम् महाविद्या

श्री धूमावती साधना और सिद्धि

लेखक एवं संकलयिता

योगेश्वरानन्द

एवं

सुमित गिरधरवाल



प्रकाशक

आस्था प्रकाशन मन्दिर

दिल्ली • बागपत

9650084977, 8130912375

मुख्य आकर्षण

- विशिष्ट साधना-काल (विजय-काल)
- विशिष्ट नक्षत्र-वृक्ष
- नक्षत्रानुसार जप एवं फल
- साधना-रहस्य
- श्री धूमावती पूजन-विधान
- श्री धूमावती शाबर मन्त्र
- हवन-विधान
- श्री धूमावती कवचम्
- श्री धूमावती हृदयम्
- श्री धूमावती-स्तोत्रम्
- श्री धूमावती शतनाम स्तोत्रम्
- श्री धूमावती सहस्रनाम स्तोत्रम्
- धूमावती-मन्त्र एवं प्रयोग
- श्री धूमावती सहस्रनामार्चन प्रयोग
- श्री धूमावती आरती



आस्था प्रकाशन मन्दिर
दिल्ली • बागपत

सप्तम् महाविद्या

श्री धूमावती साधना और सिद्धि

योगेश्वरानन्द एवं सुमित गिरधरवाल

चेतावनी–

श्री वृद्धि और सुख-शान्ति के लिए मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र साधनाओं का विशेष महत्व है। परन्तु यदि किसी साधक को प्रस्तुत पुस्तक में दी गयी साधना के प्रयोग में विधिगत, वस्तुगत अशुद्धता अथवा त्रुटि के कारण किसी भी प्रकार की क्लेशजनक हानि होती है, अथवा कोई अनिष्ट होता है, तो इसका उत्तरदायित्व स्वयं उसी का होगा। लेखक, प्रकाशक एवं मुद्रक उसके लिए उत्तरदायी नहीं होंगे। अतः कोई भी प्रयोग योग्य व्यक्ति के संरक्षण में ही करें।

ISBN : 978-93-5311-363-6

अ०वि० मूल्य : 250/- रुपये

प्रथम संस्करण : 2019

शब्द-संयोजक : अतुल ग्राफिक्स, ट्रॉनिका सिटी, गाजियाबाद (उ०प्र०)

मुद्रक : सागर प्रिंटर्स, दिल्ली

प्रकाशक : आस्था प्रकाशन मन्दिर,
'हेम कुंज' कोर्ट रोड, गली नं० 6, भजन विहार
कॉलोनी, बागपत-250609 (उ०प्र)
Phone : 9410030994, 9540674788
E-mail : asthaprakashanmandir@gmail.com
Website : www.asthaprakashan.com

श्री धूमावती साधना और सिद्धि

प्रकाशक :

आस्था प्रकाशन मन्दिर

दिल्ली • बागपत

॥ मुख्य प्राप्ति स्थान॥

- चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस, अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, फोन : 011-32996391
- चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दरियागंज, दिल्ली– 9873771577
- कर्मसिंह, अमरसिंह, लोअर बाजार, हरिद्वार, हरिद्वार, फोन : 133-4225619
- डी०पी०बी० पब्लिकेशन्स (देहाती पुस्तक भण्डार), नई सड़क, दिल्ली-6, फोन : 9811648916

॥ अन्य प्राप्ति स्थान ॥

- सुषमा साहित्य मन्दिर, जबलपुर, फोन : 0761-2412740, 9827291149
- अखिलेश्वर पुस्तक भण्डार, जोधपुर, फोन : 09829253642
- विशाल बुक एजेन्सी, अहमदाबाद, फोन : 09825854049
- किशोरीलाल मिश्रा पुस्तकालय, बिलासपुर, फोन : 09425530208
- जैन धार्मिक पुस्तक भण्डार, भोपाल, फोन : 09300647449
- प्रकाश बुक डिपो, अमीनाबाद, लखनऊ, फोन : 09452491305
- ईश्वरलाल बुकसेलर, जयपुर, फोन : 0141-2575532

नोट– पुस्तकें उपलब्ध न होने पर कृपया ऑनलाइन आर्डर करें–

आस्था प्रकाशन मन्दिर

Email : asthaprakashanmandir@gmail.com
Website : www.asthaprakashan.com
+91–9410030994
+91–9540674788
+91–9917325788

भगवती धूमावती के विविध मन्त्र

1. **धूं धूमावती स्वाहा।** (सप्ताक्षरी मन्त्र)
2. **धूं धूं धूमावती स्वाहा।** (अष्टाक्षरी मन्त्र)
3. **धूं धूं धूमावती ठः ठः।** (अष्टाक्षरी मन्त्र)
4. **धूं धूं धूं धूमावती स्वाहा।** (नवमाक्षर मन्त्र)
5. **ॐ ह्रीं श्रीं ॐ ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं धूमायै स्वाहा।** (त्र्योदशाक्षर मन्त्र)
6. **धूं धूं धुर धुर धूमावती क्रों फट् स्वाहा।** (चतुर्दशाक्षर मन्त्र)
7. **ॐ धूं धूमावती देवदत्तः धावति स्वाहा।** (पंचदशाक्षर मन्त्र)
8. **धूं धूं धूं धुरू धुरू धूमावती क्रों फट् स्वाहा।** (पंचदशाक्षर मन्त्र)
9. **ऐं ह्रीं श्रीं ज्येष्ठालक्ष्मि स्वयंभुवे ह्रीं ज्येष्ठायै नमः।** (सप्तदशाक्षर मन्त्र)
10. **धूं धूमावति विद्महे विवर्णा देवी धीमहि तन्नो घोरे प्रचोदयात्।** (धूमावती गायत्री)
11. **ॐ धूमावत्यै विद्महे संहारिण्यै धीमहि तन्नो धूमा प्रचोदयात्।** (धूमावती गायत्री)

12. **ॐ धूं धूं मृत्युधूमे धूं धूं कालधूमे धूं धूं धूम्रवाराहि हुँ फट् स्वाहा।** (धूम्रवाराही)

13. **ह्रीं स्फुर स्फुर प्रस्फुर प्रस्फुर घोर घोरतर तनुरूप चट चट प्रचट प्रचट कह कह वम वम बन्ध बन्ध घातय घातय हुं फट्।** (अघोर मन्त्र)

14. **ओम नमो आदेश गुरुजी को, धूमावती माई भूक से व्याकुल ग्रहण करो शत्रु मेरे, शिव की माया धूम्र का शरीर हरो कष्ट मेरे, दुहाई महादेव की।** (शाबर मन्त्र)

15. **ॐ काग दत्तो बिकोवा, धड़ित धड़ धड़ात। ध्यायमान भवानी दैत्यनाम, देहनाशन तोड्यान्ति। पिशाचा त्रिहाप त्रिहाप हसंती। खड़त खद खदात। त्रिरोष मम धूमावती। नौ नाथ चौरासी सिद्धों के बीच बैठकर धूमावती मन्त्र स्वाहा:।।** (शाबर मन्त्र)

16. **ॐ पाताल निरंजन निराकार, आकाश मण्डल धुन्धुकार, आकाश दिशा से कौन आई, कौन रथ, कौन असवार? थरै धरत्री थरै आकाश, विधवा रूप लम्बे हाथ। लम्बी नाक कुटिल नेत्र, दुष्टा स्वभाव। डमरू बाजे भद्रकाली, क्लेश कलह कालरात्रि। डंका डंकिनी काल किट किटा हास्य करी। जीव रक्षन्ते, जीव भक्षन्ते। जाया जीया आकाश तेरा होये। धुमावंतीपुरी में वास, ना होती देवी ना देव, तंहा ना होती पूजा ना पाती। तंहा ना होती जात न जाती। तब आये श्री शम्भु यती गुरु गोरक्षनाथ। आप भई अतीत। धूं धूं धूमावती फट् स्वाहा।।** (शाबर मन्त्र)

17. **धूम धूम धूमावती, मसान में रहती, मरघट जगाती, सूप छानती, जोगनियों के संग नाचती, डाकनियों के संग मांस खाती, मेरे बैरी अमुक (शत्रु का नाम लें) का भी तु मांस खायै, कलेजा खायै, लहू पिए, प्यास बुझाये, मेरे बैरी को तड़पा तड़पा मारै, ना मारै तो तोहुं को माता पारबती के सिन्दूर की दुहाई। कनीपा औघड़ की आन॥**
(शाबर मन्त्र)



दो शब्द

दश महाविद्याओं में भगवती धूमावती का सातवां स्थान है। अन्य महाविद्याओं के समान ही ये महाविद्या भी अपने साधक को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्रदान करने वाली हैं। दश महाविद्याओं में इनका सप्तम स्थान होने के कारण इन्हें **'सप्तमी'** भी कहा जाता है। **'ज्येष्ठा'** नाम भी इन्हीं महाविद्या को दिया गया है, क्योंकि इनका नक्षत्र **'ज्येष्ठा नक्षत्र'** है तथा ये **'केतु'** ग्रह की अधिष्ठात्री हैं। इनकी महालक्ष्मी की बड़ी बहन के रूप में मान्यता होने के कारण इन्हें **'ज्येष्ठा लक्ष्मी'** भी कहा जाता है। संसार बंधन से मुक्ति तथा पूर्वजन्मकृत दोषों से मुक्ति-प्राप्ति के लिए ये देवी सर्वोपरि मानी जाती हैं।

इस नश्वर संसार में दुःख के चार देवता हैं– रुद्र, यम, वरुण और निर्ऋति। रुद्र देवता महामारी, अनेकों प्रकार के ज्वर, उन्माद आदि रोगों के उत्पन्न करने वाले हैं। यम देवता मूर्च्छा, मृत्यु तथा अंग-भंग आदि के जनक हैं। गठिया, शूल, लकवा आदि के कारक वरुण देव हैं जबकि कलह, दरिद्रता, शोक आदि की संचालिका निर्ऋति हैं। खंडहर महल, ऊसर भूमि, फटे हुए वस्त्र, अकाल, भूख, प्यास, वैधव्य, कलह, संताप आदि सभी कुछ निर्ऋति के क्रोध से ही उत्पन्न होता है। इन सभी का मूल कारण **'दरिद्रता'** है। यही कारण है कि **'श्रुति'** ने निर्ऋति को **'दरिद्रता'** नाम से पुकारा है। दशों

महाविद्याओं में इन्हें **'दारुण विद्या'** भी कहा गया है। शाप देने और नष्ट करने तथा संहार करने की जितनी भी क्षमताएं हैं वे सब देवी के कारण ही हैं। क्रोधमय ऋषियों जैसे कि दुर्वासा, अंगिरा, परशुराम, भृगु आदि की शक्ति भगवती धूमावती ही हैं। यूं तो यह शक्ति सर्वत्र व्याप्त है लेकिन **'ज्येष्ठा नक्षत्र'** तो इसका मूल है। वहीं से इस **'आसुरी कलहप्रिया'** की उत्पत्ति होती है। यही हमारी साक्षात् **'धूमावती'** हैं। एकान्त खंडहर अथवा श्मशान को इनका निवास स्थान माना जाता है।

भगवती धूमावती से सम्बन्धित उपलब्ध विषय-सामग्री पर यदि दृष्टि डालें तो यह सर्वत्र बिखरी-बिखरी सी है। बहुत ही अल्प मात्रा में इसकी उपलब्धता है। मां धूमावती को चूंकि कलह और निर्धनता की देवी माना जाता है, इसलिए इनके साधक भी बहुत ही अल्प संख्या में हैं। लेकिन भगवती के विषय में उक्त विचार सर्वथा निर्मूल हैं। इनके विषय में पर्याप्त विषय-सामग्री उपलब्ध न होने के कारण साधक भी इनसे पूर्ण परिचित नहीं हैं, जिस कारण जैसा जिसने कह दिया वे लोग उसी पर विश्वास कर लेने के लिए विवश हैं और भगवती की वास्तविकता से पूर्णतः अनभिज्ञ रहते हैं। भगवती धूमावती तो चारों पुरुषार्थों को प्रदान करने वाली तथा अपने साधक की चहुं ओर से सुरक्षा करने वाली हैं। इन्हें **'धूमा'** की उपाधि यूं ही नहीं दी गयी। ये वास्तव में ही अपने साधक के शत्रुओं के निवास स्थान में धुएं उठा देती हैं, उसे इतना अधिक बेकार कर देती हैं कि वह चारों ओर से आश्रयहीन हो जाता है। अपने स्थान से उसे पलायन करना ही पड़ता है अन्यथा की दशा में वह किसी न किसी प्रकार के दुष्प्रभावों से इतना अधिक प्रभावित हो जाता है कि उसकी जीने की

इच्छा भी समाप्त होने लगती है।

दुर्भाग्य, अपमृत्यु, शारीरिक और मानसिक कष्ट को दूर करने, मृत्यु के भय को समाप्त करने, शारीरिक दुर्बलता को दूर करने, क्रोध का शमन करने तथा बीमारियों पर नियन्त्रण करने, आत्मरक्षा शक्ति को बढ़ाने तथा बड़े से बड़े तान्त्रिक प्रभाव को नष्ट करने के लिए इस महाविद्या का प्रयोग किया जाता है। ऋण, रोग, भय, शत्रु-पीड़ा आदि को मिटाने के लिए यह महाशक्ति 'अग्रणी' के रूप में प्रतिष्ठित है। यदि साधक का परिवार अथवा विशिष्ट सम्बन्धी किसी भी प्रकार के श्राप से श्रापित हो और परिवार तथा वंश नष्ट हो रहा हो, किसी भी अनुष्ठान का कोई प्रभाव नहीं हो रहा हो तो मां धूमावती की उपासना अवश्य करनी चाहिए। शत्रु का वैभव नष्ट करने, उसका पूर्ण रूप से पराभव करने के लिए तो यह शक्ति ब्रह्मास्त्र मानी जाती है। ये साधक की कठिन से कठिन समस्या का समाधान करती हैं। क्रोध करने वाले जितने भी ऋषि हुए हैं जैसे कि दुर्वासा, अंगिरा, परशुराम तथा भृगु आदि, इनकी शक्ति मां धूमावती ही मानी जाती हैं। दरिद्रता अर्थात् भिक्षुक-अवस्था हो जाना, ऋण मांगने के लिए विवश हो जाना, धनाभाव तथा घर में भोजन का अकाल हो जाना, घर का खंडहर हो जाना, पैसे-पैसे को विवश हो जाना, खेती की जमीन का बंजर हो जाना आदि ये सब अवस्थाएं दरिद्रता की श्रेणी में ही आती हैं। घर में हर समय किसी न किसी का बीमार रहना, कुआं अथवा जलाशय का सूख जाना, क्लेश तथा अशांति का सदैव बने रहना, ये सब निर्ऋति के कारण ही होता है। विधवापन अथवा परिवार में विधवाओं की संख्या बढ़ जाना, अच्छे-भले व्यवसाय का चलते-चलते चौपट हो जाना अथवा पागल हो जाना– ये सब दरिद्रता की निशानी मानी

जाती हैं। जिसका मूल कारण भी निर्ऋति ही होती है। इन सब कष्टों के निवारण हेतु भगवती धूमावती की साधना ही एकमात्र उपाय होता है। भगवती बगलामुखी और भगवती धूमावती के मन्त्र को एकीकृत अथवा सम्पुटित करके जप करने से बहुत ही विस्फोटक परिणाम शत्रु को झेलना पड़ता है।

हमने इस तथ्य को जाना और भगवती धूमावती पर उपलब्ध विषय-सामग्री का संग्रहण कर उसे एक सूत्र में बांधकर साधकों के समक्ष प्रस्तुत किया। अपने साधनाकाल में होने वाले अनुभवों का समावेश भी हमने इस ग्रंथ में किया है। प्रस्तुत ग्रंथ एवं इसमें उपलब्ध साधना-सामग्री आप सब साधकों को एक अनुभवी मार्गदर्शक एवं योग्य प्रशिक्षक से जोड़ देगा। यह जुड़ाव का सम्बन्ध ही आपकी साधना का मार्ग प्रशस्त करेगा। आपके आंतरिक परिवर्तन, आध्यात्मिक जागरण एवं जीवन में उच्चतर आदर्शों का आरम्भ होने का निश्चय ही यह सुअवसर है। इस ग्रंथ में निहित सभी तकनीकों के आधार प्राचीन वैदिक शास्त्र एवं साधक के निजी अनुभव हैं। इन तकनीकों को शताब्दियों से गुरु द्वारा शिष्य को हस्तान्तरित किया जाता रहा है। आधुनिक युग में यातायात और संचार के साधनों के साथ ही अब ज्ञान का प्रचार-प्रसार करने के लिए मानव वाणी तथा कानों की अपेक्षा कहीं अधिक सक्षम साधन उपलब्ध हैं। अतः हम दैवी-कृपा के इन भावातीत साधनों को उन जिज्ञासुओं, साधकों तथा भक्तों को देना चाहते हैं जो इसके अभिलाषी हैं। इसीलिए इस ग्रंथ का प्रकाशन करने की आवश्यकता प्रतीत हुई है।

प्रस्तुत ग्रंथ गुरु-शिष्य की उस अमूल्य परंपरा को जीवित रखने तथा भगवती धूमावती की साधना-सामग्री को आपके अंतरतम में,

आपके घरों में पहुंचाने का एक प्रयास है। यह ग्रंथ स्वयं में एक पूर्ण कृति है जिसमें भगवती की साधना से सम्बन्धित विषय-सामग्री को संकलित करके एक सूत्र में बांधा गया है और महाविद्या-साधना की परम्परा के अनुसार ही इसका प्रस्तुतीकरण किया गया है। निश्चय ही यह एक सम्पूर्ण पाठ्यक्रम है। इस ग्रन्थ के प्रस्तुतीकरण में यह विशेष ध्यान रखा गया है कि इसमें साधना एवं साधक का संयोजन बना रहे तथा प्रारम्भ से अंत तक एक ऐसी सम्पूर्ण साधना का समन्वय बना रहे जो आपको आंतरिक भावातीत मार्ग पर चलकर सम्पूर्ण सिद्धि की ओर जाने का मार्ग प्रशस्त कर सके।

मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि भगवती धूमावती की साधना से सम्बन्धित यह ग्रंथ निश्चय ही नवीन उपासकों, परिपक्व साधकों तथा अनुष्ठानकर्ताओं के लिए समान रूप से उपयोगी होगा। इसी आशा और विश्वास के साथ यह ग्रन्थ आपको समर्पित किया जा रहा है। यद्यपि इसके प्रकाशन में अत्यधिक सतर्कता बरती गयी है लेकिन यदि फिर भी कहीं कोई त्रुटि किन्हीं विद्वजन को प्रतीत हो तो कृपया उस सम्बन्ध में मार्ग-दर्शन करने का कष्ट अवश्य करें।

सम्पर्क सूत्र : आपका...
9410030994, 9540674788 **सुमित गिरधरवाल**
Email : sumitgirdharwal@yahoo.com

अपनी बातें, अपनों से ....

जिनकी अनुकम्पा से ब्रह्मा सृष्टि की संरचना में समर्थ होते हैं, भगवान विष्णु जिनकी कृपा-कटाक्ष से विश्व का पालन करने के योग्य हो पाते हैं और भगवान रुद्र जिनके बल से विश्व का संहार करने में सक्षम होते हैं, उन्हीं सर्वेश्वरी जगन्माता महामाया के दश स्वरूपों में से एक स्वरूप भगवती धूमावती का भी है। यद्यपि भगवान शिव जगत्-कल्याण के अधिष्ठाता हैं लेकिन कल्याण-मूर्ति शिव का कल्याण केवल और केवल शक्ति-सत्ता पर निर्भर है। शिवतत्व निश्चय ही शक्ति-तत्व पर आश्रित है।

हिन्दू-धर्म के अनुसार 'शक्ति' ईश्वरत्व का सर्वोच्च स्वरूप है। यही प्रकृति का व्यक्त अथवा साकार स्वरूप भी है। इसे ही ईश्वर की सर्वव्यापक शक्ति माना जाता है। शक्ति को हम भिन्न-भिन्न रूपों में देखते हैं, भले ही यह भेदभाव की दृष्टि हमारी अल्पज्ञता का प्रतीक हो। अपने भिन्न-भिन्न रूपों में होते हुए भी मूलशक्ति एक ही है, वही सब में है और सभी उसी परम सत्ता में व्याप्त है। ब्रह्म और अब्रह्म भी वही है। **"देव्यथर्वशीर्ष"** में भगवती स्वयं एक स्थान पर कहती हैं– **"अहं ब्रह्मस्वरूपिणी"** तथा **"अहं ब्रह्माब्रह्मणी वेदितव्ये"**। जिस प्रकार विद्युतीय ऊर्जा के विभिन्न रूप हैं प्रत्येक स्थान पर पृथक्-पृथक् कार्य सम्पादित करती है, लेकिन उसका स्वरूप एक ही है, उसकी शक्ति एक ही है। एक ही महाशक्ति भिन्न-भिन्न नामों एवं

रूपों में प्रकट होकर भिन्न-भिन्न कार्यों का सम्पादन करती है। एक ओर वह रचनात्मक कार्य करती है तो दूसरी ओर विध्वंसात्मक कार्यों के द्वारा सृष्टि को व्यवस्थित और नियन्त्रित करती है। एक ओर वह विश्वप्रसूता के रूप में माता कहलाती है तो दूसरी ओर जगत्-रक्षक तथा पालक के रूप में जगत्पिता कहलाती है। एक ओर लक्ष्मीरूप में जगत् को सरस, सुरम्य और सुखपूर्ण बनाती है तो दूसरी ओर अलक्ष्मीरूप में स्वेच्छाचारी, ऐश्वर्योन्मत्त और कुमार्गरत् प्राणियों को भिन्न-भिन्न प्रकार के दण्ड देकर सुमार्ग पर लाती है। वह विराट, अचिन्त्य शक्ति एक ओर ईश्वर तथा दूसरी ओर भगवती के नाम से जानी जाती है।

संसार में दुःख के चार देवता हैं– रुद्र, यम, वरुण और निर्ऋति। रुद्र देवता महामारी, अनेकों प्रकार के ज्वर, उन्माद आदि रोगों के उत्पन्न करने वाले हैं। यम देवता मूर्च्छा, मृत्यु तथा अंग-भंग आदि के जनक हैं। गठिया, शूल, लकवा आदि के कारक वरुण देव हैं जबकि कलह, दरिद्रता, शोक आदि की संचालिका निर्ऋति हैं। खंडहर महल, ऊसर भूमि, फटे हुए वस्त्र, अकाल, भूख, प्यास, वैधव्य, कलह, संताप आदि सभी कुछ निर्ऋति के क्रोध से ही उत्पन्न होता है। इन सभी का मूल कारण 'दरिद्रता' है। यही कारण है कि **'श्रुति'** ने निर्ऋति को **'दरिद्रा'** नाम से पुकारा है। दशों महाविद्याओं में इन्हें **'दारुण विद्या'** भी कहा गया है। शाप देने और नष्ट करने तथा संहार करने की जितनी भी क्षमतायें हैं वे सब देवी के कारण ही हैं। क्रोधमय ऋषियों जैसे कि दुर्वासा, अंगिरा, परशुराम, भृगु आदि की शक्ति भगवती धूमावती ही हैं। यूं तो यह शक्ति सर्वत्र व्याप्त है लेकिन **'ज्येष्ठा नक्षत्र'** तो इसका मूल है। वहीं से इस **'आसुरी**

कलहप्रिया' की उत्पत्ति होती है। यही हमारी साक्षात् '**धूमावती**' हैं। यही कारण है कि ज्येष्ठा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक जीवन-पर्यन्त दारिद्रय, दुख और शोक का भोग करता है। धूमावती देवी का अनुष्ठान, पूजन आदि भी विशेष रूप से ज्येष्ठा नक्षत्र में अथवा ज्येष्ठ मास में ही सम्पन्न किया जाता है, उसका भी यही कारण है। ज्योतिष शास्त्रों के अनुसार भगवती धूमावती का सम्बन्ध केतु ग्रह से है। इन शास्त्रों के अनुसार यदि किसी व्यक्ति की कुण्डली में केतु ग्रह उत्तम स्थान पर बैठा हो अथवा केतु ग्रह से सहायता मिल रही हो तो जातक को जीवन में दुख, दारिद्रय और दुर्भाग्य से छुटकारा मिल जाता है। इस ग्रह की प्रबलता के कारण जातक सभी प्रकार के ऋणों से मुक्त रहता है और उसके जीवन में सुख-समृद्धि और ऐश्वर्य की वृद्धि होती है। यह भी पूर्णतः सत्य है कि इनकी साधना, स्तुति करने वाला साधक कभी दरिद्र नहीं होता और वह सभी प्रकार के कष्टों से दूर रहता है।

दश महाविद्याओं में सातवीं महाविद्या होने के कारण भगवती धूमावती का सांकेतिक नाम "सप्तमी" भी है। 'ज्येष्ठा' भी इन्हीं को कहा जाता है।

विश्व की जो भी अमांगल्यपूर्ण अवस्थायें हैं, उनकी अधिष्ठात्री शक्ति धूमावती ही हैं। ये विधवा मानी जाती हैं, इसलिए इनके साथ पुरुष का वर्णन नहीं है। यहां पुरुष अव्यक्त है। धन-रक्षा, पुत्र-लाभ और शत्रु पर विजय-प्राप्ति के लिए इनकी साधना-उपासना की जाती है। पूर्व जन्मों के दोषों को समूल नाश करने में भी यह शक्ति अग्रणीय है। श्वेतरूप व धूम्र अर्थात् धुंआ इनको अति प्रिय है तथा पृथ्वी के आकाश में स्थित बादलों में इनका निवास होता है। यह भी

माना जाता है कि कुण्डलिनी चक्र के मूल में कूर्म में इनकी शक्ति विद्यमान होती है। वाराही विद्या में इन्हें धूम्रवाराही कहा जाता है, जो शत्रुओं के मारण एवं उच्चाटन कर्मों में प्रयोग की जाती है।

महाविद्यायें दश कही गयी हैं, यथा– (1) काली (2) तारा (3) षोडशी (4) भुवनेश्वरी (5) भैरवी (6) छिन्नमस्ता (7) धूमावती (8) बगलामुखी (9) मातंगी तथा (10) कमला।

उपर्युक्त क्रमानुसार भगवती धूमावती महाविद्याओं में सप्तम् स्थान पर अवस्थित हैं। तन्त्र-ग्रन्थों के अनुसार धूमावती उग्रतारा ही हैं, जो धूम्रा होने से धूमावती कही गयी हैं। इन्हें दुर्गासप्तशती में 'वाभ्रवी' और 'तामसी' का नाम दिया गया है। ऋग्वेदोक्त रात्रिसूक्त में इन्हें 'सुतरा' कहा गया है, जिसका शाब्दिक अर्थ होता है– सुखपूर्वक तारने योग्य। तारा अथवा तारिणी का भी यही अर्थ है। इसलिए तारा को धूमावती देवी का पूर्वरूप कहा गया है।

भगवती धूमावती के सन्दर्भ में कहा जाता है कि एक बार भगवती पार्वती भगवान शिव के साथ कैलाश पर्वत पर विराजित थीं। तभी पार्वती जी को बहुत जोर की भूख लगी। पार्वती जी ने भगवान शिव से अपनी भूख का निवारण करने हेतु निवेदन किया। लेकिन भगवान शिव ने उनकी बात पर कोई ध्यान नहीं दिया। भूख से व्याकुल पार्वती जी को अपनी उपेक्षा पर अत्यधिक क्रोध आ गया और उन्होंने महादेव को ही निगल लिया। इससे उनके शरीर से धूम राशि निकली, जिससे पार्वती जी का सम्पूर्ण शरीर धुंए से ढक गया। उस समय महादेव ने कहा कि "आपकी सुन्दर मूर्ति धुंए से

आप्लावित हो गयी है, इसलिए अब आपको धूमावती या धूम्रा कहा जायेगा। इस प्रकार इन देवी का नाम धूमावती के नाम से विख्यात हुआ। शिव को निगल जाने के कारण ये अकेली हैं और इनका कोई स्वामी अथवा नियन्त्रक नहीं है, अतः आप स्वनियन्त्रिका हैं। इसी कारण से इन्हें विधवा भी कहा गया है।

"नारदपाञ्चरात्र" के अनुसार देवी धूमावती ने अपने शरीर से उग्रचण्डिका को प्रकट किया था, जो सैकड़ों गिदड़ियों के समान आवाज करने वाली थी, जो असुरों के कच्चे मांस से तृप्त हुई। यही इनकी भूख का रहस्य है। शिव को निगलने का तात्पर्य है, उनके स्वामित्व का निषेध अर्थात् निरंकुशा।

इनके सन्दर्भ में दुर्गासप्तशती में भी एक कथा आती है कि इन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि "जो मुझे युद्ध में पराजित कर देगा तथा मेरा गर्व चूर करेगा, वही मेरा पति होगा। ऐसा कभी नहीं हुआ, अतः यह कुमारी हैं।" ये पति विहीन हैं अथवा अपने पति महादेव को निगल गयीं जिस कारण ये विधवा हैं।

'स्वतन्त्र-तन्त्र' के अनुसार जब सती ने अपने पिता राजा दक्ष के यज्ञ में योगाग्नि से अपने-आपको भस्म कर लिया, उस समय जो धुंआ उत्पन्न हुआ, उससे देवी धूमावती के विग्रह का प्राकट्य हुआ था।

इस प्रकार इनके आविर्भाव के सम्बन्ध में अनेकों मतभेद हैं। लेकिन यह स्पष्ट है कि निर्ऋतिरूपा धूमावती देवी का मुख्य रूप से चातुर्मास्य में ही निवास रहता है। आषाढ़ मास की शुक्ल पक्ष की एकादशी तिथि से कार्तिक मास की शुक्ल पक्ष की एकादशी तक का

समय चातुर्मास कहलाता है। इस अवधि को देवताओं का सुषुप्तिकाल भी माना जाता है। इस अवधि में कोई शुभ कार्य नहीं किया जाता है। इसी चातुर्मास में निर्ऋति का साम्राज्य रहता है अर्थात् अलक्ष्मी का निवास रहता है। कार्तिक मास की कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को 'नरकचतुर्दशी' का नाम दिया गया है। इसी रात्रि को दरिद्रता की देवी अलक्ष्मी का गमन होता है और अगले ही दिन रोहिणीरूपा कमला का आगमन हो जाता है। **शतपथब्राह्मण** के अनुसार ये भगवती लक्ष्मी की बड़ी बहन है, जिस कारण इन्हें ज्येष्ठा लक्ष्मी भी कहा जाता है। इनकी गणना श्रीकुल में होती है और ये उग्रकोटि की श्रेणी में आती हैं।

देवी धूमावती कलह-प्रिया, अवरोहिणी, अलक्ष्मी आदि नामों से जानी जाती हैं। भयंकर शक्ल, चौड़े दांत, शरीर में रूक्षता आदि इन्हीं के कोप का फल माना जाता है। इसी शक्ति का निरूपण करते हुए "शाक्त प्रमोद" में इनका ध्यान निम्नवत् दिया गया है–

विवर्णा चञ्चला दुष्टा दीर्घा च मलिनाम्बरा।
विमुक्त–कुन्तला वै सा विधवा विरलद्विजा॥
काकध्वज - रथारूढ़ा विलम्बित - पयोधरा।
शूर्प - हस्तातिरुक्षाक्षा धूतहस्ता वरानना॥
प्रवृद्ध - घोणा तु भृशं कुटिला कुटिलेक्षणा।
क्षुत्पिपासार्दिता नित्यं भयदा कलहास्पदा॥

उपर्युक्त ध्यान के अनुसार ये विवर्ण, चंचल, काले रंग वाली, मैले वस्त्र धारण करने वाली, खुले केशों वाली, विरल दांतों वाली, लम्बे-लम्बे स्तनों वाली, विधवा, काक-ध्वज वाले रथ पर आरूढ़, हाथ

में खाली सूप धारण किये हुए, भूख-प्यास से व्याकुल, भयप्रदा, कलहकारी, कम्पित हस्ता, लम्बी नासिका वाली, कुटिल स्वभाव वाली तथा निर्मम आंखों वाली बतायी गयी हैं।

देवी धूमावती शत्रुओं का विनाश करने वाली महाशक्ति और साधक के दुखों की निवृत्ति करने वाली महाविद्या हैं। ये चारों पुरुषार्थों– धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष को प्रदान करने वाली हैं। इनकी साधना-उपासना करने वाले व्यक्ति को कभी भी शत्रु के समक्ष पराजय का मुंह नहीं देखना पड़ता। अपने साधक के शत्रु का सर्वनाश करने में यह महाविद्या अत्यन्त ही कठोर हैं। ये दारूण विद्या हैं और वैधव्य जीवन व्यतीत करती हैं। पुरुष-शून्य महाशक्ति माने जाने के कारण इनका कोई 'शिव' नहीं है। शायद इसीलिए ये निरंकुशा भी हैं।

देवी धूमावती स्थिर प्रज्ञता की प्रतीक हैं। इनके रथ पर लगे ध्वज पर बना काक का चिह्न वासनाग्रस्त मन का प्रतीक है जो लगातार अतृप्त रहता है। जीव की दीन-अवस्था, भूख, प्यास, कलह, दरिद्रता आदि इसकी क्रियायें हैं, जो जीव को अधोगति की ओर अग्रसरित करती हैं। वेद की शब्दावली में धूमावती **कद्रु** हैं, जिसके कारण वृत्रासुर जैसे राक्षस उत्पन्न होते हैं।

भगवती धूमावती के अंग देवता के रूप में अघोर रुद्र हैं। बटुक, प्रत्यंगिरा, शरभ-शालुव पक्षिराज भी इनके अंग देवता हैं, जो अत्यन्त ही उग्र विद्या के रूप में स्थापित हैं।

एक उत्तम श्रेणी का साधक सदैव यह कामना करता है कि इस सभ्य समाज में रहने वाले सभी प्राणी द्वेष भावना से रहित हों, ताकि समाज में व्याप्त सभी बुराइयों का समूल नाश हो सके। द्वेष-भावना

ही अनेक प्रकार की बुराइयों को जन्म देने वाली है, इसलिए यदि द्वेष-भाव की यह दुर्भावना ही समाप्त हो जाये तो समाज के सभी वर्ग प्रसन्न एवं तृप्त हो पायेंगे। यद्यपि इस बुराई को समाप्त करने की शक्ति सभी व्यक्तियों के अन्दर निहित है, लेकिन विकसित न होने के कारण वे इस शक्ति का प्रयोग नहीं कर पाते हैं। इसके लिए ही उन्हें गुरु की आवश्यकता होती है। गुरु ही वह व्यक्ति है जो साधक को उसके भीतर की इस शक्ति को जगाने का, इसे विकसित करने का मार्ग प्रशस्त करता है। भगवती धूमावती की साधना के माध्यम से यह शक्ति प्राणी के भीतर बहुत अधिक तीव्रता के साथ विकसित होती है।

भगवती धूमावती की उपासना पुत्र-प्राप्ति, धन-रक्षा, विपत्ति-नाश, रोग-निवारण, युद्ध में विजय-प्राप्ति हेतु, उच्चाटन, विद्वेषण तथा मारण कर्म आदि के लिए भी की जाती है। इनके उपासक पर शत्रु द्वारा किये गये अभिचारों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इन सबके अतिरिक्त इनकी एक मुख्य विशेषता यह भी है कि ये व्यक्ति के पूर्वजन्मकृत दोषों का भी परिहार करती है, जिससे उसके सुख-ऐश्वर्य आदि प्राप्त होने के मार्ग स्वतः ही खुलने लगते हैं।

व्यवहारिक रूप से एक बात यह भी अनुभव में आयी है कि जब हमारे द्वारा किये गये या कराये गये बगलामुखी आदि के अनुष्ठान भी कोई फल प्रदान नहीं करते हैं, उस समय यदि पहले धूमावती का अनुष्ठान सम्पन्न करके अथवा धूमावती मन्त्र के साथ संयोजित करके अन्य कोई अनुष्ठान सम्पन्न कराया जाये तो उसका पूर्ण फल प्राप्त होता है।

बगलामुखी मन्त्र के साथ यदि धूमावती मन्त्र के सम्पुट से अनुष्ठान सम्पन्न किया जाये तो वह विशेष रूप से शत्रु-विनाशक हो जाता है। चूंकि ये दोनों महाविद्यायें ही बहुत तीव्र प्रभाव वाली हैं और घोर शत्रु-विनाशक भी हैं, इसलिए आवश्यक है कि अनुष्ठान-कर्ता को दोनों महाविद्याओं के प्रयोग में दक्ष एवं दीक्षित होना चाहिए। अधूरा ज्ञान सदैव नाश का द्योतक होता है और ये दोनों महाविद्यायें ही दोधारी तलवार के समान हैं, जो तनिक भी त्रुटि होने पर अनुष्ठानकर्ता को अथवा यजमान, दोनों को समान रूप से क्षति पहुंचा सकती हैं, इसलिए इनके प्रयोग में प्रवीणता आवश्यक है।

शूप देवी धूमावती का मुख्य अस्त्र है, जिसमें विश्व को समेटकर ये महाप्रलय कर देती हैं। इसलिए शत्रु-विनाश में साधक को भावना करनी चाहिए कि ये शत्रु के वैभव, यश, सम्पत्ति, धन और पराक्रम को अपने शूप में समेट रही हैं और उसे मूसल से प्रताड़ित कर रही हैं। उसके निवास-स्थान में कौए अत्यधिक संख्या में बैठे हुए हैं उसका आवास निर्जन होता जा रहा है। कौए से इनका विशेष प्रेम है और वही इनके रथ का संचालन करता है, इसलिए इनकी साधना में कौए के पंखों का विशेष रूप से प्रयोग किया जाता है। मन्त्र-जप करने के उपरान्त अथवा सामान्य रूप से होम करते समय कौए के पंखों का प्रयोग हमें करना चाहिए। लेकिन ये पंख प्राप्त करने के लिए हमें कौए को मारना नहीं चाहिए बल्कि भूमि पर पड़े हुए पंखों का ही प्रयोग करना चाहिए।

देवी धूमावती चूंकि दरिद्रता, दुख और क्लेश की अधिष्ठात्री हैं, इसलिए इनका स्थायी आवाहन अपने निवास-स्थान में कदापि नहीं

करना चाहिए। अनुष्ठान काल में इनका जप प्रारम्भ करते समय आवाहन करें और जप समाप्त होने पर इनका विसर्जन कर दें। विसर्जन के समय यह भावना करनी चाहिए कि भगवती जप और पूजा से प्रसन्न होकर समस्त क्लेश, बाधायें, दरिद्रता, रोग-शोक, विघ्न तथा प्रेतादि बाधाओं को अपने शूप में समेटकर हमारे निवास-स्थान से प्रस्थान कर रही हैं और हमें सुख-शान्ति, निरोग, धन-सम्पत्ति और लक्ष्मीवान् होने का आशीर्वाद प्रदान कर रही हैं। अनुभव में यह भी आया है कि यदि व्यक्ति का दुर्भाग्य लम्बे समय से उसका पीछा नहीं छोड़ रहा हो तो भगवती को पूजा-पाठ से प्रसन्न करके अपने घर से प्रस्थान करने की प्रार्थना करनी चाहिए। ऐसा करने से ये साधक को धन और ऐश्वर्य प्रदान करती हैं। घर में जो कलहपूर्ण वातावरण बना हुआ होता है, वह भी नष्ट हो जाता है। लेकिन यह स्मरणीय है कि इनकी पूजा अथवा पुरश्चरण किसी एकान्त और निर्जन स्थान में करना ही अधिक उचित रहता है। श्वेत पुष्प, आक के पुष्प, श्वेत वस्त्र तथा श्वेत पुष्पों की मालायें, केसर, शुद्ध घी, अक्षत्, श्वेत तिल, धतूरा, आक, जौं, सुपारी, नारियल, फल व सूखे मेवे इन्हें भोग के रूप में अर्पण करने चाहिए। छोटा सा एक सूप बनाकर अपने पूजा-स्थल में रखना उत्तम रहता है। ये भगवती बगलामुखी की अंग विद्या हैं इसलिए भगवती धूमावती की साधना आरम्भ करने से पूर्व मां बगलामुखी से मानसिक अनुमति ग्रहण करनी चाहिए। यह भी स्मरण रखें कि बगलामुखी साधना करने के बाद ही इनकी साधना करनी चाहिए।

भगवती धूमावती का एक मन्दिर श्री पीताम्बरा पीठ दतिया में स्थित है। उनका स्वरूप इतना भयानक और डरावना है कि एकान्त

में उनके दर्शन करने पर कमजोर हृदय वाला व्यक्ति डर सकता है। मन्दिर में भगवती धूमावती के दर्शन प्रातः और सायंकाल में आरती के समय ही केवल कुछ समय के लिए होते हैं। इनकी प्रतिमा श्याम वर्ण की और अत्यन्त भयानक स्वरूप वाली है। शनिवार को भगवती के विशेष दर्शन होते हैं। इनका भोजन तामसी है और इन्हें चटपटे, नमकीन, कचौड़ी, समोसा, मंगोड़ा आदि अर्पित किये जाते हैं। सुहागिन स्त्रियों के लिए भगवती के दर्शन वर्जित हैं। केवल विधवा स्त्रियां ही इनकी आराधना कर सकती हैं।

अन्त में सर्वप्रथम मैं अपने गुरुदेव श्री **"रामस्वरूप ब्रह्मचारी"**, जिनके आशीर्वाद-स्वरूप मुझे पारम्परिक आगम-शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त हो सका, का हृदय से स्मरण करता हूं। उन्हीं की महती कृपा से मैं इस परम्परा में प्रविष्ट हो सका हूं। उनके चरणों में मेरा श्रद्धापूर्वक नमन।

इसके उपरान्त मैं उन सभी विद्वानों का आभार व्यक्त करता हूं जिनका तनिक भी सहयोग इस ग्रन्थ की रचना में मुझे प्राप्त हुआ है। सर्वान्त में इस ग्रन्थ के प्रकाशक श्री **सुमित गिरधरवाल** का मैं विशेष रूप से आभारी हूं, जिनके अथक परिश्रम एवं विशेष उत्साह के परिणामस्वरूप यह ग्रन्थ इतने शीघ्र एवं सुन्दर कलेवर में आपको इतनी सरलता से हस्तगत हो सका है। निश्चय ही यह ग्रन्थ प्रकाशित करके उन्होंने साधकों एवं आचार्यों के हित में एक महती कार्य सम्पादित किया है, जिसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं। इस ग्रन्थ में वह सब कुछ उपलब्ध है जिसकी आवश्यकता साधना अथवा अनुष्ठान सम्पन्न करने हेतु आवश्यक है। मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि यह ग्रन्थ निश्चय ही सभी साधकों का मार्ग प्रशस्त

करेगा। बस इन्हीं शब्दों के साथ ....।

आश्विन-पूर्णिमा, 2074 **आपका .....**

दिल्ली। **योगेश्वरानन्द**

सम्पर्क सूत्र :
9410030994, 9917325788
Email : shaktisadhna@yahoo.com
Website : www.yogeshwaranand.org
www.baglamukhi.info

अनुक्रमणिका



अध्याय 1

विशिष्ट साधना-काल (विजय-काल)

पाठकों एवं साधकों के लिए यहां ऐसे श्रेष्ठ साधना-काल का उल्लेख किया जा रहा है, जिनमें साधना आरम्भ करने के लिए किसी प्रकार का शोधन करने की आवश्यकता नहीं होती है। निम्नांकित काल स्वयं-सिद्ध हैं। इनमें कोई भी साधना सम्पन्न की जा सकती है। यदि इन क्षणों में कोई साधना आरम्भ की जाये तो वह सफल होती ही है।

इस काल के लिए 'आचार्य मिहिर' ने कथन किया है कि–

"न तिथिं न नक्षत्रं न योगं करणं तथा।
शिवस्थाज्ञा समादाय दैवं कार्य विचिंतयेत्॥
न वारादि ग्रहाश्चैव व्यतिपातौ न विष्टि च।
दिक्शूलं चन्द्रमा नैव तथा पञ्चांग दर्शनम्॥
महेन्द्रो विजयो नित्यं ....।"

मास	वार	काल	समय
चैत्र, वैशाख	रविवार	प्रातःकाल	6.00 बजे से
			6.48 तक
श्रावण, भादों	रविवार	रात्रिकाल	6.48 बजे से
			7.36 तक
माघ, फाल्गुन	रविवार	रात्रिकाल	3.36 बजे से
			4.24 तक
	सोमवार	रात्रिकाल	7.36 बजे से
			9.12 तक
	मंगलवार	रात्रिकाल	7.36 बजे से
			9.12 तक
	मंगलवार	रात्रिकाल	3.36 बजे से
			4.24 तक
	बुधवार	दिन	3.36 बजे से
			4.24 तक
	बुधवार	रात्रिकाल	9.12 बजे से
			10.48 तक
	बृहस्पतिवार	रात्रिकाल	7.36 बजे से
			9.12 तक
	शुक्रवार	रात्रिकाल	1.12 बजे से
			3.36 तक
	शनिवार	नहीं	नहीं

मास	वार	काल	समय
ज्येष्ठ, आषाढ़	रविवार	दिन	3.36 बजे से 4.24 तक
	रविवार	रात्रिकाल	4.24 बजे से 6.00 तक
	सोमवार	रात्रिकाल	2.48 बजे से 3.36 तक
	मंगलवार	रात्रिकाल	5.12 बजे से 6.00 तक
	बुधवार	प्रातःकाल	6.48 बजे से 8.24 तक
	गुरुवार	नहीं	नहीं
	शुक्रवार	रात्रिकाल	10.48 बजे से 11.36 तक
	शनिवार	प्रातःकाल	6.00 बजे से 6.48 तक
	शनिवार	रात्रिकाल	8.24 बजे से 9.12 तक
आश्विन, कार्तिक	रविवार	नहीं	नहीं
मार्गशीर्ष, पौष	सोमवार	प्रातःकाल	9.12 बजे से 10.48 तक

मास	वार	काल	समय
	सोमवार	अपराह्न	3.36 बजे से
			6.00 तक
	मंगलवार	दिन	12.24 बजे से
			2.48 तक
	बुधवार	सायंकाल	6.48 बजे से
			8.24 तक
	गुरुवार	सायंकाल	5.12 बजे से
			6.00 तक
	शुक्रवार	सांयकाल	4.24 बजे से
			6.00 तक
	शुक्रवार	रात्रिकाल	1.12 बजे से
			2.00 तक
	शनिवार	सांयकाल	5.12 बजे से
			6.00 तक

उपर्युक्त सभी योग अद्‌भुत सफलता प्रदान करने वाले हैं, जिनमें न चन्द्रबल देखने की आवश्यकता है और न ही कोई अन्य बल। इन क्षणों में आरम्भ किये गये जप निश्चय ही सफलता प्रदान करते हैं।



अध्याय 2

विशिष्ट नक्षत्र-वृक्ष

तन्त्र-मार्ग में शत्रु को त्राण देने के लिए जन्म-नक्षत्र से सम्बन्धित वृक्ष की लकड़ी का उपयोग किया जाता है। इसलिए प्रत्येक साधक के लिए यह आवश्यक है कि उसे जन्म-नक्षत्रों का ज्ञान हो। साधकों के ज्ञान-वर्धन हेतु यहा नक्षत्रों से सम्बन्धित वृक्षों को तालिका द्वारा स्पष्ट किया जा रहा है।

जन्म-नक्षत्रों के वृक्षों की तालिका

नक्षत्र	वृक्ष	नक्षत्र	वृक्ष
अश्विनी	कारस्कर	स्वाति	अर्जुन
भरणी	धात्री	विशाखा	विकंकत
कृतिका	उदुम्बर	अनुराधा	वकुल
रोहिणी	जम्बू	ज्येष्ठा	सरल
मृगशिरा	खदिर	मूल	सर्ज
आर्द्रा	कृष्ण	पू०षा०	वञ्जुल
पुनर्वसु	वसु	उ०षा०	पनस

नक्षत्र	वृक्ष	नक्षत्र	वृक्ष
पुष्य	पीप्पल	श्रवण	अर्क
आश्लेषा	नाग	धनिष्ठा	शमी
मघा	रोहिणी	शतभिषा	कदम्ब
पूर्वा फाल्गुनी	पलास	पूर्वा भाद्रपद	निम्ब
उत्तरा फाल्गुनी	प्लक्ष	उत्तरा भाद्रपद	आम्र
हस्त	अम्बष्ठ	रेवती	मधूक
चित्रा	बिल्व		

इस सम्बन्ध में **'मन्त्र महोदधि'** में स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि–

कारस्कारोथ धात्री स्यादुदुम्बरतरु पुनः।
जम्बूः खादिर कृष्णाख्यौ वंशपिप्पलसंज्ञकौ।
नागरोहिणनामानौ पलाशप्लक्षसंज्ञकौ।
अम्बष्ठबिल्वार्जुनाख्य यविकंकतमहीरूहाः।
बकुलः सरलः सर्जोवंजुलः पनसार्ककौ।
शमी - कदम्ब - निम्बाम्रामधूका वृक्षशाखिनः।

इति शारदोक्ताः (9/50-52)



अध्याय 3

नक्षत्रानुसार जप एवं फल

अधिकाधिक संख्या में किये जाने वाले जपों से साधक का उद्धार हो जाता है। मन्त्र की सिद्धि प्राप्त करने के लिए साधक नित्य साधनारत् रहते हैं, लेकिन कई बार उन्हें भरसक प्रयत्न करने पर भी सिद्धि हस्तगत् नहीं हो पाती है। इसके विपरीत यदि किसी शुभ काल में थोड़े से भी जप कर लिये जायें तो उनका प्रभाव अथवा फल कई गुनी संख्या में साधक को प्राप्त होता है। प्रत्येक नक्षत्र का विशिष्ट प्रभाव होता है। यदि नक्षत्रों का ज्ञान करके साधक द्वारा अभीष्ट फल की प्राप्ति हेतु निश्चित संख्या में जप किया जाये तो कोई कारण नहीं है कि साधक को उसके कर्म का प्रतिफल प्राप्त न हो। इसी संदर्भ में पाठकों/साधकों की सुविधा के लिए नक्षत्रों, जप-संख्या तथा फल से सम्बन्धित सारणी यहां प्रस्तुत की जा रही है। यदि साधक वर्णित नक्षत्रों में निश्चित संख्या में जप करता है तो उसे निश्चय ही उसके अभीष्ट की प्राप्ति होती है।

किस कर्म के लिए कितनी संख्या में मन्त्र-जप करने से अभीष्ट की पूर्ति होती है, यह निम्नांकित सारणी में दिया गया है–

नाम नक्षत्र	जप-संख्या	फल
अश्विनी	1,000	सिद्धि-प्राप्ति
भरणी	2,000	सर्वत्र-लाभ
कृतिका	2,000	मन्त्र-जागृति
रोहिणी	1,000	अभीष्ट-सिद्धि
मृगशिरा	5,000	तीव्र बुद्धि
आर्द्रा	6,000	कार्य-सिद्धि
पुनर्वसु	1,000	देवत्व-प्राप्ति
पुष्य	7,000	मन्त्र-सिद्धि
आश्लेषा	6,000	अभीष्ट-प्राप्ति
मघा	10,000	अधिकार-प्राप्ति
पूर्वा (तीनों)	11,000	धन-लाभ
उत्तरा (तीनों)	12,000	कामना-पूर्ति
हस्त	13,000	तेज-वृद्धि
चित्रा	2,000	सफलता-प्राप्ति
विशाखा	4,000	सौम्यता
अनुराधा	पूर्णकाल	परिवार-सुख
ज्येष्ठा	2,000	मन्त्र-सिद्धि
मूला	5,000	साधना-सिद्धि
श्रवण	2,000	यश-प्राप्ति

नाम नक्षत्र	जप-संख्या	फल
धनिष्ठा	2,000	कार्य-सिद्धि
शतभिषा	2,000	पाप-निवृति
रेवती	4,000	अधिकार-वृद्धि
स्वाति	8,000	षट्कर्म-सिद्धि



॥ महाविद्याएं और उनकी यक्षिणियां ॥

यक्षों का राजा कुबेर को माना जाता है, जो उत्तर दिशा के दिक्कपाल तथा स्वर्ग के कोषाध्यक्ष हैं। कुबेर के सेवक **'यक्ष'** नाम से प्रसिद्ध हैं। यक्षों को **"एक अर्ध देव-योनि"** भी कहा जाता है। **'ऋग्वेद'** के अनुसार इस प्रजाति को राक्षसों के निकट माना जाता है। **'अथर्ववेद'** में यक्ष तथा राक्षस– दोनों को ही **'पुण्यजन'** कहा गया है। कुबेर की प्रजा को **'पुण्यजन'** का नाम दिया गया है। इसी वेद के अनुसार प्रारम्भ में दो श्रेणियों के राक्षस होते थे। एक तो वे राक्षस, जो यज्ञों की रक्षा करते थे, उन्हें **'यक्ष'** का नाम दिया गया। दूसरी श्रेणी के राक्षस वे थे जो यज्ञों का विध्वंस करते थे, उन्हें **'राक्षस'** के नाम से पुकारा जाता था।

यक्ष-वर्ग की स्त्रियों को **'यक्षी'** या **'यक्षिणी'** कहा जाता है। इन्हें भगवती दुर्गा की सेविका माना जाता है। दशों महाविद्याओं की भी अपनी-अपनी यक्षिणियां हैं। **'आगम-रहस्य'** के अनुसार– जिस महाविद्या की जो 'यक्षी' है, वही उसकी **'सेविका'** कहलाती है। इसलिए जो साधक जिस महाविद्या का उपासक होता है, उसे उस महाविद्या से सम्बन्धित **'यक्षिणी'** की उपासना करनी चाहिए। यदि कोई साधक इसके विपरीत कर्म करता है, अर्थात् अपनी महाविद्या की सेविका यक्षिणी की उपासना न करके अन्य किसी यक्षिणी की उपासना करता है, उसे कदापि सिद्धि की प्राप्ति नहीं होती वरन् उसे यक्षिणी का कोप-भाजन बनना पड़ता है। दश-महाविद्याओं से सम्बन्धित यक्षिणियों के सम्बन्ध में निम्नवत् प्रमाण मिलता है–

शेष पृष्ठ 112 पर

अध्याय 4

साधना-रहस्य

किसी साध्य वस्तु की प्राप्ति के लिए जो प्रयत्न किया जाता है, उसे साधना कहते हैं। विश्व में सभी जीव सुख की कामना करते हैं और सुख भी ऐसा, जो सबसे बढ़कर हो। जिसके होने से किसी प्रकार का अभाव महसूस न हो, जो कभी समाप्त न हो, जो अनन्त और असीमित हो, नित्य और पूर्ण हो। लेकिन भौतिक जगत् के सभी सुख स्थायी सुख प्रदान करने में समर्थ नहीं हैं। इसलिए बड़े से बड़ा सम्राट और यहां तक कि देवराज इन्द्र बन जाने पर भी जीव अभाव का, अपूर्णता का ही अनुभव करता है। वह प्रत्येक स्थिति में अतृप्त और असंतुष्ट ही बना रहता है। नित्य ही वह 'कुछ और अधिक' की खोज में निरत रहता है। संसार-चक्र में पड़कर वह निरन्तर सुख की खोज में छटपटाता रहता है। अपने इसी सुख के हेतु व्याकुल होकर वह चिदानन्द एवं नित्य परब्रह्म का आश्रय ग्रहण करने के स्थान पर कलियुग में सिद्ध समझी जाने वाली दैवीय शक्तियों का आश्रय गृहण करता है और काम्य कर्मों के प्रति आकर्षित होता है।

दैवीय शक्तियों का आकर्षण करने के लिए मन्त्र-तन्त्र और यन्त्र व्यक्ति के लिए सहज और सरल उपकरण है। इन उपकरणों

का प्रभावी रूप से प्रयोग करने के लिए ही मन्त्र आदि का पुरश्चरण-कृत्य किया जाता है। इस कृत्य को ही साधना कहा जाता है। यद्यपि साधना की पृथक्-पृथक् धारायें हैं, अनेकों स्तर हैं, परन्तु यहां साधना से हमारा तात्पर्य मात्र काम्य-प्रयोगों के लिए, उनकी सिद्धि के लिए किये जाने वाले उद्योग से ही है।

मन्त्रयोग

योग-साधन की चार अलग-अलग शैलियां हैं। उनमें मन्त्रयोग प्रथम स्थान पर है। इसके महर्षि नारद, पुलस्त्य, बाल्मिकी, बृहस्पति, भृगु आदि आचार्य हुए हैं। मन्त्रयोग का सिद्धान्त यह है कि परमात्मा से भाव, भाव से नामरूप और उसका विकार तथा विलासमय यह जगत् है। मन्त्रयोग का विस्तार और महिमा सबसे अलग है। मूर्ति-पूजा पीठ-विज्ञान मन्त्रयोग के अनुसार ही सिद्ध होते हैं।

चन्द्रमा की सोलह कलाओं के समान ही मन्त्रयोग भी 16 अंगों से पूर्ण है। ये 16 अंग इस प्रकार हैं–

भवन्ति मन्त्रयोगस्य षोडशंगानि निश्चितम्।
यथा सुधांशोर्जायन्ते कलाः षोडश शोभनाः॥
भक्तिः शुद्धिश्चासनं च पंचांगस्यापि सेवनम्।
आचारधारणे दिव्यदेशसेवनमित्यपि॥
प्राणक्रिया तथा मुद्रा तर्पणं हवनं बलिः।
यागो जपस्तथा ध्यानं समाधिश्चेति षोडश॥

अर्थात्, भक्ति, शुद्धि, आसन, पंचांगसेवन, आचार, धारणा, दिव्यदेश-सेवन, प्राणक्रिया, मुद्रा, तर्पण, हवन, बलि, याग, जप, ध्यान, और समाधि। यदि इन 16 अंगों पर सूक्ष्म सा दृष्टिपात करें तो स्पष्ट

होगा कि अपने इष्टदेवता के नाम का श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य और आत्म-निवेदन करना ही भक्ति है, जिन्हें नवधा-भक्ति के नाम से जाना जाता है। अपने इष्टदेव तक पहुंचने की ये नौ सीढ़ियां हैं। **'शुद्धि'** कई प्रकार की होती है, जैसे कि **दिक्शुद्धि–** अर्थात् किस दिशा की ओर मुख करके साधन किया जाये। **स्थान-शुद्धि–** अर्थात् कैसे स्थान पर बैठकर साधन किया जाये। **शरीर-शुद्धि–** अर्थात् स्नानादि एवं प्राणायाम द्वारा शरीर तथा मन की शुद्धि। **आसन-शुद्धि–** अर्थात् किस प्रकार का आसन बैठने के लिए चुना जाये। यह किसी वस्त्र अथवा चर्म से निर्मित हो सकता है। **पंचांग–** अपने इष्टदेवता की गीता, सहस्रनाम, स्तव, कवच और हृदय को कहा जाता है। **आचार** के तन्त्र और पुराणों में अनेक भेद कहे गये हैं। अपने मन को इष्टदेव की प्रतिमा अथवा विग्रह में लगा देना अथवा देह के भीतर स्थान विशेष पर मन को एकाग्र कर लेना **धारणा** कहलाता है। **दिव्यदेश** उन 16 प्रकार के स्थानों को कहते हैं जिनमें पीठ बनाकर पूजा की जाती है। जैसे कि– मूर्धा, हृदय, नाभि, घट, पट, पाषाण आदि की मूर्तियां, स्थण्डिल, यन्त्र आदि। **प्राणक्रिया–** प्राणायाम के अतिरिक्त शरीर के विभिन्न स्थानों में प्राण ले जाकर साधन करने को कहते हैं। न्यास आदि इसी के अन्तर्गत आते हैं। अपने इष्टदेवता को प्रसन्न करने के लिए जो चेष्टायें की जाती हैं, उन्हें **मुद्रा** कहा जाता है। पदार्थ विशेष के द्वारा इष्टदेव को **तर्पण** किया जाता है। अग्नि में आहुति देने को **हवन** कहते हैं। **बलि** तीन प्रकार की होती है, यथा– **आत्मबलि,** जिसमें अहंकार आदि की बलि दी जाये। **अन्तर्बलि–** जिसमें काम, क्रोध आदि एवं इन्द्रियों की बलि दी जाये। **बहिर्बलि** भी दो प्रकार की होती है, जिसमें फल आदि की बलि, अर्थात् सात्विक

बलि दी जाये। पशु आदि की बलि राजसिक या तामसिक बलि कही जाती है। **याग**– अन्तर्याग और बहिर्याग– दो प्रकार का होता है। **जप** तीन प्रकार का होता है– वाचिक, मानसिक और उपांशु। **ध्यान** के अन्तर्गत इष्ट के स्वरूप को मन के भीतर चिंतन करके निहारा जाता है और उस स्वरूप का ध्यान करते हुए स्वयं को विस्मृत कर देने की अवस्था ही ध्यान कहलाती है। मन्त्रयोग में इसी अवस्था को "**महाबोध** अथवा **महाभव समाधि**" की संज्ञा दी गयी है।

मन्त्रानुष्ठान– गुरुदेव से मन्त्र प्राप्त होने पर आवश्यक है कि उसका पुरश्चरण किया जाये। जब तक विधिपूर्वक उसका पुरश्चरण नहीं किया जाता, तब तक वह उतना लाभ प्रदान नहीं करता, जितना कि उसे करना चाहिए। इसीलिए कहा गया है कि–

जीवहीनो यथा देहः सर्वकर्मसु न क्षमः।
पुरश्चरणहीनाञ्चऽपि तथा मन्त्रों न सिद्धिदः॥

जिस प्रकार जीव के अभाव में देह कोई कर्म करने में समर्थ नहीं होती, उसी प्रकार पुरश्चरण के अभाव में मन्त्र सिद्धिप्रद नहीं होता।

यम-नियम– श्रद्धा, भक्तिभाव और विधि के संयोग से जब मन्त्राक्षर अन्तर्देश में प्रविष्ट होकर दिव्य दोलन करने लगते हैं तब उस संघर्ष से जीव के जन्मों-जन्मों के पाप-ताप नष्ट हो जाते हैं। मन्त्र का अनुष्ठान दीर्घकाल तक निरन्तर श्रद्धा भाव से करने पर मन्त्र और देवता में प्रीती की जागृति होती है और साधक के भीतर ज्ञान का प्रकाश फैलने लगता है। अनुष्ठान विधि-विधान पूर्वक सम्पन्न करने के लिए यम-नियम की आवश्यकता होती है। यम-नियम का पालन करने पर साधक को बाह्य एवं आन्तरिक रूप से दिव्य

शान्ति का अनुभव होता है। अनुष्ठान के महल की नींव वास्तव में यम और नियम की भूमि पर ही प्रतिष्ठित है।

स्थान– अनुष्ठान यदि साधक के गुरु ही सम्पन्न कर दें तो सर्वोत्तम है। यदि यह सम्भव न हो तो स्वयं करें। कहीं-कहीं अपनी पत्नी से भी अनुष्ठान सम्पन्न कराने की अनुमति शास्त्र देते हैं। यदि इनमें से कुछ भी सम्भव न हो तो किसी योग्य ब्राह्मण से भी अनुष्ठान सम्पन्न कराया जा सकता है। अपनी पत्नी से यदि अनुष्ठान कराया जाये तो शर्त यह होती है कि वह पुत्रवती होनी चाहिए। अनुष्ठान के लिए सिद्धपीठ, पुण्यक्षेत्र, नदीतट, गुहा, पर्वत शिखर, तीर्थ, संगम, बिल्ववृक्ष के नीचे, तुलसी वन, गौशाला आदि जैसे स्थान का चयन करना सिद्धिप्रद होता है। लेकिन यदि ऐसी व्यवस्था न हो सके तो अपने घर के किसी एकान्त स्थान पर भी अनुष्ठान सम्पन्न किया जा सकता है। अग्नि, सूर्य, गुरु, चन्द्रमा, जल, दीपक, ब्राह्मण एवं गौओं के सामने बैठकर जप करना भी उत्तम माना गया है। परन्तु यह कोई अटल नियम नहीं है। वास्तविकता यह है कि जिस स्थान पर बैठकर जप करने से मन में ग्लानि उत्पन्न न हो और चित्त प्रसन्न हो, ईर्ष्या और द्वेष का जहां उदय न हो, वही स्थान जप के लिए श्रेष्ठ होता है। जहां दुष्ट लोग, बाघ, सर्प, म्लेच्छ आदि बाधा न डाल सकें, जिस स्थान के लोग नास्तिक न हों, किसी प्रकार का उपद्रव अथवा दुर्भिक्ष न हो, ऐसे स्थान ही जप के योग्य और उत्तम माने गये हैं। यदि किसी साधारण स्थान अथवा गांव में अनुष्ठान करना हो तो वहां भगवान कूर्म का ध्यान करते हुए विचार करना चाहिए कि जिस प्रकार कूर्म भगवान की पीठ पर स्थित मन्दराचल पर्वत के द्वारा समुद्र-मन्थन किया गया था, वैसे ही मैं कूर्माकार/कूर्मचक्र भूमि-प्रदेश में स्थित होकर उन्हीं के आश्रय से अमृतत्व की प्राप्ति के लिए प्रयास कर रहा

हूं, अतः कूर्म देव अपनी कृपा मुझे प्रदान करें।

भोजन– कहा गया है कि "जैसा खाये अन्न, वैसा हो जाये मन।" भोजन के रस से ही शरीर, प्राण और मन का निर्माण होता है। अशुद्ध भोजन– रोग, ग्लानि और क्षोभ उत्पन्न करता है। जिस कारण चित्त के प्रभावित होने पर देवता और मन्त्र के प्रसाद का उदय नहीं होता। इसके विपरीत शुद्ध भोजन से चित्त के मल और विक्षेप नष्ट हो जाते हैं, जिससे देवता और मन्त्र का प्रसाद साधक को सिद्धिरूप में प्राप्त होता है। भोजन में तीन प्रकार के दोष माने जाते हैं– जातिगत दोष, आश्रय दोष तथा निमित्त दोष। जातिगत दोष स्वतः होता है, जैसे– प्याज, लहसुन, शलजम आदि। आश्रय दोष वहां उत्पन्न होता है, जहां स्थान की शुद्धता न हो। जैसे– शराबखाना, पशुओं के काटने का स्थान आदि। ऐसे स्थान पर यदि कोई शुद्ध वस्तु भी रख दी जाये तो उसमें भी दोष उत्पन्न हो जाता है। निमित्त दोष वहां माना जाता है, जहां स्थान आदि की शुद्धता तो हो परन्तु कुत्ते, बिल्ली के द्वारा वहां रखी सामग्री को जूठा कर दिया गया हो।

इसके अतिरिक्त यह भी ध्यान रखना चाहिए कि भोजन हल्का और सुपाच्य एवं थोड़ा गरम हो ताकि साधक पर आलस्य, उत्तेजना आदि का प्रभाव न हो सके।

अन्य आवश्यक तथ्य

अनुष्ठान काल में स्त्री-संसर्ग, उनकी चर्चा और वह स्थान, जहां वे रहती हों, त्याग देना चाहिए। ऋतुकाल के अतिरिक्त अपनी पत्नी को स्पर्श करना भी वर्जित है। कुटिलता और झूठ, उबटन, भगवान का भोग लगाये बिना भोजन और बिना संकल्प के कर्म त्याज्य हैं। स्नान, आचमन, भोजन आदि के समय मन्त्रोच्चारण करना चाहिए।

स्नान, तर्पण के बिना, गन्दे हाथ से, नग्नावस्था में या फिर सिर पर वस्त्र रखकर जप करना वर्जित है। जप के समय माला पूरी किये बिना किसी से बात न करें। यदि बहुत ही आवश्यक हो तो जप समाप्त करने के बाद और प्रारम्भ करने से पूर्व आचमन अवश्य कर लेना चाहिए।

छींक एवं अस्पृश्य स्थानों का स्पर्श हो जाने पर पुनः आचमन, न्यास करके ही माला आरम्भ करनी चाहिए। जपकाल में यदि लघुशंका अथवा शौंच आदि का वेग हो तो इनसे निवृत होकर शुद्धावस्था में ही जप करें, क्योंकि ऐसे वेग के प्रबल होने की स्थिति में मन्त्र और देवता का चिन्तन न होकर मल-मूत्र को रोकने में ही ध्यान होने लगता है। गंदे मुंह, गंदे केश और गंदे अथवा फटे हुए वस्त्रों में भी जप करना निषिद्ध है। आलस्य, जम्हाई, नींद, छींक, थूकना, क्रोध, अपवित्र अंगों का स्पर्श अथवा भय आदि जप काल में निषिद्ध हैं।

जप करते समय मन्त्र के जपने की गति सामान्य होनी चाहिए। गा कर जप करना, शरीर हिलाना, मन्त्र का अर्थ नहीं जानना, लिखा हुआ पढ़कर जप करना आदि कर्म भी जप काल में वर्जित हैं।

अनुष्ठान काल में जप की संख्या नियत रखें। उनका घटाना या बढ़ाना उचित नहीं है। स्त्री, शूद्र, पतित, नास्तिक आदि के साथ बोलना, जूठे मुख से बोलना, झूठ और कुटिलता भी इस काल में त्याज्य हैं। अपने आसन व शैया को शुद्ध व स्वच्छ रखें। यदि अनुष्ठान काल में मरण शौंच अथवा जनन शौंच हो जाये तो भी अनुष्ठान जारी रखें। एक ही वस्त्र अथवा दो से अधिक वस्त्र पहनकर, सोकर, बिना आसन के, बिना माला ढके जप कदापि न करें। पैर फैलाकर जप करना भी निषिद्ध है। लेकिन यदि कोई साधक

मानस-जप करता है तो उसके लिए ये प्रतिबन्ध नहीं है, यथा–

अशुचिर्वा शुचिर्वापि गच्छस्तिष्ठन् स्वपन्नपि।
मन्त्रैकशरणो विद्वान मनसैव सदाभ्यसेत्॥
न दोषो मानसे जप्ये विदेशेऽपि सर्वदा।

गौतमीय तन्त्र में कहा गया है कि "केवल वर्णों के रूप में जो मन्त्र की स्थिति है, वह तो उसकी जड़ता अथवा पशुता है। सुषुम्ना के द्वारा उच्चारित होने पर उसमें शक्ति का संचार होता है। इसके लिए प्रथमतः ऐसी भावना करनी चाहिए कि मन्त्र का प्रत्येक अक्षर चिच्छक्ति से ओत-प्रोत है और परम अमृतस्वरूप चिदाकाश में उसकी स्थिति है। ऐसी भावना करते हुए जप करने से पूजा, होम आदि के बिना ही मन्त्र अपनी शक्ति प्रकाशित कर देते हैं।

जप के अन्त में उसका तेजः स्वरूप ध्यान करके इष्टदेवता के दाहिने हाथ में और देवी का मन्त्र हो तो उसके बायें हाथ में जप कर समर्पण करना चाहिए। प्रतिदिन अथवा अनुष्ठान समाप्त होने पर जप का दशांश हवन, उसका दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन और मार्जन का दशांश ब्राह्मण-भोज कराना चाहिए। होम, तर्पण आदि में से जो अंग पूरा न किया जा सके, उसका जप कर लेना चाहिए। **होम के अभाव में ब्राह्मण के लिए होम की संख्या का चार गुना, क्षत्रियों के लिए छः गुना, वैश्यों के लिए आठ गुना जप करने का विधान है। स्त्रियों को भी आठ गुना जप करना चाहिए। शूद्रों को होम की संख्या से दस गुना जप करना चाहिए। योगिनी-हृदय** में यह संख्या कुछ कम की गयी है। ब्राह्मणों के लिए होम संख्या का दुगुना, क्षत्रियों के लिए तीन गुना, वैश्यों के लिए चार गुना तथा शूद्रों के लिए जप का पांच गुना करने

का विधान है। **स्त्रियों के लिए ब्राह्मण-भोज कराना आवश्यक नहीं है, बल्कि उन्हें न्यास, ध्यान और पूजा की भी छूट है, केवल जप करने से ही उनके मन्त्र सिद्ध हो जाते हैं।**

अनुष्ठान की पूर्णता पर गुरु, गुरु-पत्नी, गुरु-पुत्र अथवा उनके वंशजों को वस्त्र, दक्षिणा आदि देकर प्रसन्न करना चाहिए। बिना गुरु की प्रसन्नता के परम रहस्यमय ज्ञान की प्राप्ति होना सम्भव नहीं है। सार-रूप में यह जान लीजिए कि अनुष्ठान की पूर्णता गुरु की प्रसन्नता में ही निहित होती है।

मन्त्र-शक्ति

मन्त्र-विद्या योग का उच्चकोटि का विषय है। यह मन की बेतार की तारवर्ती है। मन से वर्णों के उच्चारण का घर्षण होने से एक दिव्य ज्योति प्रकट होती है, बस उन्हीं वर्णों के समुदाय का नाम 'मन्त्र' है। इस विषय का ज्ञाता समस्त प्रकार की सिद्धियां प्राप्त करने में सक्षम हो जाता है। मन्त्र द्वारा सिद्धि प्राप्त करने में साधक की योग्यता एक महत्वपूर्ण अंग है। **थोड़े प्रयास से यदि मन्त्र सिद्ध न भी हो तो निराश न होकर पुनः-पुनः जप करते रहना चाहिए, अवश्य ही सिद्धि प्राप्त होती ही है। कहा भी गया है कि "जपात्सिद्धिर्जपातसिद्धि" अर्थात् जपते ही चले जाओ, सिद्धि अवश्य ही मिलेगी।** मन्त्रों की शक्ति अपार होती है। इनके सामर्थ्य की सीमा-रेखा का निर्धारण नहीं किया जा सकता। इन्हीं मन्त्रात्मक वर्णों से समस्त विश्व का सृजन हुआ है। इसीलिए परशुरामकल्प सूत्र में कहा गया है कि– **"मन्त्राणाम्-चिन्त्यशक्तिता।"**

साधना में सफलता का रहस्य

साधक, साधना और साध्य का परस्पर वही सम्बन्ध है जो कि ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय का है। साधक भक्त है, साधना उसकी भक्ति है और साध्य उसका आराध्य इष्ट है। साधना के लिए इच्छुक साधक के लिए आवश्यक है कि वह विवेक, वैराग्य, षट्सम्पत्ति और मुमुक्षता से सम्पन्न हो। साध्य तक पहुंचने के लिए साधक को दो बातों की आवश्यकता होती है– प्रथमतः उसके हृदय में उत्कृष्ट अभिलाषा का होना और द्वितीयतः मन्त्र शक्ति का आश्रय।

साधक के हृदय में साध्य की प्राप्ति के लिए इतनी अधिक तीव्र अभिलाषा होनी चाहिए कि उसके समक्ष अन्य सांसारिक अभिलाषाएं समाप्त हो जायें। ऐसी अभिलाषा होनी चाहिए जो साध्य की प्राप्ति के लिए हृदय में बेचैनी और तड़प उत्पन्न कर दे और साधक साध्य के ध्यान में ही पागल जैसी स्थिति को प्राप्त होने लगे। यही सिद्धि का लक्षण होता है। बिना मणि के सर्प जिस प्रकार तड़पने लगता है अथवा बिना जल के मीन छटपटाती है, ठीक उसी प्रकार की तड़प और छटपटाहट साधक के हृदय में होनी आवश्यक है। उसके लिए जगत् की सारी क्रियायें, सारी घटनायें शून्य हो जानी चाहिए। उसकी दृष्टि में साध्य के अतिरिक्त कुछ और नहीं होना चाहिए। जिस समय मन्त्र और मन्त्र-देवता का ऐक्य हो, जिस समय साधक को स्वयं में, साधना में और साध्य में एक ही वृत्ति दिखायी देने लगे, उसी समय उसे समझ लेना चाहिए कि अब वह और उसका साध्य एक हो गये हैं। बस यही मन्त्र का उद्देश्य होता है, यही उसकी वह शक्ति है, जो साधक और साध्य को एक कर सकती है।

आत्म-संयम– साधना के क्षेत्र में साधक का मूल आधार है–

आत्म-संयम। आत्म-संयम के अभाव में साधना नहीं हो सकती। क्षुब्ध और चंचल शरीर तथा मन से आध्यात्मिक जगत् में सफलता मिल ही नहीं सकती। कारण यह है कि जो शक्ति संगठित एवं केन्द्रीभूत करके इष्टदेव में लगनी होती है, वही शक्ति अधोमुख होकर क्षरित हो जाती है, नष्ट हो जाती है।

दूसरी बात भी साधकों को समझना बहुत ही आवश्यक है। वह यह है कि साधना-पथ में आत्मोत्सर्ग की जितनी भी आवश्यकता समझी जाये, उतनी ही कम है। आध्यात्म के गगन में हम चाहे जितनी भी ऊंची उड़ान उड़ लें, योग की चाहे जितनी भी सिद्धि प्राप्त कर लें, हमें यह ज्ञान रहना चाहिए कि जहां तक हमारे भीतर अहंकार और ममकार (मैं और मेरा) हैं, वहां तक इष्ट का सानिध्य एक कल्पना मात्र है। अहंकार के बने रहने पर इष्ट-प्राप्ति असम्भव है। इसीलिए रामकृष्ण देव ने कहा था कि **"अहंकार के मिट जाने पर जगद्-जननी माँ साधक के शव पर अपना नृत्य करती है, वह नृत्य जो एक बार शुरू होकर फिर कभी बन्द नहीं होता।"**

साधना की गोपनीयता

धर्म-शास्त्रों में साधनाओं को गुप्त रखने का निर्देश दिया गया है। तन्त्र-शास्त्रों में स्थान-स्थान पर "गोपनीयं गोपनीयं गोपनीयं प्रयत्नतः" का निर्देश दिया गया है। तब प्रश्न यह उठता है कि ऐसी हितकर साधनाओं को गुप्त क्यों रखा जाए?

शास्त्रों में साधनाओं को गुप्त रखने का जो निर्देश है, उसके दो कारण हैं। पहला कारण यह है कि अपनी साधना के प्रकट होने से साधक का यश चारों ओर फैलने लगता है। साधना के प्रकट होने पर

साधक को जितना ही यश प्राप्त होगा उतनी ही मात्रा में वह साधना के फल को कम कर देता है। इसीलिए बाईबिल कहती है कि **"ढोल बजाकर दान-पुण्य मत करो। जो ढोल बजाकर दान-पुण्य करते हैं, उन्हें उसका फल उसी समय मिल गया, आगे उनके लिए कुछ भी शेष नहीं बचता।"**

जनसाधारण में यश फैलने पर लोग साधक का सम्मान करने लगते हैं। यही सम्मान साधक के अहंकार का कारण बन जाता है। यदि किसी व्यक्ति विशेष से उसे सम्मान नहीं मिले तो वह उसके द्वेष अथवा दुख का कारण बनता है। उसे अपना अपमान होने पर क्रोध आता है। और यही राग-द्वेष, अहंकार और क्रोध की कीचड़ उसे गर्त में ले जाते हैं। इस कीचड़ में फंसते ही साधक को समझ लेना चाहिए कि उसकी साधना नष्ट हो रही है।

साधना को गोपनीय रखने का दूसरा कारण यह है कि अपने-अपने सुखों और कामनाओं में फंसे लालायित व्यक्ति साधक को घेरने लगते हैं। कोई पुत्र की कामना से उसके चरण छूता है, तो कोई धन की लालसा से उसे पंखा झलता है। ऐसे लोगों के आने-जाने से साधक की साधना में विघ्न उत्पन्न होते हैं। इससे भी अधिक हानि तब होती है, जब साधक को शिष्याएं घेरने लगती हैं। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियां अधिक श्रद्धालु होती हैं। यदि उन्हें किसी साधक का पता चल जाये तो वे किसी न किसी उपाय से उस तक पहुंच ही जाती हैं। भगवद्गीता के अनुसार– "संग से काम उत्पन्न होता है" और जहां कामनियों की भीड़ हो तो ऐसे में काम क्योंकर दूर रह सकता है? इस प्रकार साधकगण अपनी साधना और साध्य को विस्मृत करके उन चेलियों को धन, पुत्र, सुख आदि प्रदान करने लगते हैं। और फिर शनैः-शनैः कितना पतन होता है, यह विश्वामित्र-मेनका

आदि की कथाओं से ज्ञात हो सकता है। इसके अतिरिक्त अनाधिकारी व्यक्तियों के समक्ष रहस्य प्रकट होने पर भी साधक को घृणा अथवा निन्दा का पात्र बनना पड़ता है। कारण यह है कि कुछ साधनाएं इतनी अधिक रहस्यमय होती हैं कि उनके तत्व को समझने में ज्ञानी लोग भी सक्षम नहीं होते। ऐसे में मूढ़ व्यक्तियों से भला क्या अपेक्षा की जा सकती है? और यह इन्सान की प्रकृति है कि जब वह किसी बात को समझ नहीं पाता है तो उसकी निन्दा शुरू कर देता है। इसका सीधा प्रभाव साधक और उसकी साधना पर पड़ता ही है। अतः यह अत्यन्त आवश्यक है कि साधक को अपनी साधना की गोपनीयता बनाये रखनी चाहिए।

॥ मन्त्रांग ॥

मन्त्र और मातृकाएं– देवनागरी में 16 स्वर और 35 व्यंजन वर्ण हैं। इस प्रकार 51 वर्णों को ही 'मातृका' कहा जाता है। लेकिन 'ज्ञ' वर्ण को हम इसमें सम्मिलित नहीं करते, क्योंकि 'ज्ञ' से तात्पर्य 'ज्ञानी' से है और ज्ञानी इस सृष्टि में मात्र परमात्मा ही है। वर्णमाला के 'अ' से लेकर 'क्ष' तक पचास वर्णों का प्रयोग मन्त्रों में होता है। समस्त मन्त्र-वर्ण इन्हीं मातृकाओं के मध्य में बिखरे हैं। अतः तन्त्र-शास्त्रों में मातृकाओं के पूजन का विधान आवश्यक बताया गया है।

'मातृका' शब्द का अर्थ है– माता या जननी। अतः समस्त वांगमय की यही जननी है। समस्त मन्त्र वर्णात्मक हैं और ये मन्त्र शक्ति-स्वरूप हैं। **शारदातिलक** के सप्तम पटल में यह विधान उल्लिखित है। सभी बीजाक्षर संकेत समूह हैं। इन्हीं बीजाक्षरों से मन्त्र का निर्माण होता है और ये मन्त्र इतने शक्तिशाली हो जाते हैं कि हम

सम्बन्धित देवता से वांछित कर्म करवाने में सफल हो जाते हैं। यह शक्ति भगवान शिव की है। अतः समस्त मन्त्र साक्षात् शिव-स्वरूप हैं। जिसे भगवान शंकर ने स्वयं पार्वती जी से कहा है–

सर्वे वर्णात्मका मन्त्रास्ते च शक्त्यात्मकाः प्रिये!
शक्तिस्तु मातृका ज्ञेया सा च ज्ञेया शिवात्मिका॥

सिद्ध साधक मन्त्राक्षरों का जप अवश्य करते हैं, लेकिन मन्त्राक्षरों के सभी वर्णों को लोम-विलोम रीति से जपकर वे स्वयं मन्त्ररूप हो जाते हैं। उनकी तपश्चर्या एवं एकाग्रता से आत्मिक स्वरूप प्रकट हो जाने से मन्त्र का अधिष्ठाता देवता स्वयं उपस्थित होकर उनकी सेवा करने के लिए उनके अधीन होकर प्रसन्न रहता है। वास्तव में यह एक उच्च-कोटि का विषय है। यह भी सत्य है कि मन्त्र वही साधक सिद्ध कर सकता है, जो आध्यात्म-विद्या का ज्ञाता हो।

आगम-दर्शन की मूल भित्ति छत्तीस तत्वों पर आधारित है और ये तत्व मातृका के 36 अक्षरों पर आधारित हैं। इन्हीं तत्वों से भौतिक विश्व की उत्पत्ति, स्थिति और लय होती है। इसीलिए मन्त्रात्मक अक्षरों को 'शब्द-ब्रह्म' भी कहा जाता है। जगत् का व्यवहार भी शब्दों के द्वारा ही होता है। अतः शब्द-शक्ति सर्वोपरि मानी जाती है। इन मन्त्रों की साधना से समस्त अभीष्टों की सिद्धि सरलता से की जा सकती है, परन्तु साधना-विधि शास्त्रानुमोदित एवं विधिवत् होनी आवश्यक है।

॥ न्यास ॥

न्यास का अर्थ है– 'स्थापन'। बाहर और भीतर के शरीरांगों में अपने मन्त्र और इष्टदेवता के स्थापन को ही न्यास कहा जाता है।

बिना न्यास के मन्त्र जप करने से जप निष्फल और विघ्न-प्रदाता कहा जाता है, यथा–

शैवी षडंगमुद्रोक्ता वर्णन्यासमथाचरेत्।
जप्त्वा चाप्यफलामन्त्रा विघ्नदा न्यासमन्तरा॥

इस स्थूल शरीर में सर्वथा अपवित्रता है। इसलिए गन्दे शरीर से देवपूजा फलदायी नहीं हो सकती। देवपूजा के लिए आवश्यक है कि यह शरीर दिव्य और शुद्ध हो। अपवित्रता चित्त में ग्लानि उत्पन्न करती है, जिससे विक्षेप और अवसाद उत्पन्न होता है। यह विक्षेप और अवसाद बार-बार आलस्य और तन्द्रा का कारण बनता है। इनसे आक्रान्त होने पर साधक न तो ध्यानमग्न हो सकता है और न ही एकचित्त होकर विधि-विधान के साथ कोई अनुष्ठान सम्पन्न कर सकता है। अतः इन समस्त बाधाओं के मूल कारण अपवित्रता को नष्ट करने के लिए न्यास सर्वश्रेष्ठ साधन है।

हमारी यह देह, इसके विचित्र यन्त्र और वे तत्व, जिनसे इसका निर्माण हुआ है, हमने नहीं बनाये हैं। ये सब उस परमात्मा ने बनाये हैं। इसलिए इसके स्वामी हम नहीं हैं बल्कि ईश्वर हैं। उन्होंने ही कृपा करके इसके भोग का अधिकार हमको दिया है। इसलिए इन्हें 'मेरा' कहना उपयुक्त नहीं है। चूंकि हमारे शरीर का अंग-प्रत्यंग उस परमेश्वर का है, इसीलिए अंग-प्रत्यंग में विभिन्न देवताओं का, विभिन्न भगवत्-शक्तियों का चिन्तन करने की व्यवस्था है। ऐसा करने से 'मेरा' भाव दूर होकर 'ये सब भगवान के हैं' का भाव जाग्रत करना ही न्यास का मूल उद्देश्य है।

॥ न्यास के भेद ॥

न्यास कई प्रकार के होते हैं, जो निम्नांकित हैं–

1. **अंगन्यास–** 'अंग' का अर्थ है– शरीर। अंगन्यास का अर्थ है– शरीर के विभिन्न तत्वों का न्यास। अर्थात् देह के अंगों में किसी देवता की स्थापना करके, उनके प्रति 'मेरा' भाव से मुक्त हो जाना ही अंगन्यास कहलाता है। यह न्यास त्रिनेत्र देवताओं के प्रसंग में 'षडंग' और अन्य देवताओं के प्रसंग में पंचांग होता है।

2. **करन्यास–** जो न्यास हाथों की समस्त उंगली व अंगूठों में, करतल तथा करपृष्ठ में किया जाता है, वह करन्यास होता है।

   तत्वज्ञानी कहते हैं कि 'कार्य हम नहीं करते, ये हमारे द्वारा कारित होते हैं। हम कर्त्ता नहीं हैं बल्कि यन्त्रमात्र हैं'। गीता में अर्जुन को भी निमित्तमात्र होने का उपदेश दिया गया है, यथा– 'निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्' (गीता : 11/33)। इस व्यर्थ कर्तृत्व-अभिमानरूपी महिषासुर का वध करके अहंकार के हाथ से कर्तृत्व-बुद्धि को छीनकर वास्तविक कर्त्ता को अर्पण करना ही इस न्यास-क्रिया का उद्देश्य है। परन्तु आधुनिकता के परिवेश में इन क्रियाओं के मूल महत्व को विस्मृत करके प्रायः एक नीरस मन्त्रोच्चारण और बाह्य हस्तक्रिया मात्र के रूप में ही लिया जाता है।

3. **मातृकान्यास–** मातृकान्यास, स्वर और वर्णों का होता है। मातृका का अर्थ है– "खण्ड-खण्ड माँ" अर्थात् शक्ति। (मातृका का यह अर्थ **पूजा-तत्व** में स्पष्ट किया गया है। उक्त ग्रन्थ एक बगला महात्मा द्वारा लिखा गया है, जिसकी भूमिका परम श्रद्धेय श्री गोपीनाथ जी कविराज, एम०ए०डी०लिट् ने लिखी है। उन्होंने ही इस ग्रन्थ का प्रकाशन किया है।) हमारी इस

खण्ड-खण्ड-देह में वर्णोच्चारण आदि क्रिया-कलाप का कर्तृत्व इन्हीं मातृकाओं के हाथों में न्यस्त है। ये मातृका ही हमारी इस खण्ड-खण्ड-देह में स्थित– परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी का स्तर भेद करके, हमारे द्वारा उच्चारित शब्दों की वास्तविक स्वामिनी हैं। मातृका न्यास के परिणामस्वरूप हम अपनी इस देहविच्छिन्न खण्डीकृत माँ को जगद्-व्यापिनी माँ (शक्ति) में मिलाकर अखण्ड मातृका शक्ति, अखण्ड शब्द-ब्रह्म तत्व का स्वरूप आस्वादन का लाभ प्राप्त करते हैं। अतः माँ को शब्द-ब्रह्म रूप में, वेद रूप में, आत्म-प्रकाश करने की योग्यता दान करने का नाम ही मातृकान्यास है।

4. **ऋष्यादिन्यास–** ऋष्यादिन्यास के छः अंग होते हैं– सिर में ऋषि, मुख में छन्द, हृदय में देवता, गुह्य स्थान में बीज, पैरों में शक्ति और सर्वांग में कीलक। इनके अतिरिक्त और भी बहुत से न्यास हैं, जिनका वर्णन प्रसंगानुसार किया जायेगा। शिवजी के मुख से सर्वप्रथम जिस साधक ने मन्त्र को सुनकर सिद्ध किया था, वह इस मन्त्र के ऋषि कहलाते हैं। उस मन्त्र के उन्हीं ऋषि का न्यास मस्तक में गुरु मानकर किया जाता है। इस प्रकार हम उनके भाव से परिभावित होकर, अपने द्वारा उच्चारित वाक्यों को ऋषिवाक्य अथवा वेदवाक्य के रूप में अनुभव करते हैं। ऐसी पवित्र भावना से भावित होकर हमारी देह, हमारी वागिन्द्रिय ऋषियों के यन्त्ररूप में परिगणित हो जाती है।

5. **व्यापक न्यास–** जब किसी भी अंग को स्पर्श किये बिना समस्त अंगों में मन्त्र न्यास किया जाता है, उसे व्यापक न्यास किया जाता है। सर्वभूत में सर्वत्र ईश्वरीय सत्ता की, ईश्वरीय

कार्यप्रणाली की और ईश्वरीय आनन्द की उपलब्धि को प्राप्त करना ही व्यापक न्यास का लक्ष्य है। जीव-जगत् उन परमेश्वर द्वारा रचित मूर्ति है। इस मूर्ति के भीतर उनके अस्तित्व और उनकी माया का दर्शन करना, उनमें सत्य-प्रतिष्ठा, प्राण-प्रतिष्ठा और आनन्द-प्रतिष्ठा का अधिकार प्राप्त करना ही व्यापक न्यास-क्रिया की स्वाभाविक परिणति है।

शास्त्रों में इस बात पर बहुत अधिक बल दिया गया है कि केवल न्यास के द्वारा ही मन्त्र-सिद्धि और देवत्व की उपलब्धि हो जाती है। हमारे भीतर और बाहर देह के अंग-प्रत्यंग में देवताओं के निवास और उनके कारण शरीर की दिव्यता होने का अनुभव करके ही मन में अकथित नवीन चेतना एवं स्फूर्ति का जागरण होने लगता है। न्यास सिद्ध होते ही परमात्मा से एकत्व स्वयं ही हो जाता है। न्यासरूपी कवच पहनने पर कोई भी आध्यात्मिक आधिदैविक विघ्न साधक के निकट नहीं आ सकते।

मुख्यतः महाषोढ़ा, महाशक्ति न्यास, महाचक्र न्यास आदि शरीर को वज्रवत् बना देते हैं। सभी न्यासों का एक ही उद्देश्य होता है कि साधक सर्वत्र परमात्मा का दर्शन करे, उनके ध्यान एवं सेवा की योग्यता प्राप्त करे। अपने भीतर से निर्मम अहंकार को त्याग कर, उन्हें कर्त्ता और स्वामी मानकर इस अवस्था को प्राप्त करे कि यह सम्पूर्ण देह उस परमात्मा की है और मैं उस यान्त्रिकी का केवल एक यन्त्र मात्र हूं।

देवता– मन्त्र का देवता, जो अपने हृदय का धन है, जीवन का संचालक है, जीव मात्र के समस्त क्रिया-कलापों को प्रेरित, संचालित एवं नियन्त्रित करने वाला है। जिसकी शक्ति साधक के हृदय में स्थित होती है, उसका न्यास अपने हृदय में किया जाता है।

छन्द— अक्षर अथवा पदों से छन्द का निर्माण होता है। प्रत्येक मन्त्र में कोई न कोई छन्द होता है। गायत्री, अनुष्टुप, त्रिष्टुप, वृहती आदि अनेकों छन्द हैं। इनका उच्चारण मुख से किया जाता है, इसलिए इसका न्यास मुख में होता है।

बीज— मन्त्र-शक्ति को उद्‌भाषित करने वाले तत्व को 'बीज' कहा जाता है। उसके द्वारा चूंकि सृजनात्मक कार्य होता है, अतः उसका न्यास सृजनांग अर्थात् गुप्तांग में किया जाता है।

शक्ति— जिस तत्व की सहायता से बीज मन्त्र-रूप में परिणत हो जाता है, वह तत्व 'शक्ति' कहलाता है। इसका न्यास पाद-स्थान में किया जाता है।

विनियोग— 'गौतमीय तन्त्र' निर्देश देता है कि "यदि मन्त्र का विनियोग न करके मात्र जप ही किया जाये तो मन्त्र दुर्बल हो जाता है।" मन्त्र को फल की दिशा का निर्देश देना अर्थात् अपनी कामना की अभिव्यक्ति करने को ही विनियोग कहते हैं। यह ग्रन्थ यह भी स्पष्ट करता है कि ऋषि एवं छन्द के ज्ञान के अभाव में मन्त्र का फल प्राप्त नहीं होता।

कीलक— विनियोग में ऋषि, छन्द, देवता, शक्ति एवं बीज के अतिरिक्त एक अन्य तत्व भी होता है, जिसे कीलक कहा जाता है। इसका न्यास सर्वांग में किया जाता है।

॥ न्यास में अंगुलियों का क्रम ॥

देह में बाह्य न्यास करने के लिए अंगुलियों व अंगूठों का प्रयोग किया जाता है। विभिन्न अंगुलियों के द्वारा न्यास करने का क्रम इस प्रकार है—

हृदय में न्यास	तर्जनी, मध्यमा और अनामिका के द्वारा।
शिर में न्यास	मध्यमा और तर्जनी के योग से।
शिखा में न्यास	अंगूठे से।
कवच-निर्माण	दशों अंगूठे व अंगुलियों से।
नेत्र में न्यास	मध्यमा और अनामिका से।
करतल-करपृष्ठ न्यास	तर्जनी और मध्यमा से।

यदि देवता द्विनेत्र हो तो तर्जनी और मध्यमा से नेत्र में न्यास किया जाता है। यदि देवता त्रिनेत्र हो तो तर्जनी, मध्यमा और अनामिका अंगुलियों से न्यास किया जाता है।

किसी-किसी मन्त्र में अंगन्यास का मन्त्र नहीं मिलता। ऐसी स्थिति में देवता के नाम के प्रथम अक्षर से अंगन्यास करना चाहिए।

पंचांग न्यास में नेत्र न्यास नहीं किया जाता है।

मात्र अंगूठे और अनामिका को मिलाकर भी न्यास सम्पादित किया जा सकता है।



अध्याय 5

श्री धूमावती पूजन-विधान

भगवती धूमावती सप्तम महाविद्या हैं जो बहुत ही तीव्र और शीघ्र परिणाम प्रदान करने वाली हैं। इसीलिए इन्हें "उग्र कोटि" की श्रेणी में स्थापित किया गया है। अतः इनकी साधना सम्पन्न करने के लिए साधक को सर्वप्रथम गुरु-दीक्षा लेनी चाहिए, क्योंकि सही मार्ग-दर्शन के अभाव में त्रुटि होना सम्भव है, जो साधक के हित में नहीं है। उनके मन्त्र की दीक्षा के अभाव में श्री धूमावती महाविद्या के मन्त्र की उपासना साधक को सफलता प्रदान नहीं कर सकती, ऐसी ही परम्परा है। इनकी दीक्षा किसी शुक्ल पक्ष के शुभ दिन में अथवा उत्साह में किसी गुरुवार के दिन किसी योग्य गुरु से प्राप्त करनी चाहिए। तत्पश्चात् साधक को पुरश्चरण के लिए तत्पर होना चाहिए।

॥ उचित समय तथा विधि ॥

वैसे भगवती धूमावती की साधना चन्द्रग्रहण अथवा सूर्यग्रहण में शीघ्र फलदायी है। यदि ऐसा कोई ग्रहण पड़ रहा है तो ग्रहण काल आरम्भ होते ही इनकी साधना आरम्भ करके ग्रहण काल के समापन तक करने का विधान है। इनकी साधना के लिए एक एकान्त कमरे

में पवित्र स्थान पर आम की लकड़ी से बना सिंहासन स्थापित करके उसके ऊपर एक सफेद चादर बिछाकर धूमावती का चित्र स्थापित करें। सिंहासन के चारों कोनों अर्थात् चारों दिशाओं में गाय के शुद्ध घी के चार चौमुख दीपक जलायें। सुगन्धित धूप अथवा अगरबत्ती जलायें। सफेद वस्त्र धारण करें तथा पूजन में पुष्प, अक्षत्, सफेद चन्दन तथा नैवेद्य आदि सभी वस्तुयें सफेद रंग की प्रयोग में लायें। सिंहासन पर चित्र के सामने किसी प्लेट में श्वेत कपड़ा बिछायें अथवा श्वेत पुष्प बिछाकर प्राण-प्रतिष्ठित यन्त्र की स्थापना करें। माला मोती अथवा आक की लकड़ी से बनी हुई प्रयोग में लायें। हवन सामग्री में कौए के पंख अवश्य मिलायें। यदि ग्रहण काल न हो तो इनकी साधना किसी भी कृष्ण पक्ष के शनिवार से आरम्भ करनी चाहिए। ज्येष्ठा नक्षत्र में इनकी साधना आरम्भ करना विशेष फल प्रदान करने वाला होता है। साधना 40 दिनों में पूर्ण करें। अनुष्ठान काल में सभी निर्धारित नियमों का पालन करते हुए अन्तिम दिन यानि 41वें दिन सम्पूर्ण किये गये जप का दशांश हवन करें। तत्पश्चात् हवन के दशांश मन्त्रों से तर्पण और तर्पण के दशांश मन्त्रों से मार्जन करके इसके दशांश संख्या में कन्याओं अथवा ब्राह्मणों को भोजन कराकर तृप्त करें तथा यथा-योग्य दान-दक्षिणा प्रदान करें। अपने माता-पिता का आशीर्वाद लें तथा गुरुदेव को यथा-योग्य दान-दक्षिणा प्रदान करके उन्हें सन्तुष्ट करें। सदैव स्मरण रखें कि अपने बुजुर्गों तथा गुरुदेव का आशीर्वाद ही आपकी साधना को सफलता प्रदान करता है। इसीलिए साधना के क्षेत्र में गुरु को माता-पिता और भगवान से अधिक सम्मान दिया जाता है।

जिस दिन आप साधना आरम्भ करें उस दिन प्रातः कृत्य करने के उपरान्त अपने गुरुदेव का ध्यान करें। यदि गुरु धारण नहीं किया

है तो धारण कर लेना चाहिए, लेकिन जब तक गुरु धारण नहीं किया जाये तब तक भगवान शिव अथवा श्री दक्षिणामूर्त्ति को ही अपना गुरु मान लेना चाहिए। यदि गुरु धारण किया हो तो सर्वप्रथम निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करें–

ॐ श्री गुरुवे नमः।

यदि गुरु न हों तो निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करें–

ॐ नमः शिवाय।

इसके उपरान्त अपने जीवन के सभी शुभ-अशुभ कर्म अपने गुरु को समर्पित कर दें और फिर मानसिक रूप से शुभ कर्म किये जाने हेतु अनुमति ग्रहण करें। इसके उपरान्त अपने मूलाधार की कर्णिका के भीतर अधोमुख स्वयम्भू लिंग पर लपेटे लिये हुए सुषुप्तावस्था में भुजंगाकार कुण्डलिनी का ध्यान करें और 'हुं' का उच्चारण करें और अनुभव करें कि आपकी कुण्डली जाग्रत हो रही है और उठकर सिर की ओर जा रही है। इसके उपरान्त श्री धूमावती देवी का ध्यान करें।

चौर–गणपति

साधना काल में आपने अनुभव किया होगा कि यदा-कदा जम्हाई, आलस्य अथवा छींक आदि आती हैं। ऐसा चौर-गणाधिपों के कारण होता है। हमारे शरीर में जो कुण्डलिनी कमल है, अर्थात् जो-जो चक्र का स्थान है, वहां पर पचास गण देवताओं के ज्योतिस्वरूप जो मुनिगण हैं, वे जम्हाई लिया करते हैं और चक्र के कमलदलों में स्थित होकर हमारे द्वारा किये गये जप का तेज हर लेते हैं। इन्हें चौर गणाधिप भी कहा जाता है। जहां-जहां भी कोई जप-तप जैसा कार्य

होता है, वहां ये गणाधिप उपस्थित रहते हैं। अतः इनकी तृप्ति एवं प्रसन्नता हेतु **चौर मन्त्र** का जप अवश्य ही करना चाहिए। इन मन्त्रों के बिना की गयी पूजा से दोष उत्पन्न होता है और साधक द्वारा किये गये जपादि कार्य निष्फल हो जाते हैं, क्योंकि जप के तेज को स्वयं गणपति हर लेते हैं। इसलिए इन मन्त्रों का जप करना आवश्यक है। नीचे चौर गणेश मन्त्रों का उल्लेख किया जा रहा है, जिनका जप शरीर के विभिन्न अंगों पर किया जाता है। प्रत्येक मन्त्र का दस-दस बार जप करते हुए उस स्थान पर ध्यान लगाना है, जिस स्थान का नाम मन्त्र के साथ उल्लिखित है।

- हृदय पर **क्रों**
- दायें नेत्र पर **ह्रीं ह्रीं**
- बायें नेत्र पर **ह्रीं ह्रीं**
- दायें कान पर **ह्रीं ह्रीं**
- बायें कान पर **ह्रीं ह्रीं**
- दायीं नाक पर **हुं हुं**
- बायीं नाक पर **हुं हुं**
- मुख पर **ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं**
- नाभि पर **ऐं क्लीं**
- लिंग/योनि पर **ह्सौः**
- दोनों भौहों के मध्य **हुं**

इसके उपरान्त आप अपने प्रातःकाल के दैनिक कार्यों से निवृत्त होकर, स्नानादि के उपरान्त अपने पूजा-गृह में प्रवेश करें और अपने हाथों में गन्ध-पुष्प लेकर नैर्ऋत्य कोण की दिशा में निम्नांकित मन्त्र

बोलते हुए गन्ध-पुष्प छोड़ दें—

ॐ वास्तु पुरुषाय नमः।

पुनः हाथ में उक्त सामग्री लें और निम्नांकित मन्त्र बोलते हुए नैर्ऋत्य कोण की दिशा में छोड़ दें—

ॐ ईशाय नमः।

इसके बाद पुनः हाथ में उक्त सामग्री लेकर निम्नांकित मन्त्र बोलकर उसी स्थान पर सामग्री छोड़ दें—

ॐ ब्रह्मणे नमः।

इसके बाद अपने दायें हाथ में पीली सरसों लेकर निम्नांकित मन्त्र का उच्चारण करके पीली सरसों अपने चारों ओर बिखेर दें—

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थितः।
ये भूता विघ्न-कर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥
ॐ सर्व विघ्नान उत्सारय हुं फट् स्वाहा।

इसके बाद निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करते हुए पृथ्वी पर बायें पैर से भूमि पर आघात करें—

ॐ पवित्र वज्र भूमे हुं फट् स्वाहा।

तदोपरान्त जल लेकर अपनी अनामिका उंगली से अपने आसन वाले स्थान पर त्रिकोण का चिह्न बनाकर निम्नलिखित मन्त्र से प्रणाम करें—

ॐ कामरूपाय नमः।

अब त्रिकोण वाले स्थान पर अपना आसन बिछा दें और निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करें—

ॐ पृथिवी त्वया धृतालोका देवि त्वं विष्णुना-धृता।
त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु च आसनम्॥

इसके बाद आसन को निम्नांकित मन्त्र से प्रणाम करें–

क्लीं आधार शक्त्यै कमलासनाय नमः।

तदोपरान्त निर्दिष्ट दिशा की ओर मुंह करके बैठ जायें और आचमन करें। फिर **'ॐ ह्रीं श्रीं'** का उच्चारण करते हुए शिखा-बंधन करें। जो साधक शिखा न रखते हों वे मानसिक रूप से शिखा की भावना करते हुए क्रिया करें। उसके बाद **'ॐ ह्रीं श्रीं'** मन्त्र का मानसिक उच्चारण करते हुए प्राणायाम करें। तदोपरान्त निम्नांकित मन्त्र पढ़ते हुए अपने ऊपर जल छिड़कें–

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थांगतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्यभ्यन्तरः शुचि॥

॥ संकल्प ॥

अब हाथ में जल, अक्षत्, पुष्प व कुछ मुद्रा लेकर संकल्प लें–

ॐ श्री गणेशाय नमः।
ॐ गजाननं भूत-गणादि सेवितं,
कपित्थ-जम्बूफल-चारु भक्षणम्।
उमासुतं शोक विनाशकारकं,
नमामि विघ्नेश्वर पाद-पंकजम्॥
सर्वमंगल-मांगल्ये शिवे सर्वार्थ-साधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते॥
श्री महागौर्य नमः।

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्न-वदनं ध्यायेत् सर्व-विघ्नोप-शान्तये॥
ॐ श्री विष्णवे नमः।

"ॐ अद्य ब्रह्मणेऽह्नि द्वितीयपरार्धे श्री श्वेत-वाराह-कल्पे वैवस्वत-मन्वन्तरे-ऽष्टा विंशति तमे कलियुगे कलि-प्रथम-चरणे बौद्धावतारे पृथ्वीलोके जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारत वर्षे .... अमुक क्षेत्रे .... नामक संवत्सरे .... मासे .... पक्षे .... तिथौ .... वासरे .... गौत्रोत्पन्न .... अहम् .... आत्मज श्री .... काले .... श्री भगवती धूमावती महाविद्यायाः प्रसाद सिद्धि द्वारा मम सर्वाभीष्ट सिद्धयर्थं यथाशक्ति, यथाज्ञानेन, यथा-सम्भावितोपचार-द्रव्यै यथालब्धोपचारेण पूजनमहं करिष्ये।"

इसके उपरान्त अक्षतों की एक ढेरी बनाकर उस पर दीपक की स्थापना कर्म-साक्षी के रूप में करके प्रार्थना करें–

दीप-पूजन–

भो दीप देवीरूपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत्।
यावत्कर्म-समाप्तिः स्यात् तावत् त्वं सुस्थिरो भव॥

माला-पूजन– इसके उपरान्त स्फटिक, मोती अथवा रुद्राक्ष की माला लेकर उसका पूजन करें–

ॐ माले माले महामाले सर्वतत्व-स्वरूपिणि।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्माने सिद्धिदा भव॥
ॐ ह्रीं मालायै नमः।

अब गुरु-वंदना करें–

गुरु-वंदना–

अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरुवे नमः।।
अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानांजन शलाक्या।
चक्षुरून्मीलितं येन तस्मै श्री गुरुवे नमः।।
देवतायाः दर्शनं च करुणा वरुणालयं।
सर्वसिद्धि प्रदातारं श्री गुरुं प्रणमाम्यहम्।।
वराभय कर नित्यं श्वेत पद्म निवासिनं।
महाभय निहन्तारं गुरुदेवं नमाम्यहम्।।

नमस्कार-मन्त्र– इसके उपरान्त निम्नलिखित मन्त्रों से सम्बन्धित देवी-देवताओं एवं वेद-शास्त्रों को नमस्कार करते हुए आचमनी से जल डालें–

- **ॐ श्री गुरुवे नमः।**
- **ॐ क्षं क्षेत्रपालाय नमः।**
- **ॐ वास्तु पुरुषायै नमः।**
- **ॐ विघ्न राजायै नमः।**
- **ॐ देवतायै नमः।**
- **ॐ ऋषियै नमः।**
- **ॐ तीर्थायै नमः।**
- **ॐ दुर्गायै नमः।**
- **ॐ विनायकायै नमः।**
- **ॐ शम्भु शिवायै नमः।**
- **ॐ भैरवायै नमः।**

- **ॐ बटुकायै नमः।**
- **ॐ ब्रह्मायै नमः।**
- **ॐ नैर्ऋत्यै नमः।**
- **ॐ चक्रपाणायै नमः।**
- **ॐ विघ्ननाथायै नमः।**
- **ॐ वेद-शास्त्रायै नमः।**
- **ॐ पुराणायै नमः।**
- **ॐ योगिन्यै नमः।**
- **ॐ दिक्पालायै नमः।**
- **ॐ मन्त्र-तन्त्र-यन्त्रायै नमः।**
- **ॐ मातृकायै नमः।**
- **ॐ पंचभूतायै नमः।**
- **ॐ महाभूतायै नमः।**

कलश-स्थापन व पूजन– इसके बाद अपने समक्ष एक साफ-सुथरी लकड़ी की चौकी रखकर उस पर एक सफेद कपड़ा बिछाकर उस पर एक प्लेट में प्राण-प्रतिष्ठित धूमावती यन्त्र तथा उनका एक चित्र अथवा मूर्ति स्थापित कर लें। इसके उपरान्त कलश-पूजन किया जाता है। जिन साधकों को अनुष्ठान सम्पन्न करना है, वे कलश की स्थापना करें और जिन्हें सामान्य पूजन और जप करना है, वे कलश के स्थापन पर पानी भरकर कोई पात्र पूजा-स्थल में रखें। नित्य पूजा में कलश-स्थापना की आवश्यकता नहीं होती। यदि आपने अनुष्ठान करना है तो कलश-पूजन निम्नवत् होगा–

ॐ अपां पतये वरुणाय नमः। अस्मिन् कलशे वरुणं सांगं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम्-आवहयामि। कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः। मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्म मध्ये मातृगणाः स्मृताः।। कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा। ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः। अंगैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः।। अत्र गायत्री सावित्री शान्ति-पुष्टिकरी तथा। आयान्तु देवपूजार्थं दुरितक्षय-कारकाः। गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति। नर्मदे सिन्धु-कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।। सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः। आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षय-कारकाः।। ॐ वरुणाद्यावाहित-देवताः स्थापयामि। ॐ वरुणाद्यावाहित-देवताभ्यो नमः।

इस प्रकार वरुण देवता का आवाहन करके उनका गन्ध-पुष्प आदि से पूजन करें, फिर प्रार्थना करें–

।। प्रार्थना ।।

देव-दानव-संवादे मथ्यमाने महोदधौ। उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम्।। त्वत्तवये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः। त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः।। शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः। आदित्या वसवो रूद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः।। त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः। त्वत्प्रसादादिमां पूजां कर्तुमिहे जलोद्भव। सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा।।

इसके बाद कलश पर स्थित पूर्णपात्र में वस्त्र के ऊपर रोली से धूमावती देवी के यन्त्र का निर्माण करें अथवा किसी धातु या स्फटिक

आदि से बने हुए यन्त्र की स्थापना करके उसका आवरण-पूजन करें। सर्वप्रथम भगवती धूमावती का ध्यान करें।

॥ ध्यान ॥

ध्यायेत् कालाभ्र-नीलां विकलित-वदनां काक-नासां विकर्णाम्।
संमार्जन्युल्क शूर्पै-र्युत मुसल-करां वक्रदन्तां विषास्याम्॥
ज्येष्ठां निर्वाणवेषां भ्रकुटित नयनां मुक्त - केशीमुदाराम्।
शुष्कोत्तुंगाति-तिर्यक्-स्तन-भर-युगलां निष्कृपां शत्रु-हन्त्रीम्॥

प्राण-प्रतिष्ठा— भगवती का इस प्रकार ध्यान करने के उपरान्त चित्र अथवा प्रतिमा में निम्नानुसार प्राण-प्रतिष्ठा करें—

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हंसः ह्रीं ॐ हंसः श्रीमद् धूमावत्याः प्राणा इह प्राणाः। आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हंसः ह्रीं ॐ हंसः श्रीमद् धूमावत्याः जीव इह स्थितः। आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हंसः ह्रीं ॐ हंसः श्रीमद् धूमावत्याः सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हंसः ह्रीं ॐ हंसः श्रीमद् धूमावत्याः वाङ्मनश्चक्षु श्रोत्र घ्राण प्राणा इहागत्य सुखं चिरन्तिष्ठन्तु स्वाहा।

मातृकान्यास— इस प्रकार प्राण-प्रतिष्ठा करने के बाद देवता के स्वरूप का मन में ध्यान करें। फिर प्राणायाम, ऋष्यादिन्यास आदि करके मातृकान्यास सम्पादित करें—

विनियोग— अपने दाहिने हाथ में जल लेकर उच्चारण करें—

ॐ अस्य मातृका मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दो, मातृका सरस्वती देवता, हलो बीजानि स्वराश्शक्तयस्तदुभयं

कीलकं मम अभीष्ट सिद्धयर्थे जपे विनियोगः।

विनियोग करने के बाद अपने हाथ में लिया जल भूमि पर छोड़ दें। फिर ऋष्यादिन्यास सम्पन्न करें–

ऋष्यादिन्यास–

शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः।

मुखे गायत्री छन्दसे नमः।

हृदि मातृका सरस्वत्यै देवतायै नमः।

लिंगे हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः।

पादयो स्वरेभ्य शक्तिभ्यो नमः।

सर्वांगे उभय कीलकाय नमः।

षडंगन्यास– इसके बाद षडंगन्यास करें–

अं कं खं गं घं ङ आं हृदयाय नमः।

इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा।

उं टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्।

एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुम्।

ओं पं फं बं भं मं औं नेत्रत्रयाय वौषट्।

अं यं रं लं वं शं षं हं क्षं अः अस्त्राय फट्।

करन्यास– इसी प्रकार करन्यास करें–

अं कं खं गं घं ङ आं अंगुष्ठाभ्यां नमः।

इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा।

उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां वषट्।

एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां हुम्।

ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्।

अं यं रं लं वं शं षं हं क्षं अः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

बहिर्मातृका न्यास– इस प्रकार करन्यास करने के उपरान्त बहिर्मातृका न्यास सम्पन्न करें–

अं नमः ललाटे। आं नमः मुखवृत्ते। इं नमः दक्ष नेत्रे। ईं नमः वाम नेत्रे। उं नमः दक्ष कर्णे। ऊं नमः वाम कर्णे। ऋं नमः दक्ष नासायाम्। ॠं नमः वाम नासायाम्। लृं नमः दक्ष गण्डे। ॡं नमः वाम गण्डे। एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ऐं नमः अधरोष्ठे। ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। औं नमः अधोदन्तपंक्तौ। अँ नमः शिरसि। अः नमः मुखे। कं नमः दक्षिण बाहुमूले। खं नमः कूर्परे। गं नमः मणिबन्धे। घं नमः अंगुलिमूले। ङँ नमः अंगुल्यग्रे। चं नमः वाम बाहुमूले। छं नमः कूर्परे। जं नमः मणिबन्धे। झं नमः अंगुलिमूले। ञं नमः अंगुल्यग्रे। टं नमः दक्षिणोरूमूले। ठं नमः जानुनि। डं नमः गुल्फे। ढं नमः अंगुलिमूले। णं नमः अंगुल्यग्रे। तं नमः वामोरूमूले। थं नमः जानुनि। दं नमः गुल्फे। धं नमः अंगुलिमूले। नं नमः अंगुल्यग्रे। पं नमः दक्षपार्श्वे। फं नमः वामपार्श्वे। बं नमः पृष्ठे। भं नमः नाभौ। मं नमः उदरे। यं त्वगात्मने नमः हृदये। रं असृगात्मने नमः दक्षांसे। लं मांसात्मने नमः ककुदि। वं मेदात्मने नमः वामांसे। शं अस्थ्यात्मने नमः हृदयादि दक्षहस्तान्तम्। षं मज्जात्मने नमः हृदयादि वाम भुजाग्रान्तम्। सं शुक्रात्मने हृदयादि दक्षपादाग्रान्तम्। हं आत्मने नमः हृदयादि वामपादाग्रान्तम्। क्षं परमात्मने नमः हृदयादि मस्तकान्तम्।

मानसोपचार पूजन– इसके बाद देवी का मानसोपचार पूजन करें–

ॐ लं पृथिव्यात्मकं धूमावत्यै गंधं परिकल्पयामि।

ॐ हं आकाशात्मकं धूमावत्यै पुष्पं परिकल्पयामि।

ॐ यं वायव्यात्मकं धूमावत्यै धूपं परिकल्पयामि।

ॐ रं अग्न्यात्मकं धूमावत्यै दीपं परिकल्पयामि।

ॐ वं अमृतात्मकं धूमावत्यै नैवेद्यं परिकल्पयामि।

ॐ सं सौमात्मकं धूमावत्यै ताम्बूलं परिकल्पयामि।

इसके बाद तीन बार प्राणायाम करें तथा षडंगन्यास आदि सम्पन्न करके सप्ताक्षरी मन्त्र का 108 बार जप करें।

सप्ताक्षरी मन्त्र : धूं धूमावती स्वाहा।

इसका विनियोग निम्नवत् है–

विनियोग– अस्य श्री धूमावती मन्त्रस्य नारसिंह ऋषिः, पंक्तिश्छंदः, धूमावती (ज्येष्ठा) देवता, धूं बीजं, स्वाहा शक्तिः शत्रु निग्रहे जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास– इसके उपरान्त ऋष्यादिन्यास करें–

शिरसि नारसिंह ऋषये नमः।

मुखे पंक्तिश्छन्दसे नमः।

हृदि धूमावती देवतायै नमः।

धूं बीजाय नमः गुह्ये।

स्वाहा शक्तये नमः पादौ।

अंगन्यास– इसके बाद अंगन्यास करें–

ॐ धां हृदयाय नमः।

ॐ धीं शिरसे स्वाहा।

ॐ धूं शिखायै वषट्।

ॐ धैं कवचाय हुम्।

ॐ धौं नेत्रत्रयाय वौषट्।

ॐ धः अस्त्राय फट्।

करन्यास– इसके उपरान्त करन्यास करें–

ॐ धां अंगुष्ठाभ्यां नमः।

ॐ धीं तर्जनीभ्यां स्वाहा।

ॐ धूं मध्यमाभ्यां वषट्।

ॐ धैं अनामिकाभ्यां हुम्।

ॐ धौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्।

ॐ धः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

॥ ध्यान ॥

विवर्ण्णा चञ्चलां दुष्टा दीर्घां च मलिनाम्बरा।
विमुक्त-कुन्तलां रूक्षा विधवा विरल-द्विजा॥
काकध्वज - रथारूढा विलम्बित - पयोधरा।
शूर्प्पहस्ताति - रुक्षाक्षा धूतहस्ता वरान्विता॥
प्रवृद्ध - घोणा तु भृशंकुटिला कुटिलेक्षणा।
क्षुत्पिपासादिर्दता-नित्यम्-भयदा कलहास्पदा॥

अथवा

ध्यायेत् कालाभ्र-नीलां विकलित-वदनां काक-नासां विकर्णाम्।
संमार्जन्युल्क शूर्पै-र्युत मुसल-करां वक्रदन्तां विषास्याम्॥

ज्येष्ठां निर्वाणवेषां भ्रकुटित नयनां मुक्त - केशीमुदाराम्।
शुष्कोत्तुंगाति-तिर्यक्-स्तन-भर-युगलां निष्कृपां शत्रु-हन्त्रीम्॥

इसके बाद यन्त्रोद्धार एवं मन्त्रोद्धार करें—

यन्त्रोद्धार—

अनुक्तकल्पे यन्त्रन्तु लिखेत्पद्मन्दलाष्टकम्।
षट्कोणकर्णिकन्तत्र वेदद्वारोपशोभितम्॥

मन्त्रोद्धार—

दान्तौ सार्वीशबिन्द्वन्तबीजे धूमावती द्विठः।
धूमावतीमनुः प्रोक्तो वैरिनिग्रहकारकः॥

मन्त्र—धूं धूं धूमावती ठःठः। (अष्टाक्षर मन्त्र)

विनियोग— अस्य धूमावती मन्त्रस्य पिप्लाद ऋषिः, निवृच्छंदः, धूमावती देवता, धूं बीजं, स्वाहा शक्तिः, धूमावती कीलकं, शत्रुहननेपि (विनाशार्थे) जपे विनियोगः।

तन्त्रान्तर से यह मन्त्र इस प्रकार है—

मन्त्र— धूं धूं धूमावती स्वाहा।

इसका विनियोग निम्नवत् है—

विनियोग— अस्य धूमावती मन्त्रस्य पिप्लाद ऋषिः, निवृच्छंदः, ज्येष्ठा देवता, धूं बीजं, स्वाहा शक्तिः, धूमावती कीलकं ममाभीष्ट सिद्धयर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास— इसके उपरान्त ऋष्यादिन्यास करें—

शिरसि पिप्लादऋषये नमः।

मुखे निवृच्छन्दसे नमः।

हृदि धूमावत्यै नमः।

धूं बीजाय नमः गुह्ये।

स्वाहा शक्तये नमः पादौ।

अंगन्यास– इसके बाद अंगन्यास करें–

ॐ धां हृदयाय नमः।

ॐ धीं शिरसे स्वाहा।

ॐ धूं शिखायै वषट्।

ॐ धैं कवचाय हुम्।

ॐ धौं नेत्रत्रयाय वौषट्।

ॐ धः अस्त्राय फट्।

करन्यास– इसके उपरान्त करन्यास करें–

ॐ धां अंगुष्ठाभ्यां नमः।

ॐ धीं तर्जनीभ्यां स्वाहा।

ॐ धूं मध्यमाभ्यां वषट्।

ॐ धैं अनामिकाभ्यां हुम्।

ॐ धौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्।

ॐ धः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

उपर्युक्तानुसार न्यास सम्पन्न करने के उपरान्त भगवती धूमावती का ध्यान करें–

॥ ध्यान ॥

(1)

विवर्णा चञ्चला कृष्णा दीर्घा च मलिनाम्बरा।
विमुक्त-कुन्तला रूक्षा विधवा विरलद्विजा॥१॥

काकध्वज - रथारूढा विलम्बित - पयोधरा।
शूर्पहस्तातिरुक्षाक्षा धूतहस्ता वरान्विता॥२॥
प्रवृद्धघोणा तु भृशंकुटिला कुटिलेक्षणा।
क्षुत्पिपासार्दिता नित्यम्भयदा कलहास्पदा॥३॥

अथवा

(श्मशाने संस्थितां ध्यायेज्ज्येष्ठां वायस-संस्थिताम्) अर्थात् श्मशान में कौए पर विराजमान ज्येष्ठा देवी का ध्यान करना चाहिए।

(2)

अत्युच्चामलिनाम्बराखिलजनोद्वेगावहादुर्मना
रूक्षाक्षित्रितया विशालदशना सूर्योदरी चंचला।
प्रस्वेदाम्बुचिता-क्षुधाकुलतनुः कृष्णातिरूक्ष-प्रभा
ध्येया मुक्तकचा सदाप्रिय-कलिर्धूमावती मन्त्रिणा॥

(मन्त्रमहोदधि)

भावार्थ– अर्थात् जो बहुत लम्बी हैं, मैले-कुचैले वस्त्र धारण करने वाली जिस देवी के केवल दर्शन मात्र से ही मनुष्य उद्विग्न हो जाता है। खिन्न मन वाली जिस देवी के तीन रूखे अर्थात् क्रोधयुक्त नेत्र हैं, दांत बहुत बड़े-बड़े हैं, जिनका पेट सूर्य के समान बहुत बड़ा और गोल है, जिनका स्वभाव अति चंचल है, पसीने से लथपथ कृष्णवर्णा देवी के शरीर की कान्ति अत्यन्त रूक्ष है। भूख से व्याकुल सर्वदा कलहकारिणी, बिखरे केशों वाली ऐसी धूमावती देवी का ध्यान उनके साधक को करना चाहिए। (उपर्युक्त दोनों ध्यानों में से साधक कोई भी एक ध्यान कर सकते हैं।)

उपर्युक्तानुसार ध्यान करने के उपरान्त उक्त मन्त्र का एक लाख की संख्या में जप करें। फिर नियमानुसार हवन, तर्पण, मार्जन तथा ब्राह्मण भोजन करायें। होम में राई तथा नमक का प्रयोग करें।

नवमाक्षर मन्त्र– ॐ धूं धूं धूं धूमावती स्वाहा।

इस मन्त्र के **ऋषि स्कन्द, छन्द पंक्ति, देवता धूमिनी, बीज धूं** तथा **शक्ति स्वाहा, कीलकं ॐ** तथा **विनियोग "शत्रु क्षयार्थे"** हैं।

॥ ध्यान ॥

श्यामांगी रक्त-नयनां श्याम-वस्त्रोत्तरीयकां।
वामहस्ते शोधनं च दक्षहस्ते च शूर्पकम्॥
धृत्वा विकीर्ण केशांश्च धूलि-धूसर-विग्रहां।
लंबोष्ठीं शुभ्र - दशनां लम्बमान - पयोधराम्॥
संलग्न भ्रू-युग-युतां कटु-दंष्ट्रोष्ठ-वल्लभां।
कृसरस्तु कुलुत्थोत्थं भग्न-भाण्ड-तले स्थितम्॥
तिल-पिष्ट-समायुक्तं मुहुर्मुहुश्च भक्षितं।
महिषीश्रृंग ताटंकीं लम्बकर्णाति भीषणाम्॥

उपर्युक्तानुसार ध्यान करने के उपरान्त एक लाख मन्त्रों से पुरश्चरण करें, तद्रोपरान्त जप का दशांश अर्थात् दश हजार मन्त्रों से हवन तथा तर्पण, मार्जन एवं ब्राह्मण भोजन आदि नियमानुसार करें। हवन में राई तथा नमक का प्रयोग करें।

चतुर्दशाक्षर मन्त्र–धूं धूं धुर धुर धूमावती क्रों फट् स्वाहा।

विनियोग– इस मन्त्र के **ऋषि क्षपणक, छन्द गायत्री, देवता धूमावती, बीज धूं, शक्ति स्वाहा** तथा उच्चाटन हेतु **विनियोग** है। उच्चाटन के लिए इस मन्त्र का प्रयोग किया जाता है।

॥ ध्यान ॥

काकारूढाऽति कृष्णाभा भिन्नदन्ता विरागिणी,
मुक्तकेशां सुधूम्राक्षी क्षुत् - तृषार्ता रयातुरा।
चञ्चला चातिकामार्त्ता क्लिष्टा पुष्टा पिशंगिका,
मलिना श्रमणी रक्ता व्यक्त-गंधा विरोधिनी॥
धूत शूर्पाग्रहस्ता च ध्येया धूमावती परा॥

षडंगन्यास– धां, धीं, धूं, धैं, धौं, धः अर्थात् मूल मन्त्र के अनुसार करें।

पुरश्चरण में एक लाख जप करें।

पंचदशाक्षर मन्त्र–

1. **ॐ धूं धूमावति देवदत्तः धावति स्वाहा।** (देवदत्त के स्थान पर शत्रु के नाम का प्रयोग करें।)
2. **धूं धूं धूं धुरू धुरू धूमावति क्रों फट् स्वाहा।**

विनियोग– इस मन्त्र के **ऋषि क्षपणक, छन्द गायत्री, देवता धूमावती, बीज धूं, शक्ति स्वाहा** तथा उच्चाटन हेतु विनियोग है।

षडंगन्यास– धां, धीं, धूं, धैं, धौं, धः अर्थात् मूल मन्त्र के अनुसार करें।

॥ ध्यान ॥

काकारूढाऽति-कृष्णाभा भिन्न-दन्ता विरागिणी,

मुक्तकेशां सुधूम्राक्षी क्षुत् - तृषार्ता रयातुरा।

चञ्चला चातिकामार्त्ता क्लिष्टा पुष्टा पिशंगिका,

मलिना श्रमणी रक्ता व्यक्त-गंधा विरोधिनी॥

धूत शूर्पाग्रहस्ता च ध्येया धूमावती परा॥

उक्त मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप से सम्पन्न होता है।

धूमावती गायत्री मन्त्र–

1. **ॐ धूमावत्यै विद्महे संहारिण्यै धीमहि, तन्नो धूमा प्रचोदयात्।**
2. **धूं धूमावति विद्महे विवर्णा देवी धीमहि तन्नो घोरे प्रचोदयात्।**

षडंगन्यास–

ॐ धूमावत्यै हृदयाय नमः।

ॐ विद्महे शिरसे स्वाहा।

ॐ संहारिण्यै शिखायै वषट्।

ॐ धीमहि कवचाय हुम्।

ॐ तन्नो धूमा नेत्रत्रयाय वौषट्।

ॐ प्रचोदयादस्त्राय फट्।

इसी प्रकार करन्यास भी करना चाहिए।

शिव– भगवती धूमावती के शिव 'अघोर रुद्र' हैं, जिनका मन्त्र एवं विधान निम्नवत् है–

अघोरास्त्र मन्त्र– ह्रीं स्फुर स्फुर प्रस्फुर प्रस्फुर घोर-घोरतर तनु रूप चट चट प्रचट प्रचट कह कह वम वम बन्ध बन्ध घातय घातय हुं फट्।

विनियोग– शारदा तिलक के अनुसार इस मन्त्र के **ऋषि अघोर, छन्द त्रिष्टुप्, देवता अघोर रुद्र, हुं बीज** तथा **शक्ति ह्रीं** हैं।

॥ ध्यान ॥

सजल - घन - समाभं भीम - दंष्ट्रं त्रि - नेत्रं,
भुजंग - धरमघोरं रक्त - वस्त्रांग - रागाम्।
परशु - डमरू - खड्गान् खेटकं वाण - चापौ,
त्रिशिखि - नर - कपाले विभ्रतं भावयामि॥

इस अघोरास्त्र के पुरश्चरण में एक लाख की संख्या में जप करके घी मिले हुए सफेद तिलों से कुल जप का दशांश होम करना चाहिए।

॥ ज्येष्ठा लक्ष्मी का आर्थिक उन्नति हेतु विशिष्ट प्रयोग ॥

ज्येष्ठा लक्ष्मी मन्त्र– ऐं ह्रीं श्रीं ज्येष्ठालक्ष्मि स्वयंभुवे ह्रीं ज्येष्ठायै नमः।

सर्वप्रथम भगवती ज्येष्ठा लक्ष्मी का ध्यान करें–

॥ ध्यान ॥

उद्यद्‌भास्कर-सन्निभां स्मितमुखी रक्ताम्बरालेपना,
सत्कुम्भं धनभाजनं सृणिमथो पाशंकरैर्बिभ्रती।
पद्‌मस्था कमलेक्षणा दृढकुचा सौन्दर्यवारांनिधि-
र्ध्यातव्या सकलाभिलाष-फलदा श्रीज्येष्ठलक्ष्मीरियम्॥

भावार्थ– अर्थात् उगते हुए सूर्य के समान रक्त आभा वाली, प्रहसितमुखी, लाल वस्त्र तथा रक्त वर्ण के अंगरागों से विभूषित, हाथों में कलश तथा धन का पात्र लिये हुए, अंकुश एवं पाश को धारण किये हुए, कमल पर विराजित, कमल जैसे नेत्रों वाली, पीन स्तनों वाली, सौन्दर्य के समुद्रवत् अकथनीय सौन्दर्य वाली, अपने साधकों की समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाली श्री ज्येष्ठा लक्ष्मी का ध्यान करना चाहिए।

मानसोपचार पूजन– इसके बाद देवी का मानसोपचार पूजन करें–

ॐ लं पृथिव्यात्मकं ज्येष्ठा लक्ष्म्यै गंधं परिकल्पयामि।
ॐ हं आकाशात्मकं ज्येष्ठा लक्ष्म्यै पुष्पं परिकल्पयामि।
ॐ यं वायव्यात्मकं ज्येष्ठा लक्ष्म्यै धूपं परिकल्पयामि।
ॐ रं अग्न्यात्मकं ज्येष्ठा लक्ष्म्यै दीपं परिकल्पयामि।
ॐ वं अमृतात्मकं ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नैवेद्यं परिकल्पयामि।
ॐ सं सौमात्मकं ज्येष्ठा लक्ष्म्यै ताम्बूलं परिकल्पयामि।

इसके बाद तीन बार प्राणायाम करें तथा षडंगन्यास आदि सम्पन्न करके मूल मन्त्र का 108 बार जप करें।

विनियोग– अस्य ज्येष्ठालक्ष्मि मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषि, अष्टिच्छन्दः, ज्येष्ठा-लक्ष्मी-देंवता, ह्रीं बीजं, श्रीं शक्तिः, ममाभीष्ट सिद्धयर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास–

ब्रह्म ऋषये नमः शिरसि।

अष्टि छन्दसे नमो मुखे।

ज्येष्ठा लक्ष्मी देवतायै नमः हृदि।

ह्रीं बीजाय नमः लिंगे।

श्रीं शक्तये नमः पादयोः।

विनियोगाय नमः सर्वांगे।

इसके उपरान्त करन्यास तथा अंगन्यास सम्पन्न करें–

मन्त्र	करन्यास	अंगन्यास
ऐं ह्रीं श्रीं	अंगुष्ठाभ्यां नमः।	हृदयाय नमः।
ज्येष्ठालक्ष्मि	तर्जनीभ्यां नमः।	शिरसे स्वाहा।
स्वयंभुवे	मध्यमाभ्यां नमः।	शिखायै वषट्।
ह्रीं	अनामिकाभ्यां नमः।	कवचाय हुम्।
ज्येष्ठायै	कनिष्ठिकाभ्यां नमः।	नेत्रत्रयाय वौषट्।
नमः	करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।	अस्त्राय फट्।

इस प्रकार न्यासादि सम्पन्न करके अर्घ्य-स्थापना करें। त्रिकोण, वृत्त, षट्कोण तथा चतुरस्र मण्डल बनाकर उसके मध्य में 'इ' अंकित करें तथा मूल मन्त्र से षडंग पूजन करें। चतुरस्र में : पूर्व में– पूर्णगिरि पीठाय नमः, दक्षिण में– उड्डीयान पीठाय नमः, पश्चिम

में— कामरूप पीठाय नमः तथा उत्तर में— जालन्धर पीठाय नमः और मध्य में— "ॐ आधार शक्तये नमः" बोलकर पूजन करें। यन्त्र के मध्य में सामान्य अर्घ्य-स्थापन करें। अर्घ्य-स्थापना करते हुए मूल मन्त्र का एक बार उच्चारण करें। तीर्थों का जल में आवाहन करते हुए निम्नलिखित निवेदन करें—

गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु॥
ॐ ब्रह्माण्डोदर-तीर्थानि करैस्पृष्टानि ते रवे।
तेन सत्येन मे देव तीर्थन्देहि दिवाकर॥

इस प्रकार तीर्थों का आवाहन करते हुए अंकुश मुद्रा का प्रदर्शन करें। पुष्प अर्पण करते हुए गालिनी मुद्रा दिखायें तथा धेनु मुद्रा से जल का अमृतीकरण करें। इष्टदेवता का ध्यान करके सकलीकरण करते हुए शंख मुद्रा का प्रदर्शन करें। फिर षट्कोण में षडंग-पूजन करते हुए पूर्व में उल्लिखित देवी धूमावती का ध्यान करें। आवाहन मुद्रा का प्रदर्शन करते हुए भगवती का आवाहन करें। इसके उपरान्त देवी का यथार्थ पूजन करें।

नोट— यहां हमने साधकों की आर्थिक-समृद्धि हेतु पूजन-श्लोकों के साथ 'श्रीसूक्त' का भी समन्वय किया है, जिससे भगवती धूमावती का पूजन लक्ष्मी-रूप में भी सम्पन्न हो जाता है। अर्थप्राप्ति और भगवती की प्रसन्नता हेतु यह एक उत्तम विधान है। परन्तु यह विधान तभी ग्राह्य है, जब साधक सामान्य रूप से इनका पूजन लक्ष्मीस्वरूपा के रूप में करें। यदि शत्रुनाश के लिए पूजन करना हो तो श्रीसूक्त का समन्वय न करके इसके स्थान पर भगवती काली का पूजा-विधान गृहण करना होगा।

जब भगवती धूमावती को हम लक्ष्मीरूप में पूजते हैं तो उस समय ध्यान मन्त्र में इनका स्वरूप परिवर्तित हो जाता है। तब ये कुंभ धनपात्र युक्त कमल पर विराजित रहती हैं। इसलिए साधक को उस समय यह भावना करनी चाहिए कि उसके समस्त दुख, क्लेश, चिन्ता, दरिद्रता उसके घर से हमेशा के लिए विदा हो रहे हैं और लक्ष्मी जी उसे धन-धान्य, स्वर्ण मुद्रायें तथा अभय प्रदान कर रही हैं। **इस स्वरूप में भाद्रपद शुक्ल पक्ष की अष्टमी तिथी-ज्येष्ठा नक्षत्र में इनकी पूजा का विशेष महत्व है, जो साधक को धन-धान्य और समृद्धि से परिपूर्ण करता है।** इस स्वरूप में उनकी आराधना निम्नांकित मन्त्र जपते हुए करनी चाहिए, यथा–

ऐं ह्रीं श्रीं ज्येष्ठालक्ष्मि स्वयंभुवे ह्रीं ज्येष्ठायै नमः।

पूजन-विधि– सर्वप्रथम भगवती धूमावती का आवाहन करें–

आवाहन–

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्ण-रजत-स्रजाम्।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो मऽआवह॥
आत्मसंस्थां प्रजां शुद्धां त्वामहं परमेश्वरीम्।
अरण्यामिव - हव्याशं - मूर्तिमावाहयाम्यहम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः आवाहनं समर्पयामि" कहकर 'आवाहिनी मुद्रा' का प्रदर्शन करें।

आसन– हाथ में छः पुष्प लेकर निम्नांकित श्लोक-पाठ करें–

तां मऽआवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्॥

सर्वान्तर्यामिनि देवी सर्वबीजमये शुभे।
स्वात्मस्थमपरं शुद्धमासनं कल्पयाम्हम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः आसनं समर्पयामि" बोलकर भगवती के समक्ष 'स्थापिनी मुद्रा' का प्रदर्शन करें। मानसिक रूप से उन्हें आसन दें।

सान्निध्य–

अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्ति-नाद-प्रबोधिनीम्।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम्॥
अनन्या तव देवेशि मूर्त्ति-शक्तिरियं प्रभो।
सान्निध्यं कुरु तस्यां त्वं भक्तानुग्रह-तत्परे॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः श्री धूमावत्यै इह सन्निधेहि सन्निधेहि" बोलकर भगवती के समक्ष 'सन्निधापिनी मुद्रा' का प्रदर्शन करें।

पाद्य–

कां सोऽस्मिता हिरण्य - प्रकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्।
पद्मे स्थितां पद्म-वर्णा तामिहोपह्वये श्रियम्॥
गंगादि - सर्व - तीर्थेभ्यो मया प्रार्थनयाहृतम्।
तोयमेतत्सुख - स्पर्शं पाद्यार्थं प्रति - गृह्यताम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः पाद्यं समर्पयामि" बोलकर भगवती को अर्घ्य अर्पित करें। फिर "श्री धूमावत्यै इह सन्निरुद्धा भव, सन्निरुद्धा भव" बोलकर 'सन्निरोधिनी मुद्रा' का प्रदर्शन करें। (अर्घ्य में चन्दन, पीतपुष्प, अक्षत्, पीली सरसों व गंगाजल होते हैं।)

अर्घ्य–

चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्।
तां पद्मनेमिं शरणं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणोमि॥
गन्ध-पुष्पाक्षतैर्युक्तमर्घ्यं सम्पादितं मया।
गृहाण त्वं महादेवी! प्रसन्ना भव सर्वदा॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः अर्घ्यं समर्पयामि" बोलकर भगवती को अर्घ्य अर्पित करें।

आचमन– भगवती को कर्पूर मिला जल आचमन के लिए प्रदान करें। उसमें जायफल, लौंग तथा कंकोल का चूर्ण भी मिलायें–

आदित्य वर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः।
तस्या फलानि तपसा नुदन्तु या अंतरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः॥
कर्पूरेण सुगन्धेन वासितं स्वादु शीतलम्।
तोयमाचमनीयार्थं गृहाण परमेश्वरी॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः आचमनं समर्पयामि।"

स्नान– गंगाजल में केसर व गोरोचन मिलायें तथा मन्त्र पढ़कर भगवती को प्रदान करें–

उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह।
प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे॥
मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्व - पापहरं शुभम्।
तदिदं कल्पितं देवि! स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः स्नानं समर्पयामि।"

दुग्ध स्नान– गाय के दूध में केसर मिलाकर भगवती को स्नानार्थ प्रदान करें–

क्षुप्तिपासामलां ज्येष्ठां अलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्।
अभूतिमसमृद्धि च सर्वां निर्णुद मे गृहात्॥
कामधेनु समुत्पन्नं सर्वेषां जीवनं परम्।
पावनं या हेतुश्च पयः स्नानार्थमर्पितम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः दुग्धं स्नानं समर्पयामि।"

दधि-स्नान– गाय के दूध से बनी दही से भगवती को स्नान करायें–

पयसस्तु समुद्रभूतं मधुराम्लं शशीप्रभाम्।
मयानीतं महादेवि! स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः दधिस्नानं समर्पयामि।"

घृत-स्नान– गाय के दूध से बने घी से भगवती को स्नान करायें–

नवनीत समुत्पन्नं सर्वसंतोषकारकम्।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः घृत स्नानं समर्पयामि।"

मधु स्नान– शुद्ध शहद से भगवती को स्नान करायें–

पुष्परेणु समुत्पन्नं सुस्वादु मधुरं मधु।
तेजः पुष्टि समायुक्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः मधुस्नानं समर्पयामि।"

शर्करा स्नान–

इक्षुसार समुद्‌भूतं शर्करां पुष्टिदां शुभाम्।
मलापहारिकां दिव्यां स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः शर्करा स्नानं समर्पयामि।"

पञ्चामृत स्नान–

पयोदधि घृतं चैव मधुं च शर्करायुतम्।
पञ्चामृतं मयाऽऽनीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः पञ्चामृत स्नानं समर्पयामि।" (अलग पात्र में रखे पञ्चामृत से स्नान करायें।)

गंधोदक स्नान–

मलयाचल सम्भूतं चन्दनागरूमिश्रितम्।
सलिलं देवदेवेशि शुद्ध स्नानाय गृह्यताम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः गंधोदक स्नानं समर्पयामि।" (गंध मिला जल अर्पित करें।)

शुद्धोदक स्नान–

शुद्धं यत् सलिलं दिव्यं गंगाजलसमं स्मृतम्।
समर्पितं मया भक्त्या स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।" (शुद्ध जल से स्नान करायें।)

वस्त्र तथा उपवस्त्र–

पट्टकूलयुगं देवि! कञ्चुकेन समन्वितम्।
परिधेहि कृपां कृत्वा मातः श्री धूमावती॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः वस्त्रं-उपवस्त्रं समर्पयामि।"

गंध–

गंधद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्॥
श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गंधाढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं च देवेशि! चन्दनं प्रतिगृह्यताम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः गंधं समर्पयामि।" (भगवती को चन्दन अर्पित करें।)

सौभाग्यसूत्र–

सौभाग्यसूत्रं वरदे सुवर्णमणिसंयुतम्।
कण्ठे बंधनामि देवेशि! सौभाग्यं देहि मे सदा॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः सौभाग्यसूत्रं समर्पयामि।" (इस मन्त्र से महामाया को सौभाग्यसूत्र अर्पित करें।)

अक्षत्– हल्दी से रंगे अक्षत्, जो संख्या में सौ से अधिक हों, भगवती को समर्पित करें–

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यशीमहि।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीःश्रयतां यशः॥
अक्षतान् निर्मलान् शुद्धान् मुक्ताफल समन्वितान्।
गृहाणेमान् महादेवि! देहि मे निर्मलां धियम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः अक्षतान् समर्पयामि।"

हरिद्रा–

हरिद्रारञ्जिता देवि! सुखसौभाग्यदायिनी।
तस्मात्त्वां पूजयाम्यत्र दुःख शान्ति प्रयच्छ मे॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः हरिद्रां समर्पयामि।" (बोलकर भगवती

को हरिद्रा-चूर्ण अर्पित करें।)

कुंकुम–

कुंकुमं कान्तिदं दिव्यं कामिनीकामसंभवम्।
कुंकुमेनार्चिते देवि! प्रसीद धूमावती!॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः कुंकुमं (रोली) समर्पयामि।"

सिंदूर–

सिंदूरमरुणाभासं जपा-कुसुम-सन्निभम्।
पूजिताऽसि मया देवि! प्रसीद धूमावति!॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः सिंदूरं समर्पयामि।"

कज्जल–

चक्षुर्भ्यां कज्जलं रम्यं सुभगे! शान्तिकारके!।
कर्पूरज्योतिरूत्पन्नं गृहाण परमेश्वरी!॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः कज्जलं (काजल) समर्पयामि।"

पुष्प-पुष्पमाला–

कर्दमेन प्रजाभूता मयि सम्भव कर्दम।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम्॥
मंदार-परिजातादि-पाटल-केतकानि च।
जाती-चम्पक पुष्पाणि गृहाणेमानि शोभने॥
पद्मशंखजपुष्पादि शतपत्रैर्विचित्रिताम्।
पुष्पमालां प्रयच्छामि ते श्री धूमावत्यै! शिवे!॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः पुष्पं पुष्पमालां समर्पयामि।"

धूप–

आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे।
नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले॥
वनस्पति-रसोद्-भूतो गन्धाढ्यो गन्धमुत्तमः।
आघ्रेय सर्व-देवानां धूपोऽयं प्रति-ग्रह्यताम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः धूपमाघ्रपयामि।" (इससे भगवती को धूप दें।)

दीप–

सरसिजनिलये सरोज-हस्ते धवल-तरांशुक-गन्धमाल्य शोभे।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूति करे प्रसीद् मह्यम्॥
आज्यं न वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया।
दीपं गृहाण देवेशि! त्रैलोक्यतिमिरापहम्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः दीपं दर्शयामि।"

नैवेद्य तथा ऋतुफल–

आर्द्रां पुष्करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्।
सूर्यां हिरणमयीं लक्ष्मीं जातवेदो मआवह॥
अन्नं चतुर्विधं स्वादु:रसैः षड्भिः समन्वितम्।
नैवेद्यं गृह्यतां देवि! भक्ति मे ह्यचलां कुरु॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः नैवेद्यं ऋतुफलं च निवेदयामि।"

ताम्बूल–

तां माऽआवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।

यस्यां हिरण्यं प्रभूतिं गावो दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम्॥

एलालवंगकस्तूरीकर्पूरैः पुष्पवासिताम्।

वीटीकां मुखवासार्थमर्पयामि सुरेश्वरि!॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः मुखवासार्थे ताम्बूलं समर्पयामि।" (भगवती को पान का बीड़ा अर्पण करें।)

दक्षिणा–

यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम्।

सूक्तं पंचदर्शं च श्रीकामः सततं जपेत्॥

पूजाफल समृद्ध्यर्थं तवाग्रे स्वर्णमीश्वरि।

स्थापितं ते च प्रीत्यर्थं पूर्णान् कुरु मनोरथान्॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।" (इस मन्त्र से भगवती को यथाशक्ति द्रव्य दक्षिणा प्रदान करें।)

पुष्पाञ्जलि–

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।

ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥

नाना सुगन्धि पुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च।

पुष्पांजलिर्मया दत्तो गृहाण परमेश्वरि!॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः मन्त्र पुष्पाञ्जलि समर्पयामि।"

नीराजन–

इसके उपरान्त भगवती की आरती करें, जो पुस्तक के अन्त में दी गयी है।

प्रदक्षिणा–

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणे पदे पदे॥

"श्री ज्येष्ठा लक्ष्म्यै नमः प्रदक्षिणां समर्पयामि।" (इस मन्त्र से भगवती की परिक्रमा करें।)

॥ प्रार्थना ॥

उपर्युक्त कृत्यों के उपरान्त भगवती से हृदय की गहराइयों से प्रार्थना करें–

ॐ यद् दत्तं भक्तिमात्रेण पत्रं पुष्पं फलं जलम्।
निवेदितं च नैवेद्यं तद् गृहाणाऽनुकम्पया॥
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजामर्चां न जानामि त्वं गतिः परमेश्वरि॥
कर्मणा मनसा वाचा त्वत्तो नान्या गतिर्मम।
अन्तश्चारेण भूतानां दृष्टि त्वं परमेश्वरि॥
मातर्योनिसहस्रेषु येषु येषु व्रजाम्यहम्।
तेषु तेष्वचला भक्तिरव्ययाऽस्तु सदा त्वयि॥
देवी दात्री च भोक्त्री च देवी सर्वमिदं जगत्।
देवी जयति सर्वत्र या देवी साऽहमेव च॥

"ॐ रश्मिरूपा महेशान्याश्चात्र पूजितदेवताः।
श्वेताम्बरांगे लीनास्ताः सन्तु सर्वं सुखावहा।।
ॐ तिष्ठ तिष्ठ परंस्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि।
यत्र ब्रह्मादयो देवाः सुरास्तिष्ठन्ति मे हृदि।।
यद्क्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद् भवेत्।
तत् सर्वं क्षम्यतां देवी प्रसीद परमेश्वरि!।।"

इस प्रकार भगवती से क्षमा-प्रार्थना करने के उपरान्त आचमनी से जल छोड़ते हुए– **अनया पूजया श्री महामाया ज्येष्ठा लक्ष्म्यै प्रियताम्।** ॐ तत्सत् बोलकर पीठ पर महागौरी का पूजन करने के लिए उद्यत हों। सर्वप्रथम पीठादि पर बनाये गये सर्वतोभद्र मण्डल में मण्डूक आदि से लेकर परतत्वान्त पीठ देवताओं को समर्पित करें–

।। पीठ-पूजन ।।

ॐ मं मण्डूकादि परतत्त्वान्त पीठ देवताभ्यो नमः।

इसके उपरान्त पूर्वादि क्रम से पीठ की नवशक्तियों का पूजन करें–

1. **ॐ लोहिताक्ष्यै नमः।** (पूर्व में)
2. **ॐ विरूपायै नमः।** (आग्नेय में)
3. **ॐ कराल्यै नमः।** (दक्षिण में)
4. **ॐ नीललोहितायै नमः।** (नैर्ऋत्य में)
5. **ॐ समदायै नमः।** (पश्चिम में)
6. **ॐ वारुण्यै नमः।** (वायव्य में)
7. **ॐ पुष्टयै नमः।** (उत्तर में)

8. **ॐ अमोघायै नमः।** (ईशान में)

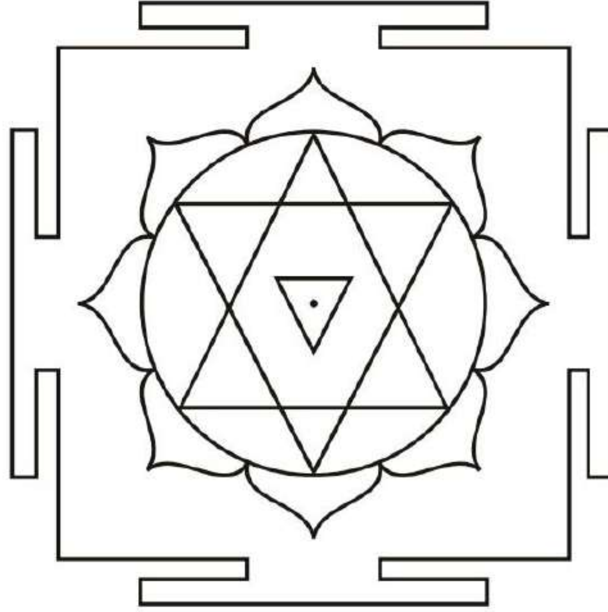
9. **ॐ विश्वमोहिन्यै नमः।** (मध्य में)

इनका पूजन आठ दिशाओं में तथा मध्य में करना चाहिए। तद्ोपरान्त गायत्री मन्त्र से आसन देना चाहिए।

गायत्री मन्त्र–

ॐ रक्त ज्येष्ठायै विद्महे नील ज्येष्ठायै धीमहि।

तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात्।



धूमावती यन्त्रम्

॥ आवरण-पूजा ॥

इसके उपरान्त यथोपचार देवी का पूजन करके पुष्पांजलि प्रदान करके उनकी अनुमति लेकर आवरण पूजा करनी चाहिए। आवरण पूजा में चतुर्थी से आवाहन कर नामावली के उपरान्त प्रथम से गंधाक्षत, पुष्प आदि से पूजन करते हुए **पादुकां पूजयामि तर्पयामि**

नमः बोलते हुए तर्पण करें।

प्रथमावरणम्– (षट्कोण में)

ऐं ह्रीं श्रीं हृदयाय नमः। हृदय श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। (आग्नेय कोण में)

ज्येष्ठा लक्ष्मि शिरसे स्वाहा। शिरः श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। (नैर्ऋत्य कोण में)

स्वयंभुवे शिखायै वषट्। शिखा श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। (वायव्य कोण में)

ह्रीं कवचाय हुम्। कवच श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। (ईशान कोण में)

ज्येष्ठायै नेत्रत्रयाय वौषट्। नेत्र श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। (अग्र भाग में)

नमः अस्त्राय फट्। अस्त्र श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। (देवी के पश्चिम में)

इस प्रकार पूजन करने के उपरान्त निम्नलिखित श्लोक पढ़ते हुए पुष्पांजलि अर्पित करें–

अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागत वत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्॥

पूजिताः तर्पिताः सन्तु बोलकर आचमनी से जल छोड़ें।

द्वितीयावरणम्– (अष्टदल में) पूर्वादि क्रम से–

ॐ ब्राह्मयै नमः। ब्राह्मी श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ माहेश्वर्यै नमः। माहेश्वरी श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ कौमार्यै नमः। कौमारी श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ वैष्णव्यै नमः। वैष्णवी श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ वाराह्यै नमः। वाराही श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ इन्द्राण्यै नमः। इन्द्राणी श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ चामुण्डायै नमः। चामुण्डा श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ महालक्ष्म्यै नमः। महालक्ष्मी श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागत वत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं द्वितीयावरणार्चनम्॥

पूजिताः तर्पिताः सन्तु बोलकर जल छोड़ें।

तृतीयावरणम्– इसके बाद भूपुर में पूर्वादि क्रम में इन्द्र आदि दशों दिक्पालों का पूजन करें –

ॐ इन्द्राय नमः। इन्द्र श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ अग्नये नमः। अग्नि श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ यमाय नमः। यम श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ निर्ऋत्ये नमः। निर्ऋति श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ वरुणाय नमः। वरुण श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ वायवे नमः। वायु श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ सोमाय नमः। सोम श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ ईशानाय नमः। ईशान श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ ब्रह्मणे नमः। ब्रह्म श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ अनंताय नमः। अनंत श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

उपर्युक्त विधि से दशों दिक्पालों की पूजा करने के उपरान्त हाथ में पुष्प लेकर निम्नांकित मन्त्र का उच्चारण करने के उपरान्त मूल मन्त्र का उच्चारण करें और पुष्पांजलि अर्पित करें–

अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागत वत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं तृतीयावरणार्चनम्॥

विशेषार्घ्य में से जल जल छोड़कर **"पूजितास्तर्पिताः सन्तु"** बोलें।

चतुर्थावरणम्– दशों दिक्पालों का पूजन करने के उपरान्त भूपुर में ही उनके समीप उनके आयुधों का पूजन करें, यथा–

ॐ वज्राय नमः। वज्र श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ शक्त्ये नमः। शक्ति श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ दण्डाय नमः। दण्ड श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ खड्गाय नमः। खड्ग श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ पाशाय नमः। पाश श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ अंकुशाय नमः। अंकुश श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ गदायै नमः। गदा श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ त्रिशूलाय नमः। त्रिशूल श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ पद्माय नमः। पद्म श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ चक्राय नमः। चक्र श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

उपर्युक्त विधि से दशों दिक्पालों के समक्ष उनके आयुधों की पूजा करने के उपरान्त हाथ में पुष्प लेकर निम्नांकित मन्त्र का उच्चारण करने के उपरान्त मूल मन्त्र का उच्चारण करें और पुष्पांजलि अर्पित करें–

अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागत वत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्चनम्॥

विशेषार्घ्य में से जल जल छोड़कर **"पूजितास्तर्पिताः सन्तु"** बोलें।

इसके उपरान्त धूप-दीप-नैवेद्य आदि का अर्पण करें और जप करके बलि प्रदान करें। मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप से होता है।



अध्याय 6

श्री धूमावती शाबर मन्त्र

यह भगवती धूमावती का विशिष्ट शाबर मन्त्र है, जिसकी साधना विशेष रूप से नवरात्रि अथवा किसी भी ग्रहण काल में करने का विधान है। इस साधना को सम्पन्न करने के लिए किसी भी नवरात्रि का चयन करें। साधना 7 दिन की है और आठवें दिन अर्थात् अष्टमी को इसका हवन किया जाता है। हवन के अन्त में एक पके हुए अनार की बलि प्रदान करें। 7 दिन तक नित्य-प्रति काली हकीक माला से मन्त्र का जप करें। रात्रि में 9 बजे के ही साधना शुरू करनी है। साधना काल में चमेली के तेल का दीपक जलायें। यह दीपक साधना पूरी होने तक बुझना नहीं चाहिए। चाहे तो अखंड दीपक भी प्रज्ज्वलित कर सकते हैं। आसन भी काला ही प्रयोग किया जायेगा।

॥ मन्त्र-1 ॥

ओम नमो आदेश गुरुजी को, धूमावती माई भूक से व्याकुल ग्रहण करो शत्रु मेरे, शिव की माया धूम्र का शरीर हरो कष्ट मेरे, दुहाई महादेव की॥

यह मन्त्र अत्यन्त ही तीव्र है। अष्टमी के दिन हवन किया

जायेगा जिसमें 108 आहुतियां केवल घी की ही दी जायेगीं। इस प्रयोग को करने से साधक को सभी प्रकार के कष्टों से मुक्ति मिल जायेगी।

॥ मन्त्र–2 ॥

भगवती धूमावती का एक अन्य शाबर मन्त्र भी उपलब्ध है। जब कोई व्यक्ति न्यायिक प्रक्रिया में फंस गया हो, शत्रु बहुत ही विकट और शक्तिशाली हों, और उनसे आपको हानि होने की पूरी सम्भावना हो केवल तब ही इस मन्त्र का प्रयोग किया जाना चाहिए। केवल परीक्षण के लिए अथवा बिना किसी कारण के ही किसी को हानि पहुंचाने के लिए ऐसे प्रयोग कदापि साधक को नहीं करने चाहिए।

यह प्रयोग 40 दिन का है। साधना रात्रि में 10 बजे आरम्भ करने का नियम है। आसन के लिए काला कपड़ा तथा काले हकीक अथवा रुद्राक्ष की माला का प्रयोग करें। सरसों के तेल का दीपक जलायें। दीपक यदि अखंड जलायें तो बहुत अच्छा है अन्यथा प्रतिदिन केवल साधना काल के लिए भी जलाया जा सकता है। स्थान एकान्त हो जहां किसी प्रकार का कोई व्यवधान उपस्थित न हो। किसी की उपस्थिति का अनुभव हो तो डरे नहीं और निर्भय होकर अपने जप करते रहें। दक्षिण दिशा की ओर मुंह करके जप करें। प्रयोग किसी मंगलवार अथवा शनिवार से आरम्भ करें। प्रतिदिन 11 माला जप करें। 41वें दिन 11 माला का हवन कर दें।

॥ मन्त्र–3 ॥

ॐ काग दत्तो बिकोवा, धड़ित धड़ धड़ात। ध्यानमान भवानी दैत्यनाम, देहनाशन तोड्यन्ति पिशाचा त्रिहाप त्रिहाप हसंती। खड़त खद खदात। त्रिरोष मम धूमावती। नौ नाथ

चौरासी सिद्धों के बीच बैठकर धूमावती मन्त्र स्वाहा॥

प्रतिदिन साधना पूर्ण कर लेने के उपरान्त भगवती से निम्नवत् निवेदन अवश्य करें—

हे माता! मेरे "अमुक" शत्रु के घर में निवास कीजिए।

'अमुक' शब्द के स्थान पर शत्रु का नाम लें। यह प्रयोग करने से शत्रु के घर में बात-बात पर लड़ाई-झगड़ा आरम्भ हो जायेगा और स्थिति यहां तक हो जायेगी कि घर की उस कलह से परेशान होकर शत्रु का उच्चाटन हो जायेगा और वह अपना स्थान छोड़कर अन्यत्र कहीं चला जायेगा।

॥ मन्त्र-4 ॥

ॐ पाताल निरंजन निराकार, आकाश मण्डल धुन्धुकार, आकाश दिशा से कौन आई, कौन रथ, कौन असवार? थरै धरत्री थरै आकाश, विधवा रूप लम्बे हाथ। लम्बी नाक कुटिल नेत्र, दुष्टा स्वभाव। डमरू बाजे भद्रकाली, क्लेश कलह कालरात्रि। डंका डंकिनी काल किट किटा हास्य करी। जीव रक्षन्ते, जीव भक्षन्ते। जाया जीया आकाश तेरा होये। धुमावंतीपुरी में वास, ना होती देवी ना देव, तहां ना होती पूजा ना पाती। तहां ना होती जात ना जाती। तब आये श्री शम्भु यती गुरु गोरक्षनाथ। आप भई अतीत। ॐ धूं धूं धूमावती फट् स्वाहा॥

॥ मन्त्र-5 ॥

धूम धूम धूमावती, मसान में रहती, मरघट जगाती, सूप छानती, जोगनियों के संग नाचती, डाकनियों के संग मांस

खाती, मेरे बैरी अमुक (शत्रु का नाम लें) का भी तु मांस खायै, कलेजा खायै, लहू पिए, प्यास बुझाये, मेरे बैरी को तड़पा तड़पा मारै, ना मारै तो तोहुं को माता पारबती के सिन्दूर की दुहाई। कनीपा औघड़ की आन॥

विधि– तिनकों से बना हुआ एक छोटा सा सूप (छाज), थोड़ी शराब तथा बकरे के कच्चे मांस का टुकड़ा लेकर श्मशान भूमि में जायें। अमावस्या की अर्धरात्रि में जलती चिता के समक्ष बैठकर दश माला उक्त मन्त्र का जप करें। फिर एक प्रेतवस्त्र (कफन) का टुकड़ा प्राप्त करके श्मशान भस्म में थोड़ी सी शराब मिलाकर स्याही बना लें। फिर उस स्याही से अपनी तर्जनी उंगली से उपर्युक्त मन्त्र को उस कफन के टुकड़े पर लिखें। मन्त्र में जहां "अमुक" लिखा है, वहां शत्रु का नाम लिखें। फिर उस कपड़े की चार तह बनाकर बीच में मांस का टुकड़ा रखें। शेष मांस तथा शराब और कफन को सूप में रखकर चिता में उनकी आहुति दें तथा कफन की भस्म को लाकर शत्रु के घर में डाल देने से शत्रु का नाश हो जाता है।



अध्याय 7

हवन

मन्त्र के पुरश्चरण का एक आवश्यक अंग हवन भी है। नियत संख्या में मन्त्र-जप कर लेने के उपरान्त जप की कुल संख्या के दशांश मन्त्रों से हवन करने का विधान है। मन्त्र के साथ-साथ हवन करने का फल अलग से प्राप्त होता है। नियत संख्या में मन्त्र-जप कर लेने के उपरान्त यह भी विधान है कि यदि साधक हवन करने में अक्षम हो तो वह जप-संख्या के दशांश हवन करने के स्थान पर उससे दो गुनी संख्या में जप कर सकता है। यह भी कहा गया है कि हवन समय में मन्त्र वीर्य का काम करता है तथा हवन-सामग्री में प्रयुक्त पदार्थ उसके वंशाणु के समान कार्य करते हैं, जिसके फलस्वरूप कर्मफल की प्राप्ति होती है और साधक का अभीष्ट सिद्ध होता है। इसलिए मन्त्र-सिद्धि के साथ उसके फल की प्राप्ति हेतु निर्दिष्ट द्रव्यों से हवन करना आवश्यक है। **"मन्त्रैश्च मन्त्र-सिद्धिस्तु जप-होमार्चनाद् भवेत्।"**

॥ अग्नि-जिह्वा-आवाहन ॥

यज्ञ कर्म करते समय कामना के अनुसार ही अग्नि-जिह्वा का

आवाहन किया जाता है। काम्य कर्म में 'राजसी जिह्वा', मारणादि क्रूर कर्मों में 'तामसी जिह्वा' तथा योग-कर्मों में 'सात्विक जिह्वा' का आवाहन किया जाता है।

राजसी जिह्वा– पद्मरागा, सुवर्णा, भद्रलोहिता, श्वेता, धूमिनी एवं कालिका।

तामसी जिह्वा– विश्वमूर्ति, स्फूर्लिंगिनी, धूम्रवर्णा, मनोजवा, लोहिता, कराला एवं काली।

सात्विक जिह्वा– हिरण्या, गगना, रक्ता, कृष्णा, सुप्रभा, बहरूपा एवं अतिरिक्ता।

आकर्षण-कार्यों में 'हिरण्या', स्तम्भन-कार्यों में 'गगना', विद्वेषण-कार्य में 'रक्ता', मारणादि में 'कृष्णा', शान्ति-कर्मों में 'सुप्रभा', उच्चाटन में 'अतिरिक्ता' तथा धनलाभ के लिए 'बहुरूपा' नामक जिह्वा का आवाहन करके आहुति देनी चाहिए। **यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि होम करते समय अग्नि का वास पृथ्वी पर होना चाहिए।**

अग्नि-नाम– शान्ति-कार्यों में 'वरदा', पूर्णाहुति में 'मृडा', पुष्टि-कार्यों में 'बलद', अभिचार-कर्मों में 'क्रोध', वशीकरण में 'कामद', बलिदान में 'चूड़क', लक्ष होम में 'वह्नि' नामक अग्नि का आवाहन किया जाता है।

दिशा-विधान– शान्ति, पुष्टि कर्मों में पूर्वमुख, आकर्षण कार्य में उत्तरमुख होकर वायुकोणस्थ कुण्ड में हवन करना चाहिए। विद्वेषण में नैर्ऋत्यमुखी होकर वायुकोणस्थ कुण्ड में होम करें। मारण-कर्म में दक्षिणाभिमुख होकर दक्षिण दिशा में स्थित कुण्ड में होम करें। ग्रह, भूत आदि निवारण-कर्म में वायुकोण की ओर मुख करके षट्कोण

कुण्ड में हवन करना चाहिए।

॥ हवन-कुण्ड-विधान ॥

अलग-अलग फल-प्राप्ति के लिए अलग-अलग आकृति के कुण्डों में होम करने का विधान है, यथा–

वशीकरण में	**–**	**चौकोर कुण्ड**
आकर्षण में	**–**	**त्रिकोण कुण्ड**
उच्चाटन में	**–**	**त्रिकोण कुण्ड**
मारण में	**–**	**षट्कोण कुण्ड में होम करना चाहिए।**

लक्ष्मी-प्राप्ति, शान्ति, पुष्टि, विद्या-प्राप्ति, विघ्न-निवारण हेतु चतुरस्र कुण्ड में होम करना चाहिए। वशीकरण, सम्मोहन, व्यापार, अर्थ-प्राप्ति, कीर्ति-वृद्धि के लिए त्रिकोणाकार कुण्ड में आहुति देने का विधान है। इसके अतिरिक्त विद्वेषण-कर्म में वर्तुलाकार एवं उच्चाटन कर्म के लिए षट्कोण कुण्ड का निर्माण करना चाहिए। रक्षा-कर्म में चतुरस्र कुण्ड में हवन करें। हवन के लिए कुण्ड अथवा स्थण्डिल आवश्यक है–

उत्तमं कुण्ड-होमं च स्थण्डिलं चैव मध्यमम्।
स्थण्डिलेन विना होमं निष्फलं भवति ध्रुवम्॥

॥ होम-प्रकरण ॥

सर्वप्रथम षोडशमातृका-चक्र, सप्तघृत-मातृका-चक्र एवं नवग्रह-चक्र का निर्माण करें।

॥ नवग्रह-चक्र ॥

बुध 4. पीला	सफेद शुक्र 6.	सफेद चन्द्रमा 2.
गुरु 5. पीला	लाल सूर्य 1.	लाल मंगल 3.
केतु 9. काला	शनैश्चर 7. काला	राहु 8. काला

॥ षोडशमातृका-चक्र ॥

ईशान   पूर्व   आग्नेय

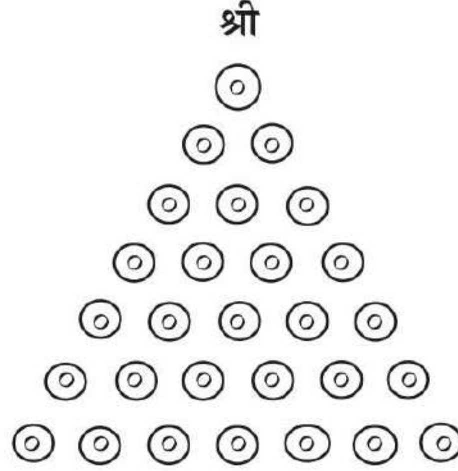
आत्मनः कुलदेवता 17.	लोक मातरः 13.	देवसेना 9.	मेधा 5.
तुष्टिः 16.	मातरः 12.	जया 8.	शची 4.
पुष्टिः 15.	स्वाहा 11.	विजया 7.	पद्मा 3.
धृतिः 14. तुष्टिः	स्वधा 10.	सावित्री 6.	2. गौरी 1. गणेश

उत्तर   दक्षिण

वायव्य   पश्चिम   निर्ऋति

॥ सप्तघृत-मातृका-चक्र ॥

श्री



कीर्तिलक्ष्मी धृतिर्मेधा स्वाहा प्रज्ञा सरस्वती।
मांगल्येषु प्रपूज्यन्ते सप्तैता धृतमातरः॥

(इति वसोर्धारा)

॥ सूर्यदेव पूजन ॥

सूर्यदेव पूजा में पंचायतन-पूजन का अधिक महत्व है। इसमें शिव, विष्णु, देवी, सूर्य और गणेश इन पांचों देवताओं का पूजन होता है। इस पूजा में (1) विष्णु के लिए शालिग्राम शिला और गोमती चक्र (2) शिव के लिए बाणलिंग (3) गणेश के लिए लाल पत्थर (4) देवी के लिए कच्ची धातु का टुकड़ा (5) सूर्य के लिए स्फटिक पूजा के आधार माने गये हैं। इनमें शालिग्राम शिला और बाणलिंग के संस्कार की आवश्यकता नहीं होती शेष सभी का संस्कार करना पड़ता है।

देवपूजन के लिए वेदी बनाना सर्वप्रथम आवश्यक होता है। शुद्ध

भूमि में शुद्ध मिट्टी को रखकर गेहूं के आटे के द्वारा सवा हाथ लम्बी और सवा हाथ चौड़ी वेदी बनायी जाती है। उसमें ठीक दिशाओं में नवग्रहों के चित्र इस प्रकार बनायें– मध्य में 52 अंगुल के अष्टदल में सूर्य, आग्नेय में 24 अंगुल का अर्द्ध गोलाकार चन्द्र, दक्षिण में 4 अंगुल के त्रिकोणाकार भौम, ईशान में 9 अंगुल के धनुषाकार बुध, उत्तर में 9 अंगुल के पद्माकार गुरु, फिर पूर्व में ही 9 अंगुल के चौकोर शुक्र, पश्चिम में 9 अंगुल खड्गाकार शनि, नैर्ऋत्य में 9 अंगुल के मत्स्याकार राहु, वायव्य में 9 अंगुल के ध्वजाकार केतु लिखकर– सूर्य, मंगल में लाल रंग, बुध व गुरु में पीला रंग, शुक्र-चन्द्रमा में सफेद रंग तथा राहु-केतु-शनि में काला रंग भरें। वेदी के उत्तर दिशा में ब्रह्मा, विष्णु, शिव, अग्नि और सोलह मातृकाओं का स्थापन करके दक्षिण दिशा में सर्प, पूर्व में इन्द्र तथा वायु और ईशान दिशा में कलश, श्रीगणेश और 64 योगिनियों की भी आग्नेयकोण में ही स्थापना करें।

स्वास्तिक चिह्न में पीले चावल डालकर गणेश जी को रखें। इनके ईशान में अष्टदल कमल में कलश रखें। कलश में जल भरकर आम, वट, पीपल, गूलर और जामुन– इन पेड़ों के पत्तों को रखकर डोरी बांध दें और कलश पर डोरी बंधा नारियल रखकर लाल कपड़े से ढक दें।

पूजा करते समय यजमान का मुख पूर्व तथा ब्राह्मण का उत्तर की ओर होना चाहिए।

॥ शेषनाग का मुख ॥

भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक– इन तीन महीनों में शेषनाग का मुख पूर्व दिशा में रहता है। मार्गशीर्ष, पौष और माघ– इन तीन

महीनों में दक्षिण दिशा में रहता है। फाल्गुन, चैत्र और बैशाख– इन तीन महीनों में पश्चिम दिशा में रहता है। ज्येष्ठ, आषाढ़ और श्रावण इन तीन महीनों में शेषनाग का मुख उत्तर दिशा में रहता है।

उत्तर-पूर्व के मध्य को 'ईशान' दिशा कहते हैं। पूर्व व दक्षिण के मध्य को 'आग्नेय' दिशा कहा है। दक्षिण-पश्चिम के मध्य की दिशा 'निर्ऋति' है। पश्चिम-उत्तर के बीच की दिशा 'वायव्य' है। प्रातः सूर्योदय के समय आप सूर्य की ओर मुख करके खड़े हों तो आपका मुख पूर्व की ओर, पीठ पश्चिम की ओर, दाहिना हाथ दक्षिण की ओर तथा बायां हाथ उत्तर दिशा में होगा। इस प्रकार से चार दिशायें होती हैं। बीच वाली दिशायें– उपदिशायें कहलाती हैं।

सभी धार्मिक या सामाजिक कृत्यों के आरम्भ में कुछ क्रियायें समान रूप से की जाती हैं। वे हैं– आत्म-शुद्धि, आसन-शुद्धि, संकल्प, ब्राह्मण-पूजन, स्वस्ति-वाचन, मंगल-पाठ, गणेश-पूजन, घट-स्थापन, पुण्याह-वाचन, वरुण-पूजन। इनके अतिरिक्त किसी-किसी कर्म में नवग्रह-पूजन, मातृका-पूजन, नान्दीमुख-श्राद्ध, कुशकण्डिका और हवन भी किया जाता है।

॥ आत्म-शुद्धि ॥

स्नान आदि करके कर्त्ता शुद्ध स्थान में पूर्व या उत्तर की ओर मुंह करके बैठें। तब **ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा। यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥** यह मन्त्र पढ़कर अपने ऊपर जल छिड़ककर आत्म-शुद्धि करें। पश्चात्–

ॐ केशवाय नमः। ॐ नारायणाय नमः। ॐ माधवाय नमः। पढ़कर तीन बार आचमन करें। **ॐ गोविन्दाय नमः हस्तौ प्रक्षालयात्** कहकर हाथ धो लें।

॥ आसन-शुद्धि ॥

इसके बाद हाथ में जल लेकर यह विनियोग करें। **ॐ पृथ्वीति मन्त्रस्य मरुपृष्ठ ऋषिः सुतलं छन्दः कूर्मो देवता आसन पवित्रकरणे विनियोगः।**

फिर यह मन्त्र पढ़कर आसन पर जल छिड़ककर आसन-शुद्धि करें।

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता। त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्।

॥ संकल्प ॥

ॐ अद्यैतस्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीय परार्द्धे श्रीश्वेतवाराह-कल्पे वैवस्वतमंवंतरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारतवर्षेआर्यावर्तैकदेशे पुण्यक्षेत्रे अमुक संवत्सरे अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकयोगे अमुक-गोत्रोत्पन्नोऽमुक शर्माऽहं अमुक नाम्नः (प्रतिनिधित्वेन वा) अमुक कामनासिद्धये अमुक (नामकर्मणि) तदंगतया विहितनिर्विघ्नतार्थं यथा सम्पादितसामग्रया स्वस्तिवाचनं (ब्राह्मण शर्माहं, क्षत्रिय वर्माहं, वैश्य गुप्तोहं इस प्रकार बोलें। दूसरे के लिए किया जाये तो 'करिष्यामि' कहें।) **गणेशवरण-सूर्यादि-नवग्रह-षोडश-मातृका-पूजनादि च करिष्ये।**

अपने दाहिने हाथ में चावल, जल लेकर संकल्प करें।

वेदोक्त मंगल मन्त्रों को पढ़ने के उपरान्त साधक कलश में जल भरकर उसे वेदी में स्थापित करें। फिर उस पर एक पात्र में जौं भरकर रखें और उसके ऊपर घी का दीपक जला दें। कलश पर

रोचना या हल्दी से गणेश जी की आकृति बनायें। भूमि पर ग्रहों और मातृकाओं के पूजन के लिए उनके चक्र बनायें। इसके उपरान्त पूजन करें। सर्वप्रथम गणेश जी की पूजा करें।

कलश की जगह पर मिट्टी और जौं रखकर कलश रखें और उसमें जल, सुपारी, पैसा, सर्वोषधि, सात प्रकार की मिट्टी, दूर्वा, कुश, पंचपल्लव डालकर कलश के गले में वस्त्र अथवा मौली, जिसे कलावा भी कहा जाता है, बांधकर प्रार्थना करें।

॥ अथ स्वस्तिवाचनम् ॥

ॐ स्वस्ति नऽ इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः। स्वस्ति नास्ताक्ष्र्यो ऽअरिष्टनेमि स्वस्ति नो बृहस्पतिर्द्दधातु॥

ॐ पयः पृथिव्याम्पयऽऔषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वतीः प्प्रदिशः सन्तु मह्यम्।

ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोः श्यप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसि वैष्णवमसि व्विष्णवे त्वा॥

ॐ अग्निर्देवता व्वातो देवता सूर्योदेवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा देवतादित्या देवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणो देवता॥ ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरौषधयः शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳशान्तिः शान्ति रेव शान्तिः सामाशान्तिरेधि॥

ॐ व्विश्वानि देव सवितदुर्रितानि परासुव। यद्‌भद्रन्तन्नऽआसुव॥

ॐ इमा रुद्राय तवसे कपर्दिनेक्षयद्वीराय प्रभरामहेमतीः। यथा शमसद्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्ट्टं ग्रामे अस्मिन्ननातुरम्।

ॐ एतन्ते देव सवितय्यज्ञ म्प्राहुर्ब्बृह स्पतयेब्रह्मणे। तेन यज्ञमवतेन यज्ञ पतिन्तेन मामव॥ ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञामिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳसमिमन्दधातु। विश्वे देवा स इह मादयन्तामों प्रतिष्ठ। एष वै प्रतिष्ठानाम यज्ञो यत्रैतेन यज्ञेन यजंते सर्वमेव प्रतिष्ठितं भवति॥

इसके बाद जल में पवित्र नदियों का आवाहन करें–

गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति। नर्मदे सिंधो कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

गंगा आदि तीर्थों का आवाहन करें–

ॐ गंगादिसरिद्भ्यो नमः॥

जल, चन्दन, चावल और फूल से पूजा-प्रार्थना करें।

॥ ब्राह्मण पूजा॥

अपने दोनों हाथों को पसारकर हथेलियों में फूल रखकर मन्त्र पढ़ें–

आगच्छ भगवन् देव स्थाने चात्र स्थिरो भव।
यावत्पूजां करिष्यामि तावत्त्वं सन्निधौ भव॥

तद्रोपरान्त रोली के छींटे देकर पूजन करें और यह मन्त्र पढ़ें–

नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे। सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटियुग धारिणे नमः॥

जल, चन्दन, चावल, पुष्प आदि से ब्राह्मण की पूजा करें। ब्राह्मण यजमान को तिलक करें तथा आशीष वचन कहें

ॐ भद्रमस्तु शिवं चास्तु महालक्ष्मीः प्रसीदतु॥ रक्षन्तु त्वां सुराः सर्वे सम्पदे सुस्थिरा भव॥

स्वस्तिवाचन तथा शान्ति पाठ पढ़ें–

ॐ स्वस्ति नऽ इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः। स्वस्ति नास्ताक्ष्यों ऽअरिष्टनेमि स्वस्ति नो बृहस्पतिर्द्दधातु॥

ॐ पयः पृथिव्याम्पयऽऔषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वतीः प्प्रदिशः सन्तु मह्यम्।

ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोः श्यप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसि वैष्णवमसि व्विष्णवे त्वा॥

ॐ अग्निर्देवता व्वातो देवता सूर्योदेवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा देवतादित्या देवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणो देवता॥ ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरौषधयः शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳशान्तिः शान्ति रेव शान्तिः सामाशान्तिरेधि॥

दैवाधीनं जगत्सर्वं मन्त्राधीना च देवताः।
तन्मन्त्रं ब्राह्मणाधीनं तस्माद् ब्रह्माण देवताः॥

॥ गणेश पूजन॥

ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः॥ ॐ उमामहेश्वराभ्यां नमः॥ ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः॥ ॐ शचीपुरन्दराभ्यां नमः। ॐ मातृपितृ चरणकमलेभ्यो नमः। ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः। ॐ कुलदेवताभ्यो नमः। ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः। ॐ

स्थानदेवताभ्यो नमः। ॐ वास्तुदेवताभ्यो नमः। ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय श्री मन्महागणाधिपतये नमः। ॐ सर्वेभ्योब्राह्मणेभ्यो नमः। ॐ गणानात्वा गणपति ँ हवामहे प्रियणांत्वा प्रियपति ँ हवामहे निधोनां त्वा निधिपति ँ हवामहे वसोमम आहम जानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम्॥ ॐ नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः।

ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः। लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः॥ धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः। द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि॥ विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा॥ संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥ शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्॥ प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये॥ अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः। सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः॥ सर्वमंगलमांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके। शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते। सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममंगलम्। येषां हृदिस्थो भगवान्मंगलायतनं हरिः॥

तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव। विद्याबलं देवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि॥ लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः येषामिन्दीवरश्यामोहृदयस्थो जनार्दनः॥ यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्द्धरः। तत्र श्रीविजयो भूतिध्रुवानीतिर्मतिर्मम॥

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते। तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

स्मृतेः सकलकल्याणभाजनं यत्र जायते। पुरुषं तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम्। सर्वेष्वारम्भकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः। देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः॥ विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्। वन्दे काशीं गुहां गंगां भवानीं मणिकर्णिकाम्॥

ॐ नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्योविश्वरूपेभ्यश्च वो नमो नमः॥

अब इस मन्त्र से सामग्री चढ़ायें।

सामग्री के नाम क्रमशः इस प्रकार हैं–

पाद्यम् अर्घ्यमाचमनीयम्, वस्त्रम् यज्ञोपवीतम्, गन्धाक्षतान्, पुष्पम्, धूपम्, दीपम्, नैवेद्यम्, ताम्बूलम्, पूंगीफलम्, दक्षिणां च समर्पयामि।

॥ कलश-पूजन ॥

अपने दायें हाथ में फूल लेकर आवाहन मन्त्र पढ़ें–

प्रभासं पुष्करं चैत्र नैमिषं च हिमालयम्। वटेश्वरं त्रिभुक्तं च कुम्भमावाहयाम्यहम्।

इस मन्त्र से रोली के छींटे दें–

ॐ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्थो-व्वरुणस्यऽऋतसदन्यसि व्वरुणस्यऽऋतसदनमसि व्वरुणस्यऽऋतसदनमासीद॥

इसके बाद इस मन्त्र से सामग्री चढ़ाकर हाथ जोड़कर नमस्कार करें–

"पाद्यम्अर्घ्यमाचमनीयम्।"

॥ प्रार्थना ॥

देवदानवसम्बादे मथ्यमाने महोदधौ उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम्॥ त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः। त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः॥ शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः। आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृका॥ त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः। त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहे जलोदभव॥ सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नां भव सर्वदा।

॥ ओंकार-पूजन ॥

हाथ में फूल, चावल लेकर ओंकार का आवाहन करें–

आवाहयाम्यहं देवं ओंकारं परमेश्वरम्। त्रिमात्रं त्र्यक्षरं दिव्यं त्रिपदञ्च त्रिदेवकम्॥

फूल, चावल चढ़ा दें। फिर अधोलिखित मन्त्र से रोली के छींटे देकर पूजन करें–

ओंकार बिन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः। कामदं मोक्षदं चैव ओंकाराय नमो नमः॥

फिर निम्नांकित मन्त्र को पढ़ते हुए सब सामग्री चढ़ाकर हाथ जोड़कर नमस्कार करें–

त्र्यक्षरं त्रिगुणाकारं सर्वाक्षरमयं शुभम्। त्र्यर्णवं प्रणवं हंसं स्रष्टारं परमेश्वरम्॥

॥ ब्रह्म-पूजन ॥

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमम्पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचों वेनऽआवः। सबुद्ध्न्या ऽउपमा ऽअस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः।

॥ विष्णु-पूजन ॥

हाथ में फूल, चावल लेकर विष्णु जी का आवाहन करें–

केशवं पुण्डरीकाक्षं माधवं मधुसूदनम्। रुक्मिणीसहितं देवं विष्णु आवाहयाम्यहम्॥

पुष्प चढ़ाकर इस मन्त्र से रोली के छींटे देकर पूजन करें–

ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेऽस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसि। वैष्णवमसि विष्णवे त्वा॥

पूजन के बाद–

पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्॥ (पूर्ववत्)

समस्त सामग्री चढ़ाकर नीचे लिखे मन्त्र द्वारा हाथ जोड़कर नमस्कार करें–

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं। विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभांगम। लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं वन्दे विष्णु भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्।

॥ शिव-पूजन ॥

हाथ में चावल लेकर यह मन्त्र पढ़ें–

ॐ शिवशंकरमीशानं द्वादशार्द्धं त्रिलोचनम्। उमयासहितं देवं शिवं आवाहयाम्यहम्।

पुष्प और चावल चढ़ा दें।

इस मन्त्र से रोली के छींटे देकर पूजन करें–

ॐ नमः शंभवाय च मयोभवाम च। नमः शंकराय च मयस्कराय च। नमः शिवाय च शिवतराय च।

इसके बाद–

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

अब हाथ जोड़कर नीचे लिखे मन्त्र द्वारा नमस्कार करें–

रुद्राक्ष कंकणलसत्करदण्डयुग्मं, मालान्तरालचितभस्मधृतं त्रिपुण्डम्। पंचाक्षरी परिपठम् वरमन्त्रराज ध्यायेत्सदा पशुपतिं शरणं व्रजेऽहम्।

तत्पश्चात् ॐ नमः शिवाय का जप करें।

॥ लक्ष्मी-पूजन ॥

हाथ में चावल, फूल लेकर लक्ष्मी जी का आवाहन करें–

ॐ समुद्रतनयां देवीं सर्वाभरणभूषिताम्। पद्मनेत्रां विशालाक्षीं लक्ष्मीमावाहयाम्यहम्॥ विष्णुप्रीतिकरीं देवीं देवकार्यार्थसाधनीम्। कुबेरधनदात्रीं लक्ष्मीं आवाहयाम्यहम्।

सभी फूल, चावल चढ़ा दें और हाथ पसारकर कहें–

आगच्छ भगवति देवि स्थाने चात्रस्थिरा भव। यावत्पूजां करिष्येऽहं तावत्त्वं सुस्थिरा भव।

इस मन्त्र से रोली के छींटे दें–

ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पाश्र्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इषणन्निषाणामुम्मइषाण सर्वलोकम्मइषाण।

इसके बाद–

पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

सब सामग्री चढ़ा हाथ जोड़कर निम्नांकित मन्त्र द्वारा नमस्कार करें–

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्व-लक्ष्मीः पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः। श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम्॥

॥ षोडशमातृका-पूजन ॥

रोली का छींटा देकर पूजन करें–

ॐ गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया। देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः॥ हृष्टि पुष्टि स्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवता॥ गणेशेनाधिका ह्येता वृद्धौ पुज्याश्च षोडश॥

पूजन के बाद–

पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

सामग्री चढ़ायें।

॥ वास्तु-पूजन ॥

ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवी मनु। ये ऽअन्तरिक्षे ये दिवितेभ्यः सर्पेभ्यो नमः स्वाहा। वासुक्यादि अष्टकुल नागेभ्यो नमः।

॥ योगिनी-पूजन ॥

रोली से छींटे देकर पूजन करें–

आवाहयाम्यहं देवीः योगिनीः परमेश्वरीः। योगाभ्यासेन सन्तुष्टाः परध्यानसमन्विताः।

इससे सामग्री चढ़ावें और हाथ जोड़ प्रार्थना करें–

दिव्यकुण्डलसंकाशा दिव्यज्वाला त्रिलोचना। मूर्ति-मतीह्यमूर्त्ता च उग्रा चैवोग्ररूपिणी॥ अनेकभावसंयुक्ता संसारार्णवतारिणी। यज्ञे कुर्वन्तु निर्विघ्नं श्रेयो यच्छन्तु मातरः। दिव्ययोगी-महायोगी सिद्धयोगी गणेश्वरी। प्रेताशी डाकिनी काली कालरात्री निशाचरी। हुंकारी सिद्धवेताली खर्परी भूतगामिनी। ऊर्ध्वकेशी विरूपाक्षी शुष्कांगी मांस-भोजिनी॥ फूत्कारी वीरभद्राक्षी धूम्राक्षी कलहप्रिया। रक्ता च घोर-रक्ताक्षी विरूपाक्षी भयंकरी। चौरिका भारिका चण्डी वाराही मुण्डधारिणी। भैरवी चक्रिणी क्रोधा दुर्मुखी प्रेतवासिनी। कालाक्षी मोहिनी चक्री कंकाली भुवनेश्वरी। कुण्डला ताल कौमारी यमदूती करालिनी। कौशिकी यक्षिणी यक्षी कौमारी यन्त्रवाहिनी। दुर्घटा विकटा घोरा कपाला विषलंघना। चतुःषष्टिः समाख्याता योगिन्यो हि वरप्रदाः त्रैलोक्यपूजिता नित्यं देवमानुषयोगिभिः॥

॥ इन्द्र-पूजन ॥

रोली से छींटे देकर पूजन करें–

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र ꣳ हवे हवे सुहव ꣳ शूरमिन्द्रम्। ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्र ꣳ स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः स्वाहा॥ ॐ इन्द्राय नमः।

इस मन्त्र से सामग्री चढ़ावें–

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

॥ वायु-पूजन ॥

रोली का छींटा देकर पूजन करें–

ॐ वायो ये ते सहस्रिणो रथासस्तेभिरागहि। नियुत्वां सोमपीतये॥

ॐ वातोवामनो वा गन्धर्वाः सप्तविꣳशतिः। तेऽअग्रेश्वमयुञ्जंस्तेस्मिञ्जवमादधुः। ॐ वायवे नमः।

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

सामग्री चढ़ा दें।

॥ अग्नि-पूजन ॥

रोली का छींटा देकर पूजन करें–

ॐ अग्ने सपत्नदम्भनमदब्धासोऽअदाभ्यम्। चित्रावासो स्वस्ति ते पारमशीय॥ ॐ श्री अनलाय नमः।

इस मन्त्र से सामग्री चढ़ावें–

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

॥ धर्म-पूजन ॥

ॐ चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय॥ धर्मराजसभा-संस्थं कृताकृत-विवेकिनम्॥ ॐ धर्माय नमः।

॥ यम-पूजन ॥

रोली का छींटा देकर पूजन करें–

ॐ असि यमो अस्यादित्यो अर्वन्नसि त्रितोगुह्येन व्रतेन। असि सोमेन समया विपृक्तऽआहुस्ते दिवि बन्धनानि। ॐ यमाय नमः।

सामग्री चढ़ावें–

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

॥ सूर्य-पूजन ॥

हाथ में फूल लेकर कहें–

दिवाकरं सहस्रांशुं ब्रह्माद्याश्च सुरैर्नुतम्। लोकनाथं जगच्चक्षुः सूर्यं आवाहयाम्यहम्॥

फूल, चावल चढ़ा दें और निम्नांकित मन्त्र से रोली के छींटे देकर पूजन करें–

ॐ आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

सब वस्तुयें चढ़ा हाथ जोड़कर अधोलिखित मन्त्र द्वारा नमस्कार करें–

जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम्। तमोऽरिं सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम्।

॥ चन्द्र-पूजन ॥

हाथ में फूल, चावल लेकर बोलें–

हिमरश्मि निशानाथं तारकापतिमुत्तमम्। ओषधीनां च राजानं चन्द्रं आवाहयाम्यहम्।

नीचे लिखे मन्त्र से रोली के छींटे देते हुए पूजन करें–

इमंदेवा असपत्न ७ँ सुवध्वंमहते क्षत्राय महते ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्यन्द्रियाय। इममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विश एष वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना ७ँ राजा॥

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

सभी वस्तुयें चढ़ाकर इस मन्त्र से हाथ जोड़ें–

दधिशंखतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भद्रवम्। ज्योत्स्नापतिं निशानाथं सोममावाहयाम्यहम्॥ श्रीचन्द्रदेवाय नमः।

॥ भौम (मंगल)–पूजन ॥

हाथ में फूल, चावल लेकर मंगल का आवाहन करें–

धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्तेजस्समप्रभम्। कुमारं शक्तिहस्तं च भौममावाहयाम्यहम्॥

फूल, चावल चढ़ाकर रोली के छींटे अगले मन्त्र द्वारा दें–

ॐ अग्निर्मूधा दिवः ककुत्पत्तिः पृथिव्या ऽअयम्। अपा ७ँ रेता ७ँ सि जिन्वति॥

अगले मन्त्र से–

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

जल, चन्दन, चावल चढ़ाकर अगले मन्त्र द्वारा हाथ जोड़ें–

धरणीगर्भसंभूतं विद्युत्तेजस्समप्रभम्। कुमारं शक्तिहस्तं च भौमदेवं नमाम्यहम्॥

॥ बुधस्य-पूजन ॥

हाथ में पुष्प, चावल लेकर बुध का आवाहन करें–

बुधंबुद्धिप्रदातारं होमवंशप्रवर्धनम्। यजमानहितार्थाय बुध आवाहयाम्यहम्।। (यदि स्वयं के लिए पूजन कर रहे हों तो "यजमान" के स्थान पर "मम" का उच्चारण करें।)

हाथ की वस्तुयें चढ़ाकर अगले मन्त्र से रोली के छींटे दें–

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते सः ँ सृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा ममश्च/ यजमानश्च सीदत।।

अगले मन्त्र से सामग्री चढ़ावें–

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

हाथ जोड़ें–

प्रियंगुकलिकाभासं रूपेणाप्रतिमं बुधम्। सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधमावाहयाम्यहम्।।

।। बृहस्पत्यावाहन ।।

हाथ में फूल, चावल लेकर बृहस्पति देव का ध्यान करें–

ॐ गुरुं श्रेष्ठांगिरः पुत्रं देवानां च पुरोहितम् शुक्रस्य मन्त्रिणांश्रेष्ठं गुरुं आवाहयाम्यहम्।।

पुष्प और चावल चढ़ाकर रोली के छींटे अगले मन्त्र से दें–

ॐ बृहस्पतेऽअतियदर्योऽअर्हाद्द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छवसऽऋत प्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्।

अगले मन्त्र से जल, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्यादि चढ़ायें–

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

अब अगले मन्त्र से हाथ जोड़ें–

देवानाञ्च वन्द्यभूतं त्रिलोकानां गुरुमावाहयाम्यहम् गुरुं काञ्चनसन्निभम्।। श्री गुरवे नमः।

।। शुक्र-पूजन ।।

हाथ में पुष्प और चावल लेकर शुक्र देवता का ध्यान करें–

प्रविश्य जठरे शम्भोर्निष्क्रान्तः पुनरेव यः। आचार्यम्–सुरादीनां शुक्रं आवाहयाम्यहम्।।

पुष्प, चावल चढ़ाकर रोली से पूजन करें–

अन्नात्परिस्त्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपि बत्क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः। ऋतेन सत्त्यमिन्द्रियं व्विपान ळ्ं शुक्रमन्धस ऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु।।

अगले मन्त्र से वस्तुयें चढ़ायें–

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

अब हाथ जोड़ें–

हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम्। सर्वशास्त्रप्रवक्तारं शुक्रमावाहयाम्यहम्।। श्रीशुक्राय नमः।

।। शनि-पूजन ।।

हाथ में पुष्प, चावल लेकर शनिदेव का आवाहन करें–

नीलाम्बुजसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम्। छायामार्तण्डसम्भूतं शनिमावाहयाम्यहम्।।

चावल, फूल चढ़ाकर रोली के छींटे दें–

ॐ शं नो देवीरभिष्टय ऽआपो भवन्तु पीतये। शं योरभिस्त्रवन्तु नः।।

अगले मन्त्र से–

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

अब हाथ जोड़ें–

नीलाम्बुजसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम्। छायामार्तण्डसम्भूतं शनिमावाहयाम्यहम्॥

॥ राहु-पूजन ॥

हाथ में काले फूल, चावल लेकर राहु का ध्यान करें–

ॐ चक्रेन छिन्नमूर्द्धानं विष्णुना च निरीक्षितम्। सैहिकेयं महाकायं राहुमावाहयाम्यहम्॥

इसके पश्चात् रोली के छींटे दें–

ॐ कया नश्चित्रऽआभुवदूती सदा वृधः सखा। कया शचिष्ठयावृता॥

अब सामग्री चढ़ावें–

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

अब हाथ जोड़ें–

अर्द्धकायं महावीर्यं चन्द्रादिव्यविमर्दनम्। सिंहिकागर्भसम्भूतं राहुं प्रणमाम्यहम्॥

॥ केतु-पूजन ॥

हाथ में पुष्प, चावल लेकर केतु का आवाहन करें–

ॐ ब्रह्मणः कुलसम्भूतं विष्णुलोकभयावहम्। शिखिनन्तु महाकायं केतुमावाहयाम्यम्॥

रोली के छींटे दें–

ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या ऽअपेशसे। समुषद्भिर-जायथाः।

पश्चात् जल, नैवेद्यादि सामग्री चढ़ायें–

ॐ पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयम्। (पूर्ववत्)

अब हाथ जोड़ें–

पलाशधूम्र संकाशं तारकाग्रहमस्तकम्। रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं केतुमावाहयाम्यहम्॥

इसके पश्चात् हाथ जोड़कर समस्त ग्रहों को नमस्कार करें–

ॐ ब्रह्मा मुरारि स्त्रिपुरान्तकारी भानु शशी भूमिसुतो बुधश्च। गुरुश्च शुक्रः शनि-राहु-केतवः सर्वे ग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु॥

॥ ऋषि-पूजन ॥

अब अपने हाथों में चावल, घास दूर्वा लेकर ऋषि-पूजन करते समय नीचे लिखा मन्त्र पढ़ें–

ॐ गणाधिपं नमस्कृत्य नमस्कृत्य पितामहम्। विष्णुं रुद्रं श्रियं देवीं वन्दे भक्त्या सरस्वतीम्॥१॥ स्थानाधिपं नमस्कृत्य ग्रहनाथं निशाकरम्। धरणीगर्भसम्भूतं शशिपुत्रं बृहस्पतिम्॥२॥ दैत्याचार्यं नमस्कृत्य सूर्यपुत्रं महाग्रहम्। राहु केतु नमस्कृत्य यज्ञारम्भे विशेषतः॥३॥ शक्राद्या देवताः सर्वाः मुनीश्चैव तपोधनान्। गर्गं मुनिं नमस्कृत्य नारदं मुनिसत्तमम्॥४॥ वशिष्ठं मुनिशार्दूलं विश्वामित्रं च गोभिलम्। व्यासं मुनिं नमस्कृत्य सर्वशास्त्र विशारदम्॥५॥ विद्याधिका ये मुनयः आचार्याश्च

तपोधनाः। तान् सर्वान् प्रणमाम्येवं यज्ञरक्षाकरान् सदा॥६॥

हाथ की वस्तुओं को देवताओं पर चढ़ा दें और फिर चावल हाथ में लेकर दसों दिशाओं में इन श्लोकों द्वारा थोड़ा-थोड़ा छोड़ते रहें–

दिग्रक्षण– ॐ पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्नेय्यां गरुड़ध्वजः। याम्यां रक्षतु वाराहो नृसिंहश्च तु नैर्ऋते॥१॥ वारुण्यां केशवो रक्षद् वायव्यां मधुसूदनः। उत्तरे श्रीधरो रक्षे दीशाने तु गदाधरः॥२॥ ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेत् अधस्ताच्च त्रिविक्रमः। एवं दशदिशो रक्षेद् वासुदेवो जनार्दनः॥३॥

इस मन्त्र से यजमान पुरोहित के तिलक करें–

ॐ नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मण हिताय च। जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः॥

इस मन्त्र से यजमान पुरोहित के हाथ में कलाया बांधें–

ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाऽऽप्नोति दक्षिणाम्। दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते॥

इस मन्त्र से पुरोहित यजमान के हाथ में रक्षाबन्धन करें–

येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः। तेन त्वाम नुबध्नामि रक्षे मा चल मा चल॥

पुरोहित इस मन्त्र द्वारा यजमान को पुष्प, चावल से आशीर्वाद प्रदान करें–

मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः। शत्रुणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तव॥

ॐ आयुष्कामः यशस्कामः पुत्रकामस्तथैव च। आरोग्यं धनकामश्च सर्वे कामा भवन्तु ते॥

आहुति-मन्त्र– इसके उपरान्त अग्नि प्रज्ज्वलित करते हुए निम्नांकित मन्त्र का उच्चारण करें–

अग्नि प्रज्ज्वलितं वन्दे जातवेद हुताशनम्।
सुवर्णवर्णममलं समिद्धं विश्वतोमुखम्।।

इसके उपरान्त यज्ञ में आहुतियां प्रदान करें। घी से आहुति दें–

ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।

(मन में बोलें।)

ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदं इन्द्राय न मम।

ॐ अग्नये स्वाहा, इदं अग्नये न मम।

ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम। (सामग्री छोड़ें।)

ॐ भू स्वाहा, इदं अग्नये न मम।

ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।

ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।

एता महाब्याहृतयः।

ॐ त्वन्नोऽअग्ने वरुणस्य विद्वान देवस्य-हेडो-ऽअवयासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वन्हितमः शोशुचानो विश्वाद्वेषासि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा। इदं अग्नि-वरुणाभ्यां न मम।

ॐ सत्वन्नोऽअग्नेऽबतो-भवोतीनेदिष्ठोऽअस्याउषसो व्यष्टौ। अवयक्ष्वनो वरुणॐरराणो वीहि मृडीक ॐ सुवहो नऽएधि स्वाहा। इदं अग्नि वरुणाभ्यां न मम।

ॐ अयाश्चाग्ने स्यनभिशस्ति पाश्च सत्वमित्वमया असि अयानो यज्ञं वहास्ययानो धेहि भेषजॐस्वाहा। इदं अग्नये अयसे न मम।

ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महानतस्ते-भिर्नो अद्य सवितोत विष्णर्विश्वे मुचन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा। इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्य स्वर्केभ्यश्च न मम।

ॐ उदुत्तमं वरुण पाश-मस्मद-बाधमं विमध्यम ँ श्रथाय। अथाब्बयमादित्य ब्रते तवानगसो-ऽअदितये स्याम स्वाहा। इदं वरुणायादित्या-दितये च न मम। एताः सर्वाः प्रायश्चित-संज्ञका।

ॐ गणपतये स्वाहा। इदं गणपतये न मम।

ॐ विष्णवे स्वाहा। इदं विष्णवे न मम।

ॐ शंभवे स्वाहा। इदं शंभवे न मम।

ॐ लक्ष्म्यै स्वाहा। इदं लक्ष्म्यै न मम।

ॐ भूम्यै स्वाहा। इदं भूम्यै न मम।

ॐ सूर्याय स्वाहा। इदं सूर्याय न मम।

ॐ चन्द्रमसे स्वाहा। इदं चन्द्रमसे न मम।

ॐ भौमाय स्वाहा। इदं भौमाय न मम।

ॐ बुधाय स्वाहा। इदं बुधाय न मम।

ॐ बृहस्पतये स्वाहा। इदं बृहस्पतये न मम।

ॐ शुक्राय स्वाहा। इदं शुक्राय न मम।

ॐ शनैश्चराय स्वाहा। इदं शनैश्चराय न मम।

ॐ राहवे स्वाहा। इदं राहवे न मम।

ॐ केतवे स्वाहा। इदं केतवे न मम।

ॐ व्युष्टयै स्वाहा। इदं व्युष्टयै न मम।

ॐ उग्राय स्वाहा। इदं उग्राय न मम।

ॐ शतक्रतवे स्वाहा। इदं शतक्रतवे न मम।

ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम। (मानसिक)

ॐ अग्नये स्विष्ट कृते स्वाहा। इदं अग्नये स्विष्ट कृते न मम।

ॐ सूर्यो ज्योर्तिज्योति सूर्यः स्वाहा।

ॐ सूर्यो वर्चो ज्योर्तिर्बर्चः स्वाहा।

ॐ ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।

ॐ सजूर्देवेन सवित्रा सजूरूसेन्द्रवत्या जुषाणः सूर्यो वेत स्वाहा।

ॐ अग्निर्ज्योतिज्योति ज्र्योतिरग्नि सूर्य स्वाहा।

ॐ अग्निवर्चो ज्योतिर्वचः स्वाहा।

ॐ अग्निर्ज्योतिः ज्र्योतिरग्नि स्वाहा।

ॐ सजूर्देवेन सवित्रा सजूरा-येन्द्रवत्या जुषाणो ऽअग्निर्वेतु स्वाहा।

इसके उपरान्त अपने मन्त्र का जप करते हुए अग्नि में आहुतियां प्रदान करनी चाहिए।

तद्रोपरान्त स्त्रुव में सुपारी इत्यादि अथवा सूखा गोला, जिसमें सामग्री भरी हो, उससे पूर्णाहुति देनी चाहिए। पूर्णाहुति के समय निम्नांकित मन्त्र का उच्चारण करें—

ॐ मूर्द्धानं दिवोऽअरति पृथिव्या वैश्वानरमृत आजातमग्निम्। कवि ॐ संम्राजम-तिथिं जनाना-मासन्ना पात्रं जनयन्त देवा स्वाहा।

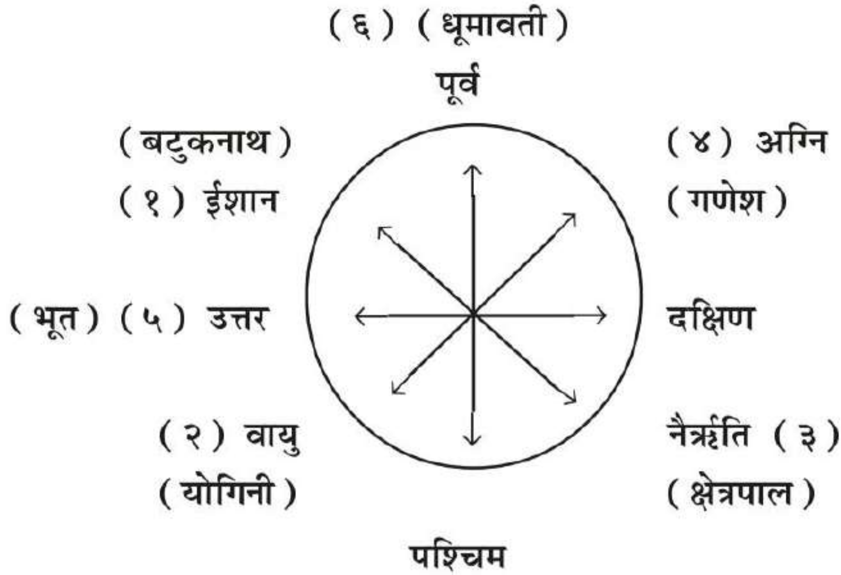
इस प्रकार पूर्णाहुति प्रदान करें। इसके साथ ही न्यूनतापूर्ति के लिए प्रार्थना करें–

“ॐ सप्त ते अग्ने समिधः सप्त जिह्वा सप्त ऋषय, सप्त धाम प्रियाणि। सप्त होत्राः सप्तधात्वा यजन्ति सप्त योनीरा पृणस्व धृतेन स्वाहा॥”

अन्त में निम्नांकित वाक्य कहकर किया गया हवनकर्म भगवती को अर्पित करें।

“अनेन होमकर्मणा श्री धूमावतीः प्रीयताम् न मम। श्री श्वेताम्बरार्पणामस्तु।”

बलिदान



॥ बलि हेतु मुद्रायें ॥

(1) **बटुक** : अंगूठे को अनामिका से मिलायें।

(2) **योगिनी** : तर्जनी, मध्यमा और अंगूठे को मिलायें।

(3) **क्षेत्रपाल** : अंगूठे को तर्जनी से मिलायें।

(4) **गणेश** : अंगूठे को मध्यमा से मिलायें।

(5) **भूत** : सभी अंगुलियों को मिलायें।

॥ बलि विधान॥

(1) त्रिकोण, वृत्त, चतुरस्र मण्डल बनाकर **"ॐ आधाार शक्तये नमः"** बोलकर पूजन करें। फिर बलि पात्र की स्थापना कर **"ॐ बलि द्रव्याय नमः"** कहकर गन्ध, पुष्प आदि से पूजन करें तथा अंगूठे और अनामिका को मिलाते हुए मुद्रा बनाकर बलि स्वीकार करने हेतु बटुक भैरव से प्रार्थना करें–
"एहि एहि देवि पुत्र बटुकनाथ कपिल जटाभारभासुर त्रिनेत्र ज्वाला मुख सर्वविघ्नान् नाशय नाशय सर्वोपचार सहितं बलिं गृहण गृहण स्वाहा।" बटुकाय एष बलिर्न मम।

(2) **"यां योगिनीभ्यो नमः"** से योगिनिओं की पूजा कर उन्हें तर्जनी, मध्यमा और अंगूठे से मुद्रा बनाकर, बलि स्वीकार करने हेतु विनती करें–
"ॐ ॐ ॐ सर्वयोगिनीभ्यः सर्वडाकिनीभ्यः सर्वशाकिनीभ्यः त्रैलोक्यवासिनीभ्यो नमः। इमं पूजाबलिं गृहणीत हुं फट् स्वाहाः, सर्वयोगिनीभ्यो हुं फट् स्वाहा।" योगिनीभ्यः एष बलिर्न मम। जल अर्पित कर प्रणाम करें।

(3) **"क्षं क्षेत्रपालाय नमः, क्षेत्रपाल बलि मण्डलाय नमः, क्षेत्रपाल बलि द्रव्याय नमः।"** ऐसा बोलकर गन्ध, पुष्प

आदि से क्षेत्रपाल की पूजा करें। अंगूठे और तर्जनी को मिलाकर मुद्रा बनायें और क्षेत्रपाल से बलि स्वीकार करने हेतु प्रार्थना करें–

"ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः क्षेत्रपाल इमं बलिं गृहण गृहण स्वाहा, क्षेत्रपालाय एष बलिर्न मम।" जल देकर प्रणाम करें।

(4) **"ॐ गं गणपतये नमः, गणपति बलिमण्डलाय नमः।"** ऐसा बोलकर गन्ध, पुष्पादि से गणपति की पूजा करें। फिर अंगूठे और मध्यमा को मिलाकर मुद्रा बनायें और गणपति से बलि स्वीकार करने हेतु प्रार्थना करें–

"ॐ गां गीं गूं गैं गौं गः गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय इमं बलिं गृहण गृहण स्वाहा।" गणपतये एष बलिर्न मम। जल देकर प्रणाम करें।

(5) पूर्व की भांति मण्डल बनाकर पूजन करें। साधार बलिदान स्वीकार करने हेतु प्रार्थना करें– सभी अंगुलियों को मिलाकर मुद्रा बनाते हुए– **धूं सर्वविघ्नकृदभ्यः सर्वभूतेभ्यो हुं फट् स्वाहा। सर्वभूतेभ्यो एष बलिर्न मम।**

पुष्पाञ्जलि–

(6) तद्रोपरान्त हाथ-पैर धोकर भगवती को योनि मुद्रा का प्रदर्शन करते हुए प्रणाम करके आरती कर उन्हें पुष्पाञ्जलि अर्पित करें–

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥

नानासुगन्धि पुष्पाणि यथाकालोद् भवानि च।
पुष्पाञ्जलिर्मया दत्तो गृहाण परमेश्वरि॥

पुनः प्रदक्षिणा करके नमस्कार करें। फिर यन्त्र बनाकर पूजन करें और बलि स्थापना कर भगवती से बलि स्वीकार करने हेतु प्रार्थना करें–

"ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं हुं धूं धूमावती सर्वशत्रु मर्दिनी सर्वराज वशंकरी एष ते बलिं गृहण गृहण ममाभीष्ट कुरु हुं फट् स्वाहा। धूमावत्यै एष बलिर्न मम।"

ऐसा कहकर भगवती को विशेष अर्घ्य प्रदान करें। शहद, मिश्री, गाय का दूध, केसर व अदरक से मिलकर विशेष अर्घ्य बनता है।

अब उच्छिष्ट भैरव को बलि प्रदान करें–

ॐ उच्छिष्ट भैरव एहि एहि बलिं गृहण गृहण हुं फट् स्वाहा।" और प्रणाम करें।

अब पूजागृह से बाहर जाकर बटुक वाहन को बलि प्रदान करें– एक चतुरस्र मण्डल बनाकर उसमें बलि रखकर बटुक वाहन को प्रदान करें–

"बटुक वाहन इमां पूजां बलिं च गृहण गृहण स्वाहा।" तथा जल छिड़कें।

तद्ोपरान्त हाथ-पैर धोकर पूजागृह में प्रवेश कर आसन पर बैठकर आचमन कर शान्ति पाठ करें। फिर निर्माल्य सहित नैवेद्य की बलि प्रदान करने हेतु उच्छिष्ट चाण्डालिनी का ध्यान करें तथा बलि स्वीकार करने हेतु प्रार्थना करें–

"ऐं नमः उच्छिष्टचाण्डालिनी मातंगिसर्वजनवशंकरी इमां पूजां बलिं च गृहण गृहण स्वाहा।"

इसके उपरान्त अज्ञानवश हुई त्रुटि के लिए क्षमा मांगते हुए भगवती से प्रार्थना करें–

॥ प्रार्थना ॥

ॐ यद् दत्तं भक्तिमात्रेण पत्रं पुष्पं फलं जलम्।
निवेदितं च नैवेद्यं तद् गृहाणाऽनुकम्पया॥
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजामर्चां न जानामि त्वं गतिः परमेश्वरि॥
कर्मणा मनसा वाचा त्वत्तो नान्या गतिर्मम।
अन्तश्चारेण भूतानां दृष्टि त्वं परमेश्वरि॥
मातर्योनि - सहस्रेषु येषु येषु व्रजाम्यहम्।
तेषु तेष्वचला भक्तिर-व्ययाऽस्तु सदा त्वयि॥
देवी दात्री च भोक्त्री च देवी सर्वमिदं जगत्।
देवी जयति सर्वत्र या देवी साऽहमेव च॥
ॐ रश्मिरूपा महेशान्याश्चात्र पूजित देवताः।
श्वेताम्बरांगे लीनास्ताः सन्तु सर्व सुखावहा॥
ॐ तिष्ठ तिष्ठ परंस्थान स्वस्थानं परमेश्वरि!।
यत्र ब्रह्मादयो देवाः सुरास्तिष्ठन्ति मे हृदि॥
यदक्षर - पद - भ्रष्टं मात्राहीनं च यद् भवेत्।
तत् सर्वं क्षम्यतां देवी प्रसीद परमेश्वरि॥

प्रदक्षिणा– इस प्रकार भगवती से क्षमा-प्रार्थना करने के

उपरान्त अग्रिम मन्त्र बोलते हुए परिक्रमा करें–

यानि कानि च पापानि जन्मान्तर कृतानी च।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणे पदे पदे॥

इसके बाद आचमनी से जल छोड़ते हुए "अनया पूजया श्री महामाया धूमावती प्रियताम्। ॐ तत्सत्" बोलकर भगवती को दण्डवत् प्रणाम करें।



पृष्ठ 10 का शेष

आदौ काली च तद्-यक्षी महा-'मधुमति' परा,
द्वितीया 'भ्रमराम्बा' च सुन्दर्या सुर-सुन्दरी।
भैरव्या 'श्चन्द्र-रेखा' च यक्षिणी परिकीर्तिता,
तारायास्तारिणी यक्षी 'विकटा पद्म-नायिका'।।
छिन्नाया 'लम्पटा' यक्षी बगलाया 'विडालिका',
कमलायास्तु 'धनदा' भुवनेश्याः शृणु प्रिये!
'त्रैलोक्य-मोहिनी' यक्षी मातंग्याः शृणु पार्वति!
'श्रीमनो-हारिणी' प्रोक्ता धूमावत्याः शृणु प्रिये!
'भीषणी' यक्षिणी प्रोक्ता प्रोक्तेयं दश यक्षिणी।
एतद्-ज्ञानतो देवि! न हि सिद्ध्यन्ति कुत्र-चित्।।

इस प्रकार दश यक्षिणियों के नामों का ज्ञान होता है–

महाविद्या		यक्षिणी
1. काली	:	महा-मधुमती
2. तारा	:	विकटा पद्म-नायिका
3. षोडशी	:	भ्रमराम्बा सुर-सुन्दरी
4. भुवनेश्वरी	:	त्रैलोक्य-मोहिनी
5. भैरवी	:	चन्द्ररेखा
6. छिन्नमस्ता	:	लम्पटा
7. धूमावती	:	भीषणी
8. बगलामुखी	:	विडालिका

शेष पृष्ठ 122 पर

अध्याय 8

श्री धूमावती कवचम्

॥ दशांगों में मुख्य अंग ॥

अर्चन के दश अंगों में कवच भी एक मुख्य अंग है। जिस प्रकार राज्य-प्राप्ति के लिए किले, खाई, तोप, हथियार, रथ तथा धन आदि की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार सिद्धि (राज्य) पर विजय प्राप्ति के लिए भी इन सबकी आवश्यकता होती है। राजा (साधक) यदि कवच नहीं पहनेगा तो रण (मन्त्र-सिद्धि) में विजय प्राप्ति के स्थान पर पीठ दिखानी पड़ सकती है।

॥ कवच की महत्ता ॥

साधना-काल में कवच किस प्रकार पहना जाता है? आदिगुरु शंकराचार्य जी कहते हैं कि– **"कवचं कवचरूपं स्यात्"**– अपने इष्ट-देवता का कवच-पाठ करना ही कवच पहनना है। वास्तव में कवच एक रक्षा उपकरण होता है जो योद्धा (साधक) को आयुधों के आघातों से रक्षा करने में अति सहायक सिद्ध होता है। साधक द्वारा अपने इष्ट-देवता का कवच-पाठ अदृष्ट आसुरी शक्तियों से रक्षा

करने के साथ-साथ अनेकानेक रूप से सिद्धिदायक भी होता है। इसलिए कहा गया है कि– **"पठित्वा धारयित्वा तु त्रैलोक्ये विजयी भवेत्।"** इसके अतिरिक्त **"सारूप्यं कवचाख्यं"** अर्थात् कवच से देवता का सारूप्य प्राप्त होता है। कवच स्तोत्र सदैव साधक के साथ सहचर बनकर रहे **"स्तोत्र सहचरो भवेत्"** अर्थात् उसका सदैव पाठ होता रहे तो इससे हमें अपने इष्टदेव का सायुज्य प्राप्त होगा।

अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि **"पठनाद् धारणादस्य पूजनात् वांछितं लभेत्"** अर्थात् कवच का पाठ करने से बाह्य अदृश्य आसुरी शक्तियों से रक्षा होने के साथ-साथ वांछित फल भी प्राप्त होते हैं। इसीलिए पूजन अथवा साधना-क्रम में कवच-पाठ अतीव आवश्यक अंग है। इसी क्रम में यहां भगवती धूमावती के विशिष्ट कवच का उल्लेख किया जा रहा है।

॥ प्रमाणीकरण की आवश्यकता ॥

साधकों को मेरा परामर्श है कि धूमावती एक तीव्र विद्या है, अतः पुस्तक से पढ़कर प्रयोगों का सम्पादन, साधक के लिए अनिष्टकारक हो सकता है। पुस्तक में पढ़ें, यह एक अच्छी बात है, लेकिन जब तक पुस्तकीय विधान को अपने सद्गुरु से प्रमाणित न करा लें तब तक उस प्रयोग को करने की भूल कदापि न करें। इस कवच के माध्यम से काफी प्रयोग सम्पादित किये जाते हैं, जो गुरुमुख से ज्ञात करना ही उत्तम एवं आवश्यक है।

श्री पार्वत्युवाच–

धूमावत्यर्चनं शंभो श्रुतं विस्तारतोमया।
कवचं श्रोतुमिच्छामि तस्या देव वदस्व मे॥१॥

श्री भैरव उवाच–

शृणु देवि परंगुह्यं न प्रकाश्यं कलौयुगे।
कवचं धूमावत्याश्शत्रुनिग्रह कारकम्॥२॥
ब्रह्माद्या देवि सततं यद्वशादरिघातिनः।
योगिनोऽभवन्छत्रुघ्ना यस्या ध्यानप्रभावतः॥३॥

विनियोग– ॐ अस्य श्री धूमावती-कवचस्य पिप्पलाद ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्री धूमावती देवता, धूं बीजं, स्वाहा शक्तिः, धूमावती कीलकं, शत्रुहनने पाठे विनियोगः।

॥ कवच-पाठ ॥

ॐ धूं बीजं मे शिरः पातु धूं ललाटं सदाऽवतु।
धूमा नेत्र युगम्पातु वती कर्णौ सदाऽवतु॥
दीर्घा तूदर-मध्ये तु नाभिं मे मलिनाम्बरा।
शूर्प-हस्ता पातु गुह्यं रूक्षा रक्षतु जानुनी॥
मुखं मे पातु भीमाख्या स्वाहा रक्षतु नासिकाम्।
सर्वा विद्याऽवतु कण्ठं विवर्णा बाहुयुग्मकम्॥
चंचला हृदयं पातु दुष्टा पार्श्वं - सदाऽवतु।
धूमहस्ता सदा पातु पादौ पातु भयावहा॥

प्रवृद्ध - रोमा तु भृशंकुटिला कुटिलेक्षणा।
क्षुत्पिपासादिर्दता देवी भयदा कलहप्रिया॥
सर्वांगम्पातु मे देवी सर्व - शत्रु विनाशिनी।
इति ते कवचं-पुण्यं-कथितं भुवि दुर्लभम्॥
न प्रकाश्यं न प्रकाश्यं न प्रकाश्यं कलौयुगे।
पठनीयं महादेवि त्रिसन्ध्यन्ध्यान तत्परैः॥
दुष्टाभिचारो देवेशि तद्गात्रन्नैव संस्पृशेत्॥

(इति भैरवी-भैरव सम्वादे धूमावतीतत्वे धूमावती कवचं सम्पूर्णम्)



अध्याय 9

श्री धूमावती हृदयम्

किसी भी देवी या देवता से सम्बन्धित हृदय स्तोत्र देवता का हृदय ही होता है। यह स्तोत्र भगवती धूमावती से सम्बन्धित है। उनके हृदय में बस जाना या फिर उन्हें अपने हृदय में बसा लेना— ये दोनों ही विकल्प इस पाठ का उद्‌देश्य है। उनके हृदय में निवास कर पाना तो एक दिवा-स्वप्न मात्र ही है, क्योंकि इसके लिए तो परम शक्तिमान भी लालायित रहते हैं। हां, हमारी भक्ति के प्रसाद-स्वरूप यह फल अवश्य मिल सकता है कि ये विश्वाश्रय हमारे हृदय में बस जायें और वास्तव में जीवन का यही तो लक्ष्य है, तभी तो हमारा उद्धार सम्भव है।

विनियोग— ॐ अस्य श्री धूमावती-हृदय-स्तोत्र-मन्त्रस्य पिप्लाद ऋषि, अनुष्टुप् छन्दः, श्री धूमावती देवता, धूं बीजं, ह्रीं शक्ति, क्लीं कीलकं सर्व-शत्रु-संहारणे पाठे विनियोगः।

अंगन्यास—

धां हृदयाय नमः।

धीं शिरसे स्वाहा।

धूं शिखायै वषट्।

धैं कवचाय हुम्।

धौं नेत्रत्रयाय वौषट्।

धः अस्त्राय फट्।

करन्यास–

धां अंगुष्ठाभ्यां नमः।

धीं तर्जनीभ्यां स्वाहा।

धूं मध्यमाभ्यां वषट्।

धैं अनामिकाभ्यां हुम्।

धौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्।

धः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

॥ ध्यानम् ॥

धूम्राभान्धूम्र - वस्त्रां - प्रकटितदशनां - मुक्त - बालाम्बराढ्यां,
काकांकस्यन्दनस्थां - धवलकरयुगां शूर्पहस्तातिरूक्षाम्।
नित्यं क्षुत्क्षान्तदेहां-मुहुरति-कुटिलां वारिवांछाविचित्तां,
ध्यायेद्-धूमावती-वामनयन-युगलां-भीतिदां-भीषणास्याम्॥१॥

॥ स्तोत्र ॥

कल्पादौ या कालिकाद्याऽचीकलन्मधु-कैटभौ।
कल्पान्ते त्रिजगत्सर्वं धूमावतीं भजामिताम्॥२॥
खटवांग-धारिणी खर्वा खण्डिनी खल-रक्षसाम्।
धारिणी खेटकस्यापि धूमावतीं भजामिताम्॥३॥

गुणागारा गम्यगुणा या गुणा गुणवर्धिनी।
गीता - वेदार्थ - तत्वज्ञै - धूमावतीं भजामिताम्॥४॥
घूर्ण्ण-घूर्ण्णकरा घोरा घर्ण्णिताक्षी घनस्वना।
घातिनी घातकानां या धूमावतीं भजामिताम्॥५॥
चर्वन्तिं-अस्थि-खंडानां-चण्डमुण्ड विदारिणीम्।
चण्डाट्टहासिनीं - देवीं - भजे धूमावतीमहम्॥६॥
छिन्नग्रीवां - क्षताच्छन्नांछिन्नमस्ता -स्वरूपिणीम्।
छेदिनीन्दुष्ट - संङघानां - भजे धूमावतीमहम्॥७॥
जाता या याचिता देवैरसुराणां विघातिनीम्।
जल्पन्ति बहु गर्जन्ति भजे तां धूम्रस्वरूपिणीम्॥८॥
झंकारकारिणा झंझा झंझमाझमवादिनीम्।
झटित्याकर्षिणीं - देवीं भजे धूमावतीमहम्॥९॥
टीपटंकार - संयुक्तां - धनुषटंकार - कारिणीम्।
घोरा घनघटाटोपां वन्दे धूमावतीमहम्॥१०॥
ठण्ठण्ठण्ठम्मनु-प्रीतिण्ठः ठः मन्त्रस्वरूपिणीम्।
ठमकाह्वगतिप्रीतां भजे धूमावतीमहम्॥११॥
डमरू - डिण्डिमारावां- डाकिनीगण-मण्डिताम्।
डाकिनी - भोग - सन्तुष्टां भजे धूमावतीमहम्॥१२॥
ढक्कना-नादेन-सन्तुष्टां ढक्क्नावादक-सिद्धिदाम्।
ढक्कावाद - चलच्चित्ताम्भजे धूमावतीमहम्॥१३॥
तत्त्वार्ताप्रिय - प्राणां - भवपाथोधि - तारिणीम्।
तारस्वरूपिणीं - ताराम्भजे धूमावतीमहम्॥१४॥

थां थीं थूं थें-मंत्ररूपां थैं थौं थं थः स्वरूपिणीम्।
थकार - वर्ण - सरस्वाम्भजे धूमावतीमहम्॥१५॥
दुर्गा - स्वरूपिणीं - देवीं - दुष्ट-दानवदारिणीम्।
देवदैत्य - कृतध्वंसां वन्दे धूमावतीमहम्॥१६॥
ध्वांताकारांधकध्वं - साम्मुक्त - धर्मालधारिणीम्।
धूमधारा - प्रभान्धीराम्भजे धूमावतीमहम्॥१७॥
नर्तकीनटनप्रीतां - नाट्य - कर्म - विवर्द्धिनीम्।
नारसिंहींनराराध्यां - नौमि धूमावतीमहम्॥१८॥
पार्वतीपति - सम्पूज्यां - पर्वतोपरि - वासिनीम्।
पद्मारूपां - पद्म - पूज्यान्नौमि धूमावतीमहम्॥१९॥
फूत्कारसहितश्वासां - फट्मन्त्र फलदायिनीम्।
फेत्कारिगण - संसेव्यां सेवे धूमवतीमहम्॥२०॥
बलिपूज्यां बलाराधयाम्बगला - रूपिणीं वराम्।
ब्रह्मादिवन्दितां विद्यां वन्दे धूमावतीमहम्॥२१॥
भव्यरूपां - भवाराध्यां - भुवनेशीस्वरूपिणीम्।
भक्त - भव्य - प्रदान्देवीं - भजे धूमावतीमहम्॥२२॥
मायां - मधुमतीं - मान्यां - मकरध्वज - मानिताम्।
मत्स्य - मांसमदा - स्वादामन्ये धूमावतीमहम्॥२३॥
योग - यज्ञ - प्रसन्नास्यां योगिनी - परिसेविताम्।
यशोदां यज्ञफलदां यजे धूमावतीमहम्॥२४॥
श्रामाराध्य - पदद्वन्द्वां रावण - ध्वंसकारिणीम्।
रमेशरमणी - पूज्यामहं धूमावतीं श्रये॥२५॥

लक्षलीलाकला - लक्ष्यां लोकवन्द्य-पदाम्बुजाम्।
लम्बीतां - बीजकोशढ्यां वन्दे धूमावतीमहम्॥२६॥
बकपूज्यपदाम्भोजां - बकध्यान - परायणाम्।
बालाम्बकारि - सन्ध्येयां वन्दे धूमावतीमहम्॥२७॥
शंकरीं शंकरप्राणां संकट - ध्वंसकारिणीम्।
शत्रु - संहारिणीं शुद्धां श्रये धूमावतीमहम्॥२८॥
षडार्ननारिसंहन्त्रीं षोडशी - रूपधारिणीम्।
षड्रसास्वादिनीं सौम्यां सेवे धूमावतीमहम्॥२९॥
सुरसेवित - पादाब्जां सुरसौख्य - प्रदायिनीम्।
सुन्दरीगण - संसेव्यां सेवे धूमावतीमहम्॥३०॥
हेरम्ब-जननीं योग्यां हास्य-लास्य-विहारिणीम्।
हारिणीं शत्रु - संघानां सेवे धूमावतीमहम्॥३१॥
क्षीरोदतीरं - सम्वासां क्षीरपान - प्रहर्षिताम्।
क्षणदेशेज्य - पादाब्जां सेवे धूमावतीमहम्॥३२॥
चतुस्त्रिंशद्वर्णकानां प्रतिवर्णादिनामभिः।
कृतंतु हृदयस्तोत्रं धूमावत्याः सुसिद्धिदम्॥३३॥
यं इदं पठति स्तोत्रं पवित्रं पापनाशनम्।
स प्राप्नोति परां सिद्धिं धूमावत्या प्रसादतः॥३४॥
पठेन्नेकाग्रचित्तो यो यद्यदिच्छति मानवः।
तत्सर्वं समवाप्नोति सत्यं सत्यं वदाम्यहम्॥३५॥

(इति श्री धूमावती हृदयं समाप्तम्)



पृष्ठ 112 का शेष

9. **मातंगी** : **मनोहारिणी**

10. **कमला** : **धनदा**

इनके अतिरिक्त **'हिन्दी मन्त्र-महार्णव'** के अनुसार 36 यक्षिणियों के नामों का उल्लेख प्राप्त होता है–

1. **विचित्रा**
2. **विभ्रमा**
3. **हंसी**
4. **भिक्षिणी**
5. जन-रञ्जिका
6. **विशाला**
7. **मदना**
8. **घण्टा**
9. **काल-कर्णी**
10. **महाभया**
11. **माहेन्द्री**
12. **शंखिनी**
13. **चान्द्री**
14. **श्मशानी**
15. **वट-यक्षिणी**
16. **मेखला**
17. **विकला**
18. **लक्ष्मी**
19. **माननी**
20. **शत-पत्रिका**
21. **सु-लोचना**
22. **सु-शोभना**
23. **कपालिनी**
24. **विलासिनी**
25. **नटी**
26. **कामेश्वरी**
27. **स्वर्ण-रेखा**
28. **सुर-सुन्दरी**
29. **मनोहरी**
30. **प्रमदा (प्रमोदा)**
31. **अनुरागिणी**
32. **नख-केशिका**
33. **नेमिनी (माविनी)**
34. **पद्मिनी (पद्मावती)**
35. **स्वर्णवती, कनकावती**
36. **रति-प्रिया**

अध्याय 10

श्री धूमावती-स्तोत्रम्

भगवती धूमावती का यह स्तोत्र शत्रु-शमन, विघ्नादि का शमन तथा अशुभ ग्रहों के स्तम्भन और दारिद्रय का नाश करने के सन्दर्भ में अतीव प्रतिष्ठित है। जो साधक इस स्तोत्र का पाठ एकाग्रचित्त एवं समर्पित भाव से तीनों संध्याओं में करता है, उसके शत्रुगण उसे मूक होकर देखते रह जाते हैं। उसके सौभाग्य का उदय होता है और शत्रुगण का गर्व खण्डित होता है। सबसे बड़ी बात यह है कि भगवती की कृपा और सानिध्य उस सौभाग्यशाली को प्राप्त होता है।

प्रातर्या स्यात्कुमारी कुसुमकलिकया जापमाला जपन्ती,
मध्याह्ने प्रौढरूपा विकसितवदना चारूनेत्रा निशायाम्॥
सन्ध्यायां वृद्धरूपा गलितकुचयुगां मुण्डमालां वहन्ती,
सा देवी देवदेवी त्रिभुवन-जननी कालिका पातु युष्मान्॥१॥
वद्ध्वा खट्वांगकोटौ कपिलवर-जटामंडलं-पद्मयोनेः,
कृत्वा दैत्योत्त्मांगैस्स्रजमुरसि-शिरः शेखरं ताक्ष्र्यपक्षैः॥
पूर्ण रक्तैस्सुराणां यम-महिष-महा-शृंगमादाय पाणौ,
पायाद्वो वन्द्यमान-प्रलयमुदितया भैरवः कालरात्र्याम्॥२॥

चर्वन्तीमस्थिखण्डं प्रकट-कट-कटा-शब्द-संघातमुग्रं,
कुर्वाणा प्रेतमध्ये कहह-कह-कहा-हास्यमुग्रङ्कृशांगी॥
नित्यन्नित्य प्रसक्ता डमरूडिमडिमां स्फारयन्ती मुखाब्जं,
पायान्नश्चण्डिकेयं झझमझमझमाजल्पमाना भ्रमन्ती॥३॥
टंटंटंटंटंटंटाप्रकरटमटमानादघण्टा वहन्ती,
स्फें स्फें स्फेंस्कारकारा टकटकितहसा नादसंघट्टभीमा॥
लोलण्मुण्डाग्रमाला ललहलहलहालोललोलाग्रवाचं,
चर्वन्तीं चण्डमुण्डं मटमटमटितैश्चर्वयन्ती पुनातु॥४॥
वामे कर्णे मृगांक प्रलय परिगतं दक्षिणे सूर्यबिम्बं,
कण्ठे नक्षत्रहारं वरविकटजटाजूट के मुण्डमालाम्॥
स्कन्धे कृत्वोरगेन्द्रध्वजनिकरयुतं ब्रह्मकंकालभारं,
संहारे धारयन्ती मम हरतु भयं भद्रदा भद्रकाली॥५॥
तैलाभ्यक्तकवेणी त्रपुमयविलसत्कर्णिकाक्रान्तकर्णा,
लौहेनैकेनं कृत्वा चरणनलिनकामात्मनः पादशोभाम्॥
दिग्वासा रासभेन ग्रसति जगदिदं या यवाकर्णपूरा,
वर्षिण्यातिप्रवृद्धा ध्वजविततभुजा सासि देवि त्वमेव॥६॥
संग्रामे हेतिकृत्तैः सरूधिरदशनैर्यद्भटानां शिरोभिर्माला-
माबद्धय मूर्ध्नि ध्वजविततभुजा त्वं श्मशाने प्रविष्टा॥
दृष्टा भूतप्रभूतैः पृथुतरज घनाबद्धनागेन्द्रकाञ्ची,
शूलाग्रव्यग्रहस्ता मधुरुधिरसदाताम्रनेत्रा निशायाम्॥७॥

दंष्ट्रारौद्रे मुखेऽस्मिस्तव विऽशति जगद्देवि सर्वं क्षणार्द्धात्,
संसारस्यान्तकाले नररुधिरवशासम्प्लवे धूमधूम्रे॥
काली कापालिकी सा शवशयनरता योगिनी योगमुद्रा,
रक्ता ऋद्धिः सभास्था मरणभयहरा त्वं शिवा चंडघंटा॥८॥
धूमावत्यष्टकं पुण्यं सर्वापद्विनिवारकम्॥
यः पठेत्साधको भक्त्या सिद्धि विंदति वाञ्छिताम्॥९॥
महापदि महाघोरे महारागे महारणे॥
शत्रुच्चाटे मारणादौ जन्तुनां मोहने तथा॥१०॥
पठेत्स्तोत्रमिदं देवि सर्वत्र सिद्धिभाग्भवेत्॥
देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः॥११॥
सिंहव्याघ्रादिकाः सर्वे स्तोत्रस्मरणमात्रतः॥
दूराद्दरतरं यान्ति किं पुनर्मानुषादयः॥१२॥
स्तोत्रेणानेन देवेशि किं न सिद्ध्यति भूतले॥
सर्वशान्तिर्भवेद्देवि अन्ते निर्वाणतां व्रजेत॥१३॥

(इत्यूद्र्ध्वाम्नाये धूमावती स्तोत्रं समाप्तम्)



॥ नोट करने योग्य ॥

अध्याय 11

श्री धूमावती शतनाम स्तोत्रम्

भगवती धूमावती के एक सौ आठ नामों का यह परम पुनीत स्तोत्र है, जिसे एक बार पूरा पढ़ने से एक आवृत्ति पूर्ण होती है। महामाया धूमावती का यह स्तोत्र घोर पाप-नाशक और शत्रु-विनाशक है। इसका पाठ करने मात्र से ही शत्रु का विलय हो जाता है। यदि सम्भव हो सके तो किसी कालरात्रि अथवा ग्रहण काल में इस स्तोत्र की एक सौ आठ की संख्या में आवृत्तियां कर लेनी चाहिए।

ॐ धूमावती धूम्रवर्णा धूम्रपान - परायणा।
धूम्राक्ष - मथिनी धन्या धन्य-स्थान-निवासिनी॥१॥
अघोराचार - सन्तुष्टा अघोराचार - मण्डिता।
अघोरमन्त्र - सम्प्रीता अघोरमन्त्र - पूजिता॥२॥
अट्टाट्टहास - निरता मलिनाम्बर - धारिणी।
वृद्धा विरूपा विधवा विद्या च विरलद्विजा॥३॥
प्रवृद्ध - घोणा कुमुखी कुटिला कुटिलेक्षणा।
कराली च करालास्या कंकाली शूर्पधारिणी॥४॥

काकध्वजा - रथारूढा केवला कठिना कुहूः।
क्षुत्पिपासार्दिदता नित्या ललज्जिह्वा दिगम्बरी।।५।।
दीर्घोदरी दीर्घरवा दीर्घांगी दीर्घमस्तका।
विमुक्त-कुन्तला कीर्त्या कैलासस्थान-वासिनी।।६।।
क्रूरा कालस्वरूपा च कालचक्र-प्रवर्तिनी।
विवर्णा चञ्चला दुष्टा दुष्ट-विध्वंसकारिणी।।७।।
चंडी चंड-स्वरूपा च चामुण्डा चण्ड-निस्स्वना।
चण्डवेगा चण्ड-गतिश्च चण्डमुण्ड-विनाशिनी।।८।।
चाण्डालिनी चित्ररेखा चित्रांगी चित्रस्वरूपिणी।
कृष्णा कपर्दिनी कुल्ला कृष्णारूपा क्रियावती।।९।।
कुम्भस्तनी महोन्मत्ता मदिरा-पान-विह्वला।
चतुर्भुजा ललज्जिह्वा शत्रु - संहार - कारिणी।।१०।।
शवारूढा - शवगता श्मशान-स्थान-वासिनी।
दुराराध्या दुराचारा दुर्जन - प्रीति - दायिनी।।११।।
निर्मांसा च निराकार धूमहस्ता वरान्विता।
कलहा च कलिप्रीता कलिकल्मषनाशिनी।।१२।।
महाकालस्वरूपा च महाकाल - प्रपूजिता।
महादेवप्रिया मेधा महासंकट - हारिणी।।१३।।
भक्तप्रिया भक्त-गतिर्भक्त-शत्रु-विनाशिनी।
भैरवी भुवना भीमा भारती भुवनात्मिका।।१४।।
भरूण्डा भीमनयना त्रिनेत्रा बहुरूपिणी।
त्रिलोकेशी त्रिकालज्ञा त्रिस्वरूपा त्रयीतनुः।।१५।।

त्रिमूर्तिश्च तथा तन्वी त्रिशक्तिश्च त्रिशूलिनी।
इति धूमामहत्स्तोत्रं नाम्नामष्ट - शतात्मकम्॥१६॥
मया ते कथितं देवि शत्रु-संघ विनाशनम्।
कारागारे रिपुग्रस्ते महोत्पाते महाभये॥१७॥
इदं स्तोत्रं पठेन्मर्त्यो मुच्यते सर्वसंकटैः।
गुह्याद्गुह्यतरं गुह्यंगोपनीयं प्रयत्नतः॥१८॥
चतुष्पदार्थदन्नृणां सर्वसम्पत्प्रदायकम्॥१९॥

(इति श्री धूमावती शतनाम स्तोत्रम् समाप्तम्)



॥ नोट करने योग्य ॥

अध्याय 12

श्री धूमावती सहस्रनाम स्तोत्रम्

जब हम अपने बहुत प्रिय किसी देवी-देवता की पूजा-अर्चना करते हैं तब उस पूजा में कोई पाठ अथवा स्तोत्र आदि ऐसा अवश्य होता है, जिसे करते हुए हमें अत्यधिक आनन्द की प्राप्ति होती है। उस पाठ अथवा स्तोत्र को बार-बार करने का मन होता है। अपने उस देवी अथवा देवता का चिन्तन करते-करते हमारी आंखों से अश्रुधारा प्रवाहित होने लगती है। हृदय भर उठता है, लाख प्रयास करने पर भी आंसू रुक नहीं पाते। ठीक ऐसी ही स्थिति इस सहस्रनाम की है। इस प्रकरण में पहले सहस्रनामों को श्लोक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। उसके बाद मेरे द्वारा सहस्रनामों को नामार्चन के रूप में उल्लिखित किया गया है। इस प्रयोग में हम भगवती धूमावती के प्रत्येक नाम को बोलकर उसके अन्त में 'नमः' शब्द बोलते हैं और कुछ सामग्री धूमावती यन्त्र अथवा उनकी मूर्ति या चित्र पर छोड़ते जाते हैं। इस सामग्री में हम काजू, श्वेत पुष्प अथवा श्वेत चावलों का प्रयोग करते हैं। आप भी इस प्रयोग को करके देखिये, जितना प्रेम, समर्पण और भाव आप प्रस्तुत कर सकते हैं, करिये। इस अर्चन में यह भी भाव रखिये कि आपके प्रत्येक अर्चन के साथ आपके कष्ट, आपकी पीड़ा

भी एक-एक करके समाप्त होती जा रही है। विश्वास कीजिये! इसका बहुत ही उत्तम परिणाम आप कुछ ही समय बाद स्वयं देखेंगे।

श्रीदेव्युवाच–

धूमावत्या धर्मरात्र्याः कथयस्व महेश्वर।
सहस्रनामस्तोत्रं मे सर्वसिद्धि प्रदायकम्॥१॥

श्री भैरव उवाच–

शृणु देवि महामाये प्रिये - प्राणस्वरूपिणी।
सहस्र - स्तोत्रं मे भवशत्रु - विनाशनम्॥२॥

विनियोग– ॐ अस्य श्री धूमावती सहस्रनाम स्तोत्रस्य पिप्लाद ऋषिः, पंक्तिश्छन्दो, धूमावती देवता, शत्रु विनिग्रहे पाठे विनियोगः।

॥ स्तोत्र ॥

धूमा धूमवती धूमा धूमपान परायणा।
धौता धौतगिरा धाम्नी धूमेश्वर - निवासिनी॥३॥
अनन्ता अनन्तरूपा च अकाराकाररूपिणी।
आद्या आनन्ददानन्दा इकारा इन्द्ररूपिणी॥४॥
धनधान्यार्त्थ - वाणीदा यशोधर्म - प्रियेष्टदा।
भाग्य सौभाग्य - भक्तिस्था गृह - पर्वतवासिनी॥५॥
राम - रावण - सुग्रीव मोहदा हनुमत्प्रिया।
वेदशास्त्रा - पुराणज्ञा ज्योतिश्छन्दःस्वरूपिणी॥६॥

चातुर्यचारूरूचिरा रञ्जन - प्रेम - तोषदा।
कमलासन - सुधावक्त्रा चन्द्रहासा स्मितानना॥७॥
चतुरा चारूकेशी च चतुर्वर्गप्रदा मुदा।
कला कलाधरा धीरा धाारिणी वसुनीरदा॥८॥
हीरा हीरकवर्णाभा हरिणायतलोचना।
दम्भ - मोह - क्रोध - लोभ - स्नेह - द्वेषहरा परा॥९॥
नरदेवकरी रामा रामानन्द मनोहरा।
योग - भोग - क्रोध - लोभहरा हर - नमस्कृता॥१०॥
दानमान - ज्ञानमान - पानगान सुखप्रदा।
गजगोश्वपदा - गञ्जा भूतिदा भूतनाशिनी॥११॥
भवभावा तथा बाला वरदा हरवल्लभा।
भगभंगभया माला मालतीतालना ह्लदा॥१२॥
जाल-वाल-हाल-काल कपाल - प्रियवादिनी।
करञ्जशील - गुञ्जाढ्या चूतांकुर - निवासिनी॥१३॥
पनसस्था पानसक्ता पनशेश - कुटुम्बिनी।
पावनी पावनाधारापूर्णा पूर्ण मनोरथा॥१४॥
पूत पूतकला पौरा पुराण सुरसुन्दरी।
परेशी परदा पारा परात्मा परमोहिनी॥१५॥
जगन्माया जगत्कर्त्री जगत्कीर्तिर्जगन्मयी।
जननी जयनि जायाजिता जिनजयप्रदा॥१६॥
कीर्ति - ज्ञान - ध्यान - मानदायिनी दानवेश्वरी।
काव्य - व्याकरणज्ञाना प्रज्ञा - प्रज्ञानदायिनी॥१७॥

विज्ञाज्ञा विज्ञजयदा विज्ञा विज्ञ - प्रपूजिता।
परावरेज्या वरदा पारदा शारदा दरा॥१८॥
दारिणी देवदूती च मदना मदनामदा।
परमज्ञानगम्या च परेशी परगा परा॥१९॥
यज्ञा यज्ञप्रदा यज्ञज्ञानकार्यकरी शुभा।
शोभिनी शुभ्रमथिनी निशुम्भासुर मर्दिनी॥२०॥
शाम्भवी शम्भुपत्नी च शम्भुजाया शुभानना।
शांकरी शंकराराध्या सन्ध्या सन्ध्यासुधर्मिणी॥२१॥
शत्रुघ्नी शत्रुहा शत्रुप्रदा शात्रवनाशिनी।
शैवी शिवलया शैला शैलराजप्रिया सदा॥२२॥
शर्वरी शबरी शम्भुः सुधाढ्या सौधवासिनी।
सगुणा गुणरूपा च गौरवी भैरवीरवा॥२३॥
गौरांगी गौरदेहा च गौरी गुरुमती गुरुः।
गौर्गौर्गव्यस्वरूपा च गुणानन्दस्वरूपिणी॥२४॥
गणेशगणदा गुण्या गुणा गौरव - वाञ्छिता।
गणमाता गणाराध्या गणकोटिविनाशिनी॥२५॥
दुर्गा दुर्जनहन्त्री च दुर्जनप्रीति - दायिनी।
स्वर्गापवर्गदा दात्री दीना दीनदयावती॥२६॥
दुर्निरीक्ष्या दुरादुःस्था दौःस्थ्यभञ्जनकारिणी।
श्वेतपाण्डरकृष्णाभा कालदा कालनाशिनी॥२७॥
कर्मनर्मकरी नर्मा धर्माधर्मविनाशिनी।
गौरी गौरवदा गोदा गणदा गायनप्रिया॥२८॥

गंगा भागीरथी भंगा भगा भाग्यविवर्द्धिनी।
भवानी भवहन्त्री च भैरवी भैरवीसमा॥२९॥
भीमा भीमरवा भैमी भीमानन्द प्रदायिनी।
शरण्या शरणा शम्या शशिनी शंखनाशिनी॥३०॥
गुणा गुणकरी गौणी प्रियाप्रीतिप्रदायिनी।
जनमोहनकर्त्री च जगदानन्ददायिनी॥३१॥
जिता जाया च विजया विजया जयदायिनी।
कामा काली करालास्या खर्वा खञ्जा खरा गदा॥३२॥
गर्वा गरुत्मती धर्मा घर्घरा घोरनादिनी।
चराचरी चराराध्या छिन्ना छिन्नमनोरथा॥३३॥
छिन्नमस्ता जया जाप्या जगज्जाया च झर्झरी।
झकारा झीष्कृतिष्टीका टंका टंकारनादिनी॥३४॥
ठीका ठक्कुर ठक्कांगी ठठठंकारढुण्ढुरा।
ढुण्ढीताराजतीर्णा च तालस्थाभ्रमनाशिनी॥३५॥
थकारा थकरा दात्री दीपा दीपविनाशिनी।
धन्या धना धनवती नर्मदा नर्ममोदिनी॥३६॥
पद्मा पद्मावती पीता स्फान्ता फूत्कारकारिणी।
फुल्ला ब्रह्ममयी ब्राह्मी ब्रह्मानन्द - प्रदायिनी॥३७॥
भवाराध्या भवाध्यक्षा भगाली मन्दगामिनी।
मदिरा मदिरेक्षा च यशोदा यमपूजिता॥३८॥
याम्या राम्या रामरूपा रमणी ललिता लता।
लंकेश्वरी वाक्प्रदा वाच्या सदाश्रमवासिनी॥३९॥

श्रान्ता शकाररूपा च षकारा खरवाहना।
सह्यादिरूपा सानन्दा हरिणी हरिरूपिणी॥४०॥
हराराध्या बालवा च लवंगप्रेमतोषिता।
क्षपाक्षयप्रदा क्षीरा अकारादिस्वरूपिणी॥४१॥
कालिका कालमूर्तिश्च कलहा कलहप्रिया।
शिवा शन्दायिनी सौम्या शत्रुनिग्रहकारिणी॥४२॥
भवानी भवमूर्तिश्च शर्वाणी सर्वमंगला।
शत्रुविद्राविणी शैवी शुम्भासुर - विनाशिनी॥४३॥
धकारमन्त्ररूपा च धूं बीजपरितोषिता।
धनाध्यक्षसुता धीरा धरारूपा धरावती॥४४॥
चर्विणी चन्द्रपूज्या च छन्दोरूपा छटावती।
छाया छायावती स्वच्छा छेदिनी मेदिनी क्षमा॥४५॥
वलिनी वर्द्धिनी वन्द्या वेदमाता बुधस्तुता।
धारा धारावती धन्या धर्मदानपरायणा॥४६॥
गर्विणी गुरुपूज्या च ज्ञानदात्री गुणान्विता।
धर्मिणी धर्मरूपा च घण्टानादपरायणा॥४७॥
घण्टानिनादिनी घूर्णा घूर्णिता घोररूपिणी।
कलिघ्नी कलिदूती च कलिपूज्या कलिप्रिया॥४८॥
कालनिर्णाशिनी काल्या काव्यदा कालरूपिणी।
वर्षिणी वृष्टिदा वृष्टिर्महावृष्टिनिवारिणी॥४९॥
घातिनी घाटिनी घोण्टा घातकी घनरूपिणी।
धूं बीजा धूं जपा नन्दा धूं बीज जपतोषिता॥५०॥

धूं धूं बीजजपासक्ता धूं धूं बीजपरायणा।
धूं कारहर्षिणी धूमा धनदा धनगर्विता॥५१॥
पद्मावती पद्ममाला पद्मयोनिप्रपूजिता।
अपारा पूरणी पूर्णा पूर्णिमापरिवन्दिता॥५२॥
फलदा फलभोक्त्री च फलिनी फलदायिनी।
फूत्कारिणी फलवाप्त्री फलभोक्त्री फलान्विता॥५३॥
वारिणी वारणप्रीता वारिपाथोधिपारगा।
विवर्णा धूम्रनयना धूम्राक्षी धूम्ररूपिणी॥५४॥
नीतिर्नीतिस्वरूपा च नीतिज्ञा नयकोविदा।
तारिणीताररूपा च तत्त्वज्ञानपरायणा॥५५॥
स्थूला स्थूलाधरा स्थात्री उत्तमस्थान वासिनी।
स्थूला पद्मपदस्थाना स्थानभ्रष्टा स्थलस्थिता॥५६॥
शोषिणी शोभिनी शीता शीतपानीयपायिनी।
शारिणी शांखिनी शुद्धा शंखासुरविनाशिनी॥५७॥
शर्वरी शर्वरीपूज्या च शर्वरीशप्रपूजिता।
शर्वरीजागृता योग्या योगिनी योगिवन्दिता॥५८॥
योगिनीगणसंसेव्या योगिनीयोग भाविता।
योगमार्गरता युक्ता योगमार्गानुसारिणी॥५९॥
योगभावा योगयुक्ता यामिनीपतिवन्दिता।
अयोग्या योधिनी योद्ध्री युद्धकर्मविशारदा॥६०॥
युद्धमार्गरतानन्ता युद्धस्थाननिवासिनी।
सिद्धा सिद्धेश्वरी सिद्धिः सिद्धिगेहनिवासिनी॥६१॥

सिद्धरीतिः सिद्धप्रीतिः सिद्धा सिद्धान्तकारिणी।
सिद्धगम्या सिद्धपूज्या सिद्धवन्द्या सुसिद्धिदा॥६२॥
साधिनी साधनप्रीता साध्या साधनकारिणी।
साधनीया साध्यसाध्या साध्यसंघसुशोभिनी॥६३॥
साध्वी साधुस्वभावा सा साधुसन्तति दायिनी।
साधुपूज्या साधुवन्द्या साधसन्दर्शनीद्यता॥६४॥
साधुदृष्टा साधुपृष्टा साधुपोषणतत्परा।
सात्त्विकी सत्त्वसंसिद्धा सत्त्वसेव्या सुखोदया॥६५॥
सत्त्ववृद्धिकरी शान्ता सत्त्वसंहर्षमानसा।
सत्त्वज्ञाना सत्त्वविद्या सत्त्वसिद्धान्तकारिणी॥६६॥
सत्त्ववृद्धि सत्त्वसिद्धि सत्त्वसम्पन्नमानसा।
चारुरूपा चारुदेहा चारुचञ्चललोचना॥६७॥
छद्मिनी छद्मसंकल्पा छद्मवार्त्ता क्षमाप्रिया।
हठिनी हठसम्प्रीतिर्हठवार्त्ता हठोद्यमा॥६८॥
हठकार्या हठधर्मा हठकर्मपरायणा।
हठसम्भोगनिरता हठात्काररतिप्रिया॥६९॥
हठसम्भेदिनी हृद्या हृद्यवार्त्ता हरिप्रिया।
हरिणी हरिणीदृष्टिर्हरिणीमांसभक्षणा॥७०॥
हरिणाक्षी हरिणपा हरिणीगण हर्षदा।
हरिणीगणसंहन्त्री हरिणीपरिपोषिका॥७१॥
हरिणीमृगयासक्ता हरिणीमान्पुरःसरा।
दीना दीनकृतिर्दूना द्राविणी द्रविणप्रदा॥७२॥

द्रविणाचलसम्वासा द्रविता द्रव्यसंयुक्ता।
दीर्घा दीर्घप्रदा दृश्या दर्शनीया दृढ़ाकृतिः॥७३॥
दृढ़ा दुष्टमतिर्दुष्टा द्वेषिणी द्वेषिभञ्जिनी।
दोषिणी दोषसंयुक्ता दुष्टशत्रुविनाशिनी॥७४॥
देवतार्तिहरा दुष्टदैत्यसंघविनाशिनी।
दुष्टदानवहन्त्री च दुष्टदैत्यनिषूदिनी॥७५॥
देवताप्राणदा देवी देवदुर्गतिनाशिनी।
नटनायकसंसेव्या नर्त्तकी नर्त्तकप्रिया॥७६॥
नाट्यविद्या नाट्यकर्त्री नादिनी नादकारिणी।
नवीन नूतना नव्या नवीनवस्त्रधारिणी॥७७॥
नव्यभूषा नव्यमाल्या नव्यालंकारशोभिता।
नकारवादिनी नम्या नवभूषण भूषिता॥७८॥
नीचमार्गा नीचभूमिर्नीचमार्गगतिर्गतिः।
नाथसेव्या नाथभक्ता नाथानन्दप्रदायिनी॥७९॥
नम्रा नम्रगतिर्नेत्री निदानवाक्यवादिनी।
नारीमध्यस्थिता नारी नारीमध्यगताऽनघा॥८०॥
नारीप्रीति नराराध्या नरनामप्रकाशिनी।
रती रतिप्रिया रमया रतिप्रेमा रतिप्रदा॥८१॥
रतिस्थानस्थिताराध्या रतिहर्षप्रदायिनी।
रतिरूपा रतिध्याना रतिरीतिसुधारिणी॥८२॥
रतिरासमहोल्लासा रतिरासविहारिणी।
रतिकान्तस्तुता राशी राशिरक्षणकारिणी॥८३॥

अरूपा शुद्धरूपा च सुरूपा रूपगर्विता।
रूपयौवनसम्पन्ना रूपराशी रमावती॥८४॥
रोधिनी रोषिणी रुष्टा रोषिरूद्धा रसप्रदा।
मादिनी मदनप्रीता मधुमत्ता मधुप्रदा॥८५॥
मद्यपा मद्यपध्येया मद्यपप्राणरक्षिणी।
मद्यपानन्दसन्दात्री मद्यप्रेमतोषिता॥८६॥
मद्यपानरता मत्ता मद्यपानविहारिणी।
मदिरा मदिरारक्ता मदिरापानहर्षिणी॥८७॥
मदिरापानसन्तुष्टा मदिरापानमोहिनी।
मदिरामानसा मुग्धा माध्वीपा मदिराप्रदा॥८८॥
माध्वीदानसदानन्दा माध्वीपानरता सदा।
मोदिनी मोदसन्दात्री मुदिता मोदमानसा॥८९॥
मोदकर्त्री मोददात्री मोदमंगलकारिणी।
मोदकादानसन्तुष्टा मोदकग्रहणक्षमा॥९०॥
मोदकालब्धिसंक्रुद्धा मोदकप्राप्तितोषिणी।
मांसादा मांससम्भक्षा मांसभक्षणहर्षिणी॥९१॥
मांसपाकपरप्रेमा मांसपाकालयस्थिता।
मत्स्य - मांसकृता - स्वादामकारपंचकार्चिता॥९२॥
मुद्रा मुद्रान्विता माता महामोहामनस्विनी।
मुद्रिका मुद्रिकायुक्ता मुद्रिकाकृतलक्षणा॥९३॥
मुद्रिकालंकृता माद्री मन्दराचलवासिनी।
मन्दराचलसंसेव्या मन्दराचलभाविनी॥९४॥

मन्दरध्येयपादाब्जा मन्दरारण्यवासिनी।
मन्दुरावासिनी मन्दा मारिणी मारिका मिता॥९५॥
महामारी महामारीशमिनी शवसंस्थिता।
शवमांसकृताहारा श्मशानालयवासिनी॥९६॥
श्मशानसिद्धिसंहृष्टा श्मशानभवनस्थिता।
श्मशानशयनागारा श्मशानभस्मलेपिता॥९७॥
श्मशानभस्मभीमांगी श्मशानावासकारिणी।
शामिनी शमनाराध्या शमनस्तुतिवन्दिता॥९८॥
शमनाचारसन्तुष्टा शमनागारवासिनी।
शमनस्वामिनी शान्तिः शान्तसज्जनपूजिता॥९९॥
शान्तापूजापरा शान्ता शान्तागारप्रभोजिनी।
शान्तपूज्या शान्तवन्द्या शान्तग्रहसुधारिणी॥१००॥
शान्तरूपा शान्तियुक्ता शान्तचन्द्रप्रभाऽमला।
अमला विमलाऽम्लाना मालतीकुञ्जवासिनी॥१०१॥
मालतीपुष्पसम्प्रीता मालतीपुष्पपूजिता।
महोग्रा महती मध्या मध्यमध्वनिकारिणी॥१०२॥
मध्यमध्वनिसम्प्रीता मध्यमध्वनिकारिणी।
मध्यमा मध्यमप्रीतिर्मध्यमप्रेमपूरिता॥१०३॥
मध्यांगचित्रवसना मध्यखिन्ना महोद्धता।
महेन्द्रसुरसम्पूज्या महेन्द्रपरिवन्दिता॥१०४॥
महेन्द्रजालसंयुक्ता महेन्द्रजालकारिणी।
महेन्द्रमानिता मान्या मानिनीगणमध्यगा॥१०५॥

मानिनीमानसंप्रीता मानविध्वंसकारिणी।
मानिन्याकर्षिणी मुक्तिर्मुक्तिदात्री सुमुक्तिदा॥१०६॥
मुक्तिद्वेषकरी मूल्यकारिणी मूल्यहारिणी।
निर्मूला मूलसंयुक्ता मूलिनी मूलमन्त्रिणी॥१०७॥
मूलमन्त्रकृतार्हाद्या मूलमन्त्रार्घहर्षिणी।
मूलमन्त्रप्रतिष्ठात्री मूलमन्त्रप्रहर्षिणी॥१०८॥
मूलमन्त्रप्रसन्नास्या मूलमन्त्रप्रपूजिता।
मूलमन्त्रप्रणेत्री च मूलमन्त्रकृतार्चना॥१०९॥
मूलमन्त्रप्रहृष्टात्मा मूलविद्या मलापहा।
विद्याऽविद्या वटस्था च वटवृक्षनिवासिनी॥११०॥
वटवृक्षकृतस्थाना वटपूजापरायणा।
वटपूजापरिप्रीता वटदर्शनलालसा॥१११॥
वटपूजाकृताह्लादा वटपूजाविवर्धिनी।
वशिनी विवशाराध्या वशीकरणमन्त्रिणी॥११२॥
वशीकरणसम्प्रीता वशीकारकसिद्धिदा।
बटुका बटुकाराध्या बटुकाहारदायिनी॥११३॥
बटुकार्चापरा पूज्या बटुकार्चाविवर्द्धिनी।
बटुकानन्दकर्त्री च बटुकप्राणरक्षिणी॥११४॥
बटुकेज्याप्रदाऽपारा पारिणी पार्वतीप्रिया।
पर्वताग्रकृतावासा पर्वतेन्द्रप्रपूजिता॥११५॥
पार्वतीपतिपूज्या च पार्वतीपतिहर्षदा।
पार्वतीपतिबुद्धिस्था पार्वतीपतिमोहिनी॥११६॥

पार्वतीयद्विजाराध्या पर्वतस्था प्रतारिणी।
पद्मला पद्मिनी पद्मा पद्ममालाविभूषिता॥११७॥
पद्मजेढ्यपदा पद्ममालालंकृतमस्तका।
पद्मार्चितपदद्वन्द्वा पद्महस्ता पयोधिजा॥११८॥
पयोधिपारगंत्री च पयोधिपरिकीर्तिता।
पाथोधिपारगा पूता पल्वलाम्बुप्रतर्पिता॥११९॥
पल्वलान्तः पयोमग्ना पवमानगतिगर्तिः।
पय पाना पयोदात्री पानीयपरिकांक्षिणी॥१२०॥
पयोजमालाभरणा मुण्डमालाविभूषिता।
मुण्डिनी मुण्डहन्त्री च मुण्डिता मुण्डशोभिता॥१२१॥
मणिभूषा मणिग्रीवा मणिमालाविराजिता।
महामोहा महाशौर्या महामाया महाहवा॥१२२॥
मानवी मानवीपूज्या मनुवंशविवर्द्धिनी।
मठिनी मठसंहन्त्री मठसम्पत्तिहारिणी॥१२३॥
महाक्रोधवती मूढा मूढशत्रुविनाशिनी।
पाठीनभोजिनी पूर्णा पूर्णहारविहारिणी॥१२४॥
प्रलयानलतुल्याभा प्रलयानलरूपिणी।
प्रलयार्णव संमग्ना प्रलयाब्धिविहारिणी॥१२५॥
महाप्रलयसम्भूता महाप्रलयकारिणी।
महाप्रलयसम्प्रीता महाप्रलयसाधिनी॥१२६॥
महाप्रलयसम्पूज्या महाप्रलयमोदिनी।
छेदिनी छिन्नमुण्डोग्रा छिन्ना छिन्नरूहार्थिनी॥१२७॥

शत्रुसंछेदिनीछिन्ना क्षोदिनी क्षोदकारिणी।
लक्षिणी लक्षसम्पूज्या लक्षिता लक्षणान्विता॥१२८॥
लक्षशस्त्रसमायुक्ता लक्षबाणप्रमोचिनी।
लक्षपूजापराऽलक्ष्या लक्षकोदण्डखण्डिनी॥१२९॥
लक्षकोदण्डसंयुक्ता लक्षकोदण्डधारिणी।
लक्षलीलालया लभ्या लक्षागारनिवासिनी॥१३०॥
लक्षलोभपरा लोला लक्षभक्तप्रपूजिता।
लोकिनी लोकसम्पूज्या लोकरक्षणकारिणी॥१३१॥
लोकवन्दितपादाब्जा लोकमोहनकारिणी।
ललिता लालिता लीना लोकसंहारकारिणी॥१३२॥
लोकलीलाकरी लोक्या लोकसम्भवकारिणी।
भूतशुद्धिकरी भूतरक्षिणी भूतपोषिणी॥१३३॥
भूतवेतालसंयुक्ता भूतसेनासमावृता।
भूतप्रेतपिशाचादिस्वामिनी भूतपूजिता॥१३४॥
डाकिनीशाकिनीडेया डिण्डिमारावकारिणी।
डमरूवाद्यसन्तुष्टा डमरूवाद्यकारिणी॥१३५॥
हुंकारकारिणी होत्री हाविनी हवनार्थिनी।
हासिनी हासिनी हास्यहर्षिणी हठवादिनी॥१३६॥
अट्टाट्टहासिनी टीका टीकानिर्माणकारिणी।
टंकिनी टंकिता टंका टंकमात्रसुवर्णदा॥१३७॥
टंकारिणी टंकाराढ्या शत्रुत्रोटनकारिणी।
त्रुटिता त्रुटिरूपा च त्रुटिसन्देहकारिणी॥१३८॥

तर्षिणी तृट्परिक्लान्ता क्षुत्क्षामा क्षुत्परिप्लुता।
अक्षिणी तक्षिणी भिक्षाप्रार्थिनी शत्रुभक्षिणी॥१३९॥
कांक्षिणी कुट्टिनी क्रूरा कुट्टिनीवेश्मवासिनी।
कुट्टिनीकोटिसम्पूज्या कुट्टिनीकुलमार्गिणी॥१४०॥
कुट्टिनी कुलसंरक्षा कुट्टिनीकुलरक्षिणी।
कालपाशावृता कन्या कुमारीपूजनप्रिया॥१४१॥
कौमुदी कौमुदीहृष्टा करुणादृष्टिसंयुता।
कौतुकाचारनिपुणा कौतुकागारवासिनी॥१४२॥
काकपक्षधरा काकरक्षिणी काकसंवृता।
काकांकरथसंस्थाना काकांकस्यन्दनास्थिता॥१४३॥
काकिनी काकदृष्टिश्च काकभक्षणदायिनी।
काकमाता काकयोनिः काकमण्डलमण्डिता॥१४४॥
काकदर्शनसंशीला काकसंकीर्णमन्दिरा।
काकध्यानस्थदेहादिध्यानगम्याऽथमावृता ॥१४५॥
धनिनी धनिसंसेव्या धनच्छेदनकारिणी।
धुन्धुरा धुन्धुराकारा धूम्रलोचनघातिनी॥१४६॥
धूंकारिणी च धूं मन्त्रपूजिता धर्मनाशिनी।
धूम्रवर्णिनी धूम्राक्षी धूम्राक्षासुरघातिनी॥१४७॥
धूं बीजजपसन्तुष्टा धूं बीजजपमानसा।
धूं बीजजपपूजार्हा धूं बीजजपकारिणी॥१४८॥
धूं बीजाकर्षिता धृष्या धर्षिणी धृष्टमानसा।
धूलीप्रक्षेपिणी धूलीव्याप्तधम्मिललधारिणी॥१४९॥

धूं बीजजपमालाढ्या धूं बीजनिन्दकान्तका।
धर्मविद्वेषिणी धर्मरक्षिणी धर्मतोषिता॥१५०॥
धारास्तम्भकरी धर्ता धारावारिविलासिनी।
धां धीं धूं धैं मन्त्रवर्णा धौं धः स्वाहास्वरूपिणी॥१५१॥
धरित्रीपूजिता धूर्वा धान्यच्छेदनकारिणी।
धिक्कारिणी सुधीपूज्या धामोद्यानानिवासिनी॥१५२॥
धामोद्यानपयोदात्री धामधूलिप्रधूलिता।
महाध्वनिमती धूप्या धूपामोदप्रहर्षिणी॥१५३॥
धूपादानमतिप्रीता धूपदानविनोदिनी।
धीवरीगणसम्पूज्या धीवरीवरदायिनी॥१५४॥
धीवरीगणमध्यस्था धीवरीधामवासिनी।
धीवरीगणगोप्त्री च धीवरीगणतोषिता॥१५५॥
धीवरीधनदात्री च धीवरीप्राणरक्षिणी।
धात्रीशा धातृसम्पूज्या धात्रीवृक्षसमाश्रया॥१५६॥
धात्रीपूजनकर्त्री च धात्रीरोणकारिणी।
धूम्रपान रतासक्ता धूम्रपानरतेष्टदा॥१५७॥
धूम्रपानकरानन्दा धूम्रवर्षणकारिणी।
धन्यशब्दश्रुतिप्रीता धुन्धुकारीजनच्छिदा॥१५८॥
धुन्धुकारीष्टसन्दात्री धुन्धुकारिसुमुक्तिदा।
धुन्धुकार्याराध्यरूपा धुन्धुकारिमनस्थिता॥१५९॥
धुन्धुहिताकांक्षा धुन्धुकारीहितैषिणी।
धिन्धिमाराविणी ध्यात्री ध्यानगम्या धनार्थिनी॥१६०॥

धोरिणी धोरणप्रीता धारिणी घोररूपिणी।
धरित्रीरक्षिणी देवी धराप्रलयकारिणी॥१६१॥
धराधरसुताऽशेषधाराधरसमद्युतिः ।
धनाध्यक्षा धनप्राप्तिर्द्धनधान्यविवर्द्धिनी॥१६२॥
धनाकर्षणकर्त्री च धनाहरणकारिणी।
धनच्छेदनकर्त्री च धनहीना धनप्रिया॥१६३॥
धनसंवृद्धिसम्पन्ना धनदानपरायणा।
धनहृष्टा धनपुष्टा दानाध्ययनकारिणी॥१६४॥
धनरक्षा धनप्राणा धनानन्दकरी सदा।
शत्रुहन्त्री शवारूढा शत्रुसंहारकारिणी॥१६५॥
शत्रुपक्षक्षतिप्रीता शत्रुपक्षनिषूदिनी।
शत्रुग्रीवाच्छिदा छाया शत्रुपद्धतिखण्डिनी॥१६६॥
शत्रुप्राणहराहार्या शत्रून्मूलनकारिणी।
शत्रुकार्यविहन्त्री च सांगशत्रुविनाशिनी॥१६७॥
सांगशत्रुकुलच्छेत्री शत्रुसद्मप्रदायिनी।
सांगसायुधसर्वारि सर्वसम्पत्तिनाशिनी॥१६८॥
सांगसायुधसर्वारि - देहगेहप्रदाहिनी ।
इतीदं धूमरूपिण्याः स्तोत्रं नामसहस्रकम्॥१६९॥

॥ फलश्रुति ॥

यः पठेच्छून्यभवने सन्ध्यान्ते यतमानसः।
मदिरामोदयुक्तो वै देवीध्यानपरायणा॥१७०॥

तस्य शत्रुः क्षयं याति यदि शक्रसमोऽपि वै।
भवपाशहरं पुण्यं धूमावत्याः प्रियं महत्॥१७१॥
स्तोत्र सहस्रनामाख्यं मम वक्त्राद्विनिर्गतम्।
पठेद्वा शृणुयाद्वापि शत्रुघातकरो भवेत्॥१७२॥
न देयं परशिष्यायाऽभक्ताय प्राणवल्लभे।
देय शिष्याय भक्ताय देवीभक्तपराय च॥१७३॥
इदं रहस्यं परमं दुर्लभं दुष्टचेतसाम्॥१७४॥

(इति धूमावती-सहस्रनाम-स्तोत्रं सम्पूर्णम्)



अध्याय 13

धूमावती-मन्त्र एवं प्रयोग

1. सप्ताक्षर मन्त्र– धूं धूमावती स्वाहा।

॥ ध्यानम् ॥

ध्यायेत् कालाभ्रनीलां विकलितवदनां काकनासां विकर्णाम्।
संमार्जन्युक शूर्पैयुत मुसल करां वक्रदन्तां विषास्याम्॥
ज्येष्ठां निर्वाणवेषां प्रकुटित नयनां मुक्तकेशी - मुदाराम्।
शुष्कोत्तुंगाति तिर्यक् स्तनभर युगलां निष्कृपां शत्रुहन्त्रीम्॥

विनियोग– ॐ धूमावती सप्ताक्षर मन्त्रस्य नारसिंह ऋषिः, पंक्तिश्छंदः, श्री धूमावती देवता, धूं बीजं, स्वाहा शक्तिः शत्रु-निग्रहे जपे विनियोगः।

इसके उपरान्त ऋष्यादिन्यास करें–

नारसिंह ऋषये नमः शिरसि।

पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे।

धूमावत्यै नमः हृदि।

धूं बीजाय नमः गुह्ये।

स्वाहा शक्तये नमः पादौ।

शत्रु-निग्रहे जपे विनियोगाय नमः सर्वांगे।

इसके बाद षडंगन्यास करें–

ॐ धां हृदयाय नमः।

ॐ धीं शिरसे स्वाहा।

ॐ धूं शिखायै वषट्।

ॐ धैं कवचाय हुम्।

ॐ धौं नेत्रत्रयाय वौषट्।

ॐ धः अस्त्राय फट्।

इसके उपरान्त करन्यास करें–

ॐ धां अंगुष्ठाभ्यां नमः।

ॐ धीं तर्जनीभ्यां स्वाहा।

ॐ धूं मध्यमाभ्यां वषट्।

ॐ धैं अनामिकाभ्यां हुम्।

ॐ धौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्।

ॐ धः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

उपर्युक्तानुसार न्यासादि सम्पन्न करने के उपरान्त यथा-सम्भव जप करें। यदि पुरश्चरण करना हो तो कृष्णपक्ष की चतुर्दशी से उपवास रखते हुए, किसी निर्जन घर, श्मशान अथवा वन-प्रदेश में मौन रहते हुए तथा केवल निशा काल में ही भोजन करते हुए एक लाख की संख्या में जप करें। जप का दशांश होम तिल मिश्रित घी से करें तथा होम का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन तथा मार्जन का दशांश ब्राह्मण भोजन करायें।

2. **अष्टाक्षर मन्त्र– धूं धूं धूमावती स्वाहा।**

तन्त्रान्तर में यह मन्त्र इस प्रकार है–

धूं धूं धूमावती ठः ठः।

विनियोग– ॐ अस्य धूमावती मन्त्रस्य पिप्पलाद ऋषिः, निवृच्छंदः, धूमावती देवता, धूं बीजं, स्वाहा शक्तिः, धूमावती कीलकं शत्रु-निग्रहे जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास–

पिप्पलाद ऋषये नमः शिरसि।

निवृच्छन्दसे नमः मुखे।

धूमावत्यै देवतायै नमः हृदि।

धूं बीजाय नमः गुह्ये।

स्वाहा शक्तये नमः पादौ।

शत्रु-निग्रहे जपे विनियोगाय नमः सर्वांगे।

इसके बाद अंगन्यास करें–

ॐ धां हृदयाय नमः।

ॐ धीं शिरसे स्वाहा।

ॐ धूं शिखायै वषट्।

ॐ धैं कवचाय हुम्।

ॐ धौं नेत्रत्रयाय वौषट्।

ॐ धः अस्त्राय फट्।

इसके उपरान्त करन्यास करें–

ॐ धां अंगुष्ठाभ्यां नमः।

ॐ धीं तर्जनीभ्यां स्वाहा।

ॐ धूं मध्यमाभ्यां वषट्।

ॐ धैं अनामिकाभ्यां हुम्।

ॐ धौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्।

ॐ धः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

इसके उपरान्त निम्नलिखित ध्यान करें–

॥ ध्यान ॥

विवर्णा चञ्चला कृष्णा दीर्घा च मलिनाम्बरा।
विमुक्त-कुन्तला रूक्षा विधवा विरलद्विजा॥१॥
काकध्वज - रथारूढा विलम्बित - पयोधरा।
शूर्पहस्तातिरूक्षाक्षा धूतहस्ता वरान्विता॥२॥
प्रवृद्धघोणा तु भृशंकुटिला कुटिलेक्षणा।
क्षुत्पिपासार्द्दिता नित्यम्भयदा कलहास्पदा॥३॥

उक्त प्रकार से ध्यान करके साधक को पूर्वोक्त विधि से जप व पूजा करनी चाहिए। मन्त्र का पुरश्चरण करने हेतु किसी भी कृष्णपक्ष की (यदि चातुर्मास की अथवा ज्येष्ठ मास की चतुर्दशी या ज्येष्ठ नक्षत्र हो तो अच्छा है।) से उपवास करके दिन-रात मौन रहकर किसी निर्जन गृह, श्मशान अथवा वन में एक लाख की संख्या में जप करना चाहिए। तद्रोपरान्त नियमानुसार होम, तर्पण आदि करने चाहिए। इस काल में उष्णीय तथा गीले वस्त्र धारण करने चाहिए। इस विधि से अनुष्ठान सम्पन्न करने पर साधक को मन्त्र की सिद्धि प्राप्त होती है। मन्त्र सिद्ध हो जाने के उपरान्त यदि साधक को काम्य प्रयोग करने हों तो निम्नवत् सम्पन्न करने चाहिए।

1. कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी के दिन व्रत करके, अपने केश खुले रखकर निर्जन घर में, श्मशान में, घने जंगल में, किसी गुफा में, किसी कन्दरा में अथवा किसी पर्वत पर बैठकर भगवती धूमावती का ध्यान करते हुए एक लाख की संख्या में साधक को मन्त्र-जप करके राई तथा नमक का मिश्रण करके दशांश होम करना चाहिए। शत्रु-विनाश के लिए यह एक उत्तम प्रयोग है।
2. हड्डी पर मन्त्र लिखकर, उसके ऊपर शिवलिंग की स्थापना करके मन्त्र-जप करना चाहिए। शिव को अवष्टभ्य करके शत्रु का नाम लेकर जप करने से घोरतम शत्रु का भी विनाश हो जाता है।
3. शत्रु के नाम पर मूल मन्त्र **धूं धूं धूमावती ठः ठः** लिखकर उसके ऊपर शिवलिंग की स्थापना करें तथा पूजन व जप करें, तो शत्रु का विनाश होता है। इसके अतिरिक्त दूसरे प्रयोग में शिवलिंग का निर्माण करके "अमुकं मारय" इस प्रकार शत्रुनाम लेते हुए 500 की संख्या में जप करना चाहिए। इससे शत्रु ज्वर से ग्रस्त हो जाता है। 'अमुक' के स्थान पर शत्रु का नाम लें। यदि उसका ज्वर उतारना हो तो पंचगव्य अथवा दूध से होम करना चाहिए।
4. हल्दी के पत्ते पर शत्रु का नाम लिखकर किसी जंगल में डालकर उस पर मूल मन्त्र का दस हजार की संख्या में जप करने से शत्रु का उच्चाटन होता है।
5. श्मशान की अग्नि में कौए को दग्ध करके उसकी भस्म लेकर उसे 108 बार मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित करके, शत्रु का नाम

लेते हुए उसे आठों दिशाओं में फेंकने से भी शत्रु का उच्चाटन होता है।

6. मन्त्र के अन्त में "ठः ठः" के स्थान पर "स्वाहा" लगाकर अनुष्ठान सम्पन्न करने से पूर्वजन्मकृत दोषों का निवारण होता है।

7. कृष्ण पक्ष में अष्टमी अथवा चतुर्दशी को श्मशान की भस्म लेकर उससे शिवलिंग का निर्माण करें तथा उस पर शत्रु के नाम सहित मूल मन्त्र को लिखकर पूजन करें। फिर भैंस के दूध से धूप देकर, जिन-जिन पदार्थों से शत्रु का अमंगल होता हो, वे ही द्रव्य शिवलिंग को अर्पित करें। परिणामस्वरूप भगवती भैंस का स्वरूप बनाकर शत्रु का विनाश करती हैं।

8. श्मशान की भस्म लेकर उससे एक सुन्दर शिवलिंग का निर्माण करें। फिर उसका पूजन करें। इसके उपरान्त "हे भगवान!" का सम्बोधन करके अपने शत्रुओं का नाम लेकर नीम के पत्ते और कौए के पंख एकत्र करें, उन पर मूल मन्त्र का 108 की संख्या में जप करें। तद्रोपरान्त "अमुक द्वेषय-द्वेषय" बोलकर मूल मन्त्र का पुनः उच्चारण करके धूप दें। इस प्रयोग से शत्रु वर्ग में विद्वेषण हो जाता है। उनके मध्य यदि किये गये विद्वेषण की शान्ति करनी हो तो चिता की लकड़ी लाकर अग्नि प्रज्ज्वलित करके उसमें दूध से हवन करना चाहिए।

9. शत्रु-संहार के लिए किसी रजस्वला स्त्री के रक्ताक्त वस्त्र से निर्मित धूप को जलाकर निवेदन करने से कालिका गृध रूप में आकर शत्रु का संहार करती है। यदि उक्त प्रयोग को शान्त करना हो तो निर्माल्य के फूल-पत्तों द्वारा धूप देने से शान्ति हो

जाती है। शिवलिंग पर चढ़ाये गये पुष्प आदि को निर्माल्य कहा जाता है।

10. वराह-कर्ण द्वारा धूप देने से भगवती रात्रि में शूकर रूप धारण करके आती है तथा शत्रु का नाश करती है।

पीपल के पत्तों की धूप देकर पंचगव्य अथवा दूध या घी, शहद और शक्कर से होम करने से सभी प्रकार के अभिचार कर्मों की शान्ति होती है।



॥ नोट करने योग्य ॥

अध्याय 14

श्री धूमावती माला-मन्त्र

ॐ धूं धूमावती चतुर्दश-भुवननिवासिनि सकल ग्रहोच्चाटिनि सकल शत्रु-रक्त-मांस-भक्षिणि मम शरीररक्षिणि भूतप्रेत-पिशाच-ब्रह्मराक्षसादि सकलग्रह-संहारिणि मम शरीर परमन्त्र-परयन्त्र-परतन्त्र-निवारिणि आत्म-मन्त्र-यन्त्र-तन्त्र प्रकाशिनि मम शरीरे परकट्टू-परवाट्टू-परवेट्टू-परजप-परहोम-परशून्य-परवृष्टि-परकौतुक-परौषदाधिच्छेदिनि-चिट्टेरि-काहेरि-कन्नेरि-पाट्टेरि-शुनककाट्टेरि-प्ररिटिकाट्टेरि-दर्भकाट्टेरि-पालकाट्टेरि-सकलजाति-काट्टेरि-ग्रहच्छेदिनि मम नाभि-कमलस्थान-संचारग्रह-संहारिणि धूम्र-लोचनि उग्ररूपिणि सकल-विषच्छेदिनि सकलविषसंचयान् नाशय नाशय मारय मारय विषज्वर-तापज्वर-शीतज्वर-वातज्वर-लूतज्वर-पयत्यज्वर-श्लेष्मज्वर-मोहज्वर-सन्निपातज्वर-पाताल-काट्टेरिज्वर-प्रेतज्वर-पिशाचज्वर-कृत्रिमज्वर-नानादोषज्वर सकलरोगनिवारिणि सकलग्रहच्छेदिनि शिर:शूलाक्षिशूल-कुक्षिशूल-कर्णशूल-नाभिशूल-कटिशूल-पार्श्वशूल-गण्डशूल-गुल्मशूलांगशूल-सकलशूलान् निधूमय सकलग्रहान् निवारय-

निवारय रां रां रां रां रां क्ष्रां क्ष्रां क्ष्रां क्ष्रां क्ष्रां खैं खैं खैं खैं खैं ध्रूं ध्रूं ध्रूं ध्रूं ध्रूं फ्रें फ्रें फ्रें फ्रें फ्रें धूं धूं धूं धूं धूं धूमावती मां रक्ष-रक्ष शीघ्रं शीघ्रमागच्छागच्छ प्रमेवारोग्यं कुरु-कुरु हूं फट् धूं-धूं धूमावती स्वाहा।

प्रयोग विधि– माला-मन्त्र का यथायोग्य जप करके ताबीज में भरकर सफेद रंग के डोरे में डालकर स्वयं पहने तथा किसी भी शनिवार को स्वयं यन्त्र का निर्माण करके किसी अन्य व्यक्ति को यन्त्र प्रदान करके धारण करवाने से उसकी समस्त कामनायें, जो इस माला-मन्त्र में कही गयी हैं, पूर्ण होती हैं। यन्त्र-निर्माण करने के उपरान्त 11 माला मूल मन्त्र की जप कर ही किसी अन्य को यन्त्र प्रदान करेंगे तभी उसकी कामनायें पूर्ण होगीं।



अध्याय 15

श्री धूमावती सहस्रनामार्चन प्रयोग

अपने इष्ट का नामार्चन वास्तव में बहुत ही आवश्यक है। नाम-पाठ अथवा नाम-कीर्तन का तात्पर्य यह है कि उस एक चित्शक्ति की अनेकता में एकता का ही ज्ञान रहे, यही तात्पर्य नामार्चन का भी है। इससे ब्रह्म में तादात्म्य भाव अर्थात् जीवात्मा और परमात्मा के ऐक्य का ज्ञान होता है। नाम के चतुर्थ्यन्त रूप में आरम्भ में 'प्रणव' तथा अन्त में 'नमः' योजित कर देने से प्रत्येक नाम महामन्त्र के रूप में परिणत हो जाता है, जिसका पूजन या अर्चन किया जाता है।"नमः" सोहं भाववाचक है। इस क्रम को 108 बार, 300 बार, 500 बार अथवा 1008 बार करने से भी निदिध्यासन होता है। इसे "असकृत् आवृत्ति" कहते हैं।

इनकी उपासना-पूजा के कई विधान हैं, जिनमें षोडशोपचार पूजन, चतुषष्टि-उपचार पूजन, नाम-स्मरण तथा नामार्चन आदि मुख्य हैं। यूं तो भगवती धूमावती के सभी प्रयोग साधकों द्वारा बहु प्रशंसित हैं। उनके किसी भी प्रयोग को कमतर आंकना किसी भी प्रकार उचित नहीं है। शत्रुओं एवं शत्रुता का नाश करने में महामाया सर्वोपरि हैं।

विकट शत्रु के संत्रास को नष्ट करने, भगवती को प्रसन्न करने तथा साधक की आर्थिक उन्नति हेतु यहां जिस विशेष विधान को स्पष्ट किया जा रहा है, वह है— नामार्चन-विधान। श्री धूमावती का नामार्चन करते समय हम अर्चन के लिए श्वेत पुष्प, काजू अथवा श्वेत अक्षतों का प्रयोग करते हैं। नामार्चन का विधान यह है कि भगवती धूमावती का एक-एक नाम बोलते हुए एक-एक वस्तु उन्हें निवेदन करनी चाहिए।

सर्वप्रथम अपने दाहिने हाथ में जल लेकर विनियोग करें—

विनियोग— ॐ अस्य श्री धूमावती सहस्रनामस्तोत्रस्य पिप्लाद ऋषिः, पंक्तिश्छन्दः, धूमावती देवता, शत्रु विनिग्रहे नामार्चने विनियोगः।

अब अपने हाथ में लिया हुआ जल भूमि पर छोड़ दें तथा नामार्चन आरम्भ करें—

१. ॐ धूमायै नमः।

२. ॐ धूमावत्यै नमः।

३. ॐ धमायै नमः।

४. ॐ धूमपानपरायणायै नमः।

५. ॐ धौतायै नमः।

६. ॐ धौतगिरायै नमः।

७. ॐ धाम्न्यै नमः।

८. ॐ धूमेश्वरनिवासिन्यै नमः।

९. ॐ अनन्ता-अनन्तरूपायै नमः।

१०. ॐ अकाराकाररूपिण्यै नमः।

११. ॐ आद्यायै नमः।

१२. ॐ आनन्दायै नमः।

१३. ॐ नन्दायै नमः।

१४. ॐ इकारायै नमः।

१५. ॐ इन्द्ररूपिण्यै नमः।

१६. ॐ धनधान्यार्थायै नमः।

१७. ॐ वाणीदायै नमः।

1८. ॐ यशोधर्म्मप्रियेष्टदायै नमः।

१९. ॐ भाग्यायै नमः।

२०. ॐ सौभाग्यायै नमः।

२१. ॐ भक्तिस्थायै नमः।

२२. ॐ गृहपर्वतवासिन्यै नमः।

२३. ॐ रामरावणसुग्रीवमोहदायै नमः।

२४. ॐ हनुमत्प्रियायै नमः।

२५. ॐ वेदशास्त्रपुराणज्ञायै नमः।

२६. ॐ ज्योतिश्छंदस्वरूपिण्यै नमः।

२७. ॐ चातुर्य्यचारूरुचिरायै नमः।

२८. ॐ रंजनप्रेमतोषदायै नमः।

२९. ॐ कमलास्यायै नमः।

३०. ॐ सुधावक्त्रायै नमः।

३१. ॐ चन्द्रहासायै नमः।

३२. ॐ स्मिताननायै नमः।

३३. ॐ चतुरायै नमः।

३४. ॐ चारूकेश्यै नमः।

३५. ॐ चतुर्वर्गप्रदायै नमः।

३६. ॐ मुदायै नमः।

३७. ॐ कलायै नमः।

३८. ॐ कलाधरायै नमः।

३९. ॐ धीरायै नमः।

४०. ॐ धारिण्यै नमः।

४१. ॐ वसुनीरदायै नमः।

४२. ॐ हीरायै नमः।

४३. ॐ हीरकवर्णाभायै नमः।

४४. ॐ हरिणायतलोचनायै नमः।

४५. ॐ दम्भ-मोह-क्रोधा-लोभ-स्नेह-द्वेषहरायै नमः।

४६. ॐ परायै नमः।

४७. ॐ नरदेवकर्यै नमः।

४८. ॐ रामायै नमः।

४९. ॐ रामानन्दायै नमः।

५०. ॐ मनोहरायै नमः।

५१. ॐ योग-भोग-क्रोध-लोभहरायै नमः।

५२. ॐ हरनमस्कृतायै नमः।

५३. ॐ दान-मान-ज्ञान-पान-गान सुखप्रदायै नमः।

५४. ॐ गजगोश्वपदायै नमः।

५५. ॐ गञ्जायै नमः।

५६. ॐ भूतिदायै नमः।
५७. ॐ भूतनाशिन्यै नमः।
५८. ॐ भवभावायै नमः।
५९. ॐ बालायै नमः।
६०. ॐ वरदायै नमः।
६१. ॐ हरवल्लभायै नमः।
६२. ॐ भगभंग-भयायै नमः।
६३. ॐ मालायै नमः।
६४. ॐ मालतीमालनायै नमः।
६५. ॐ ह्लदायै नमः।
६६. ॐ जाल-वाल-हाल-काल-कपाल-प्रियवादिन्यै नमः।
६७. ॐ करञ्जशील-गुञ्जाढ्यायै नमः।
६८. ॐ चूतांकुरनिवासिन्यै नमः।
६९. ॐ परसस्थायै नमः।
७०. ॐ पानसक्तायै नमः।
७१. ॐ परशेशकुटुम्बिन्यै नमः।
७२. ॐ पावन्यै नमः।
७३. ॐ पावनाधारापूर्णायै नमः।
७४. ॐ पूर्ण-मनोरथायै नमः।
७५. ॐ पूत्यै नमः।
७६. ॐ पूतकलायै नमः।
७७. ॐ पौरायै नमः।

७८. ॐ पुराण-सुर-सुन्दर्यै नमः।

७९. ॐ परेश्यै नमः।

८०. ॐ परदायै नमः।

८१. ॐ परात्मायै नमः।

८२. ॐ परमोहिन्यै नमः।

८३. ॐ जगन्मायायै नमः।

८४. ॐ जगत्कर्त्र्यै नमः।

८५. ॐ जगत्कीर्त्यै नमः।

८६. ॐ जगन्मय्यै नमः।

८७. ॐ जनन्यै नमः।

८८. ॐ जयिन्यै नमः।

८९. ॐ जायाजितायै नमः।

९०. ॐ जिनजय-प्रदायै नमः।

९१. ॐ कीर्ति-ज्ञान-ध्यान-मान-दायिन्यै नमः।

९२. ॐ दानवेश्वर्यै नमः।

९३. ॐ काव्य-व्याकरणज्ञायै नमः।

९४. ॐ काप्रज्ञायै नमः।

९५. ॐ प्राज्ञानदायिन्यै नमः।

९६. ॐ विज्ञाज्ञायै नमः।

९७. ॐ विज्ञजयदायै नमः।

९८. ॐ विज्ञायै नमः।

९९. ॐ विज्ञप्रपूजितायै नमः।

१००. ॐ परावरेज्यायै नमः।

१०१. ॐ वरदायै नमः।

१०२. ॐ पारदायै नमः।

१०३. ॐ शारदायै नमः।

१०४. ॐ दरायै नमः।

१०५. ॐ दारिण्यै नमः।

१०६. ॐ देवदूत्यै नमः।

१०७. ॐ दमनायै नमः।

१०८. ॐ दमनामदायै नमः।

१०९. ॐ परमज्ञानगम्यायै नमः।

११०. ॐ परेश्यै नमः।

१११. ॐ परगायै नमः।

११२. ॐ परायै नमः।

११३. ॐ यज्ञायै नमः।

११४. ॐ यज्ञप्रदायै नमः।

११५. ॐ यज्ञज्ञानकार्यकर्यै नमः।

११६. ॐ शुभायै नमः।

११७. ॐ शोभिन्यै नमः।

११८. ॐ शुभ्रमथिन्यै नमः।

११९. ॐ निशुम्भासुरमर्दिन्यै नमः।

१२०. ॐ शाम्भवीयै नमः।

१२१. ॐ शम्भु-पत्न्यै नमः।

१२२. ॐ शम्भुजायायै नमः।

१२३. ॐ शुभाननायै नमः।

१२४. ॐ शांकरयै नमः।

१२५. ॐ शंकराराध्यायै नमः।

१२६. ॐ सन्ध्यायै नमः।

१२७. ॐ सन्ध्या-सुधर्मिण्यै नमः।

१२८. ॐ शत्रुघ्न्यै नमः।

१२९. ॐ शत्रुहायै नमः।

१३०. ॐ शत्रुप्रदायै नमः।

१३१. ॐ शत्रुविनाशिन्यै नमः।

१३२. ॐ शैव्यै नमः।

१३३. ॐ शिवालयायै नमः।

१३४. ॐ शैलायै नमः।

१३५. ॐ शैलराज-प्रियायै नमः।

१३६. ॐ शर्वरयै नमः।

१३७. ॐ शंकरयै नमः।

१३८. ॐ शम्भुयै नमः।

१३९. ॐ सुधाढ्यायै नमः।

१४०. ॐ सौधवासिन्यै नमः।

१४१. ॐ सगुणायै नमः।

१४२. ॐ गुणरूपायै नमः।

१४३. ॐ गौरव्यै नमः।

१४४. ॐ भैरवारवायै नमः।
१४५. ॐ गोरांग्यै नमः।
१४६. ॐ गोरदेहायै नमः।
१४७. ॐ गोरयै नमः।
१४८. ॐ गुरमत्यै नमः।
१४९. ॐ गुरुयै नमः।
१५०. ॐ गौर्गौर्गव्य-स्वरूपायै नमः।
१५१. ॐ गुणानन्दस्वरूपिण्यै नमः।
१५२. ॐ गणेशगणदायै नमः।
१५३. ॐ गुण्यायै नमः।
१५४. ॐ गुणागौरव-वांछितायै नमः।
१५५. ॐ गणमातायै नमः।
१५६. ॐ गणाराध्यायै नमः।
१५७. ॐ गणकोटियै नमः।
१५८. ॐ विनाशिन्यै नमः।
१५९. ॐ दुर्गायै नमः।
१६०. ॐ दुर्जनहन्त्र्यै नमः।
१६१. ॐ दुर्जन-प्रीतिदायिन्यै नमः।
१६२. ॐ स्वर्गापवर्गदायै नमः।
१६३. ॐ दात्र्यै नमः।
१६४. ॐ दीनायै नमः।
१६५. ॐ दीनदयावत्यै नमः।

१६६. ॐ दुर्निरीक्ष्यायै नमः।

१६७. ॐ दुरादु:स्थायै नमः।

१६८. ॐ दौ:स्थ्य-भंजनकारिण्यै नमः।

१६९. ॐ श्वेतपाण्डरकृष्णाभायै नमः।

१७०. ॐ कालदायै नमः।

१७१. ॐ कालनाशिन्यै नमः।

१७२. ॐ कर्म-नर्म-कर्यै नमः।

१७३. ॐ नर्मायै नमः।

१७४. ॐ धर्मायै नमः।

१७५. ॐ अधर्म-विनाशिन्यै नमः।

१७६. ॐ गौर्यै नमः।

१७७. ॐ गौरवदायै नमः।

१७८. ॐ गोदायै नमः।

१७९. ॐ गणदायै नमः।

१८०. ॐ गायनप्रियायै नमः।

१८१. ॐ गंगायै नमः।

१८२. ॐ भागीरथ्यै नमः।

१८३. ॐ भंगायै नमः।

१८४. ॐ भगायै नमः।

१८५. ॐ भाग्य-विवर्द्धिन्यै नमः।

१८६. ॐ भवान्यै नमः।

१८७. ॐ भवहन्त्र्यै नमः।

१८८. ॐ भैरव्यै नमः।

१८९. ॐ भैरवीसमायै नमः।

१९०. ॐ भीमायै नमः।

१९१. ॐ भीमरवायै नमः।

१९२. ॐ भैम्यै नमः।

१९३. ॐ भीमानन्द प्रदायिन्यै नमः।

१९४. ॐ शरण्यायै नमः।

१९५. ॐ शरणायै नमः।

१९६. ॐ शम्यायै नमः।

१९७. ॐ शशिन्यै नमः।

१९८. ॐ शंखनाशिन्यै नमः।

१९९. ॐ गुणायै नमः।

२००. ॐ गुणकर्यै नमः।

२०१. ॐ गौण्यै नमः।

२०२. ॐ प्रियायै नमः।

२०३. ॐ प्रीति-प्रदायिन्यै नमः।

२०४. ॐ जनमोहनकर्त्र्यै नमः।

२०५. ॐ जगदानन्द-दायिन्यै नमः।

२०६. ॐ जितायै नमः।

२०७. ॐ जायायै नमः।

२०८. ॐ विजयायै नमः।

२०९. ॐ विजय-जयदायिन्यै नमः।

२१०. ॐ कामायै नमः।
२११. ॐ काल्यै नमः।
२१२. ॐ करालास्यायै नमः।
२१३. ॐ खर्वायै नमः।
२१४. ॐ खंजायै नमः।
२१५. ॐ खरागदायै नमः।
२१६. ॐ गर्वायै नमः।
२१७. ॐ गरूत्मत्यै नमः।
२१८. ॐ धर्मायै नमः।
२१९. ॐ घर्घरायै नमः।
२२०. ॐ घोरनादिन्यै नमः।
२२१. ॐ चराचर्यै नमः।
२२२. ॐ चराराध्यायै नमः।
२२३. ॐ छिन्नायै नमः।
२२४. ॐ छिन्नमनोरथायै नमः।
२२५. ॐ छिन्नमस्तायै नमः।
२२६. ॐ जयायै नमः।
२२७. ॐ जाप्यायै नमः।
२२८. ॐ जगज्जायायै नमः।
२२९. ॐ झर्झर्यै नमः।
२३०. ॐ झकारायै नमः।
२३१. ॐ झीष्कृतिष्टिकायै नमः।

२३२. ॐ टंकायै नमः।

२३३. ॐ टंकारनादिन्यै नमः।

२३४. ॐ ठीकायै नमः।

२३५. ॐ ठक्कुर-ठक्कांग्यै नमः।

२३६. ॐ ठठठांकार्यै नमः।

२३७. ॐ ढुण्ढुरायै नमः।

२३८. ॐ ढुण्ढीतायै नमः।

२३९. ॐ राजतीर्णायै नमः।

२४०. ॐ तालस्थायै नमः।

२४१. ॐ भ्रमनाशिन्यै नमः।

२४२. ॐ थकारायै नमः।

२४३. ॐ थकरादात्र्यै नमः।

२४४. ॐ दीपायै नमः।

२४५. ॐ दीपविनाशिन्यै नमः।

२४६. ॐ धन्यायै नमः।

२४७. ॐ धनायै नमः।

२४८. ॐ धनवत्यै नमः।

२४९. ॐ नर्मदायै नमः।

२५०. ॐ नर्ममोदिन्यै नमः।

२५१. ॐ पद्मायै नमः।

२५२. ॐ पद्मावत्यै नमः।

२५३. ॐ पीतायै नमः।

२५४. ॐ स्फान्तायै नमः।

२५५. ॐ फूत्कार-कारिण्यै नमः।

२५६. ॐ फुल्लायै नमः।

२५७. ॐ ब्रह्ममय्यै नमः।

२५८. ॐ ब्राह्मयै नमः।

२५९. ॐ ब्रह्मानन्द-प्रदायिन्यै नमः।

२६०. ॐ भवाराध्यायै नमः।

२६१. ॐ भवाध्यक्षायै नमः।

२६२. ॐ भगाल्यै नमः।

२६३. ॐ मन्दगामिन्यै नमः।

२६४. ॐ मदिरायै नमः।

२६५. ॐ मदिरेक्षायै नमः।

२६६. ॐ यशोदायै नमः।

२६७. ॐ यमपूजितायै नमः।

२६८. ॐ याम्यायै नमः।

२६९. ॐ राम्यायै नमः।

२७०. ॐ रामरूपायै नमः।

२७१. ॐ रमण्यै नमः।

२७२. ॐ ललितालतायै नमः।

२७३. ॐ लंकेश्वर्यै नमः।

२७४. ॐ वाक्प्रदायै नमः।

२७५. ॐ वाच्यायै नमः।

२७६. ॐ सदाश्रमवासिन्यै नमः।
२७७. ॐ श्रान्तायै नमः।
२७८. ॐ शकाररूपायै नमः।
२७९. ॐ षकारायै नमः।
२८०. ॐ खरवाहनायै नमः।
२८१. ॐ सह्याद्रिरूपायै नमः।
२८२. ॐ सानन्दायै नमः।
२८३. ॐ हरिण्यै नमः।
२८४. ॐ हरिरूपिण्यै नमः।
२८५. ॐ हराराध्यायै नमः।
२८६. ॐ बालवायै नमः।
२८७. ॐ लवंगप्रेमतोषितायै नमः।
२८८. ॐ क्षपाक्षयप्रदायै नमः।
२८९. ॐ क्षीरायै नमः।
२९०. ॐ अकारादिस्वरूपिण्यै नमः।
२९१. ॐ कालिकायै नमः।
२९२. ॐ कालमूर्त्यै नमः।
२९३. ॐ कलहायै नमः।
२९४. ॐ कलहप्रियायै नमः।
२९५. ॐ शिवायै नमः।
२९६. ॐ शन्दायिन्यै नमः।
२९७. ॐ सौम्यायै नमः।

२९८. ॐ शत्रुनिग्रहकारिण्यै नमः।

२९९. ॐ भवान्यै नमः।

३००. ॐ भवमूर्त्यै नमः।

३०१. ॐ शर्वाण्यै नमः।

३०२. ॐ सर्वमंगलायै नमः।

३०३. ॐ शत्रुविद्राविण्यै नमः।

३०४. ॐ शैव्यै नमः।

३०५. ॐ शुम्भासुर-विनाशिन्यै नमः।

३०६. ॐ धकारमन्त्ररूपायै नमः।

३०७. ॐ धूं बीजपरितोषितायै नमः।

३०८. ॐ धनाध्यक्षसुतायै नमः।

३०९. ॐ धीरायै नमः।

३१०. ॐ धरारूपायै नमः।

३११. ॐ धरावत्यै नमः।

३१२. ॐ चर्विण्यै नमः।

३१३. ॐ चन्द्रपूज्यायै नमः।

३१४. ॐ छन्दोरूपायै नमः।

३१५. ॐ छटावत्यै नमः।

३१६. ॐ छायायै नमः।

३१७. ॐ छायावत्यै नमः।

३१८. ॐ स्वच्छायै नमः।

३१९. ॐ छेदिन्यै नमः।

३२०. ॐ मेदिन्यै नमः।

३२१. ॐ क्षमायै नमः।

३२२. ॐ वलिन्यै नमः।

३२३. ॐ वर्द्धिन्यै नमः।

३२४. ॐ वन्द्यायै नमः।

३२५. ॐ वेदमातायै नमः।

३२६. ॐ बुधस्तुतायै नमः।

३२७. ॐ धारायै नमः।

३२८. ॐ धारावत्यै नमः।

३२९. ॐ धन्यायै नमः।

३३०. ॐ धर्मदानपरायणायै नमः।

३३१. ॐ गर्विण्यै नमः।

३३२. ॐ गुरुपूज्यायै नमः।

३३३. ॐ ज्ञानदात्र्यै नमः।

३३४. ॐ गुणान्वितायै नमः।

३३५. ॐ धर्मिण्यै नमः।

३३६. ॐ धर्मरूपायै नमः।

३३७. ॐ घण्टानादपरायणायै नमः।

३३८. ॐ घण्टानिनादिन्यै नमः।

३३९. ॐ घूर्णायै नमः।

३४०. ॐ घूर्णितायै नमः।

३४१. ॐ घोररूपिण्यै नमः।

३४२. ॐ कलिघ्न्यै नमः।

३४३. ॐ कलिदूत्यै नमः।

३४४. ॐ कलिपूज्यायै नमः।

३४५. ॐ कलिप्रियायै नमः।

३४६. ॐ कालनिर्णाशिन्यै नमः।

३४७. ॐ काल्यायै नमः।

३४८. ॐ काव्यदायै नमः।

३४९. ॐ कालरूपिण्यै नमः।

३५०. ॐ वर्षिण्यै नमः।

३५१. ॐ वृष्टिदायै नमः।

३५२. ॐ वृष्टि-र्महावृष्टि-निवारिण्यै नमः।

३५३. ॐ घातिन्यै नमः।

३५४. ॐ घाटिन्यै नमः।

३५५. ॐ घोण्टायै नमः।

३५६. ॐ घातक्यै नमः।

३५७. ॐ घनरूपिण्यै नमः।

३५८. ॐ धूं बीजायै नमः।

३५९. ॐ धूं जपानन्दायै नमः।

३६०. ॐ धूं बीज-जप-तोषितायै नमः।

३६१. ॐ धूं धूं बीज-जपासक्तायै नमः।

३६२. ॐ धूं धूं बीज-परायणायै नमः।

३६३. ॐ धूंकार-हर्षिण्यै नमः।

३६४. ॐ धूमायै नमः।

३६५. ॐ धनदायै नमः।

३६६. ॐ धन-गर्वितायै नमः।

३६७. ॐ पद्मावत्यै नमः।

३६८. ॐ पद्ममालायै नमः।

३६९. ॐ पद्म-योनि-प्रपूजितायै नमः।

३७०. ॐ अपारायै नमः।

३७१. ॐ पूर्णी-पूर्णायै नमः।

३७२. ॐ पूर्णिमा-परिवन्दितायै नमः।

३७३. ॐ फलदायै नमः।

३७४. ॐ फलभोक्त्र्यै नमः।

३७५. ॐ फलिन्यै नमः।

३७६. ॐ फलदायिन्यै नमः।

३७७. ॐ फूत्कारिण्यै नमः।

३७८. ॐ फलावाप्त्यै नमः।

३७९. ॐ फलभोक्त्र्यै नमः।

३८०. ॐ फलान्वितायै नमः।

३८१. ॐ वारिण्यै नमः।

३८२. ॐ वारणप्रीतायै नमः।

३८३. ॐ वारिपाथोधि-पारगायै नमः।

३८४. ॐ विवर्णायै नमः।

३८५. ॐ धूम्रनयनायै नमः।

३८६. ॐ धूम्राक्ष्यै नमः।

३८७. ॐ धूम्ररूपिण्यै नमः।

३८८. ॐ नीति-र्नीति-स्वरूपायै नमः।

३८९. ॐ नीतिज्ञायै नमः।

३९०. ॐ नयकोविदायै नमः।

३९१. ॐ तारिण्यै नमः।

३९२. ॐताररूपायै नमः।

३९३. ॐ तत्व-ज्ञान-परायणायै नमः।

३९४. ॐ स्थूलायै नमः।

३९५. ॐ स्थूलाधरायै नमः।

३९६. ॐ स्थात्र्यै नमः।

३९७. ॐ उत्तम-स्थान-वासिन्यै नमः।

३९८. ॐ स्थूला-पद्म-पद-स्थानायै नमः।

३९९. ॐ स्थान-भ्रष्टायै नमः।

४००. ॐ स्थल-स्थितायै नमः।

४०१. ॐ शोषिण्यै नमः।

४०२. ॐ शोभिन्यै नमः।

४०३. ॐ शीतायै नमः।

४०४. ॐ शीत-पानीय-पायिन्यै नमः।

४०५. ॐ शारिण्यै नमः।

४०६. ॐ शांखिन्यै नमः।

४०७. ॐ शुद्धायै नमः।

४०८. ॐ शंखासुर-विनासिन्यै नमः।

४०९. ॐ शर्वर्यै नमः।

४१०. ॐ शर्वरी-पूज्यायै नमः।

४११. ॐ शर्वरीश-प्रपूजितायै नमः।

४१२. ॐ शर्वरीजाग्रतायै नमः।

४१३. ॐ योग्यायै नमः।

४१४. ॐ योगिन्यै नमः।

४१५. ॐ योगिवन्दितायै नमः।

४१६. ॐ योगिनीगण-संसेव्यायै नमः।

४१७. ॐ योगिनी-योग-भावितायै नमः।

४१८. ॐ योगमार्गरतायै नमः।

४१९. ॐ युक्तायै नमः।

४२०. ॐ योग-मार्गानुसारिण्यै नमः।

४२१. ॐ योगभावायै नमः।

४२२. ॐ योगयुक्तायै नमः।

४२३. ॐ यामिनीपति-वन्दितायै नमः।

४२४. ॐ अयोग्यायै नमः।

४२५. ॐ योधिन्यै नमः।

४२६. ॐ योद्ध्रयै नमः।

४२७. ॐ युद्धकर्म-विशारदायै नमः।

४२८. ॐ युद्ध-मार्ग-रतानन्तायै नमः।

४२९. ॐ युद्धस्थान-निवासिन्यै नमः।

४३०. ॐ सिद्धायै नमः।

४३१. ॐ सिद्धेश्वर्यै नमः।

४३२. ॐ सिद्धयै नमः।

४३३. ॐ सिद्धि-गेह-निवासिन्यै नमः।

४३४. ॐ सिद्धरीत्यै नमः।

४३५. ॐ सिद्धप्रीत्यै नमः।

४३६. ॐ सिद्धायै नमः।

४३७. ॐ सिद्धान्त-कारिण्यै नमः।

४३८. ॐ सिद्धगम्यायै नमः।

४३९. ॐ सिद्धपूज्यायै नमः।

४४०. ॐ सिद्धवन्द्यायै नमः।

४४१. ॐ सुसिद्धिदायै नमः।

४४२. ॐ साधिन्यै नमः।

४४३. ॐ साधन-प्रीतायै नमः।

४४४. ॐ साध्यायै नमः।

४४५. ॐ साधनकारिण्यै नमः।

४४६. ॐ साधनीयायै नमः।

४४७. ॐ साध्यसाध्यायै नमः।

४४८. ॐ साध्यसंघ-सुशोभिन्यै नमः।

४४९. ॐ साध्व्यै नमः।

४५०. ॐ साधुस्वभाव्यै नमः।

४५१. ॐ साधुसन्तति दायिन्यै नमः।

४५२. ॐ साधुपूज्यायै नमः।

४५३. ॐ साधुवन्द्यायै नमः।

४५४. ॐ साधु-सन्दर्शनीद्यतायै नमः।

४५५. ॐ साधुदृष्टायै नमः।

४५६. ॐ साधुपृष्टायै नमः।

४५७. ॐ साधु-पोषण-तत्परायै नमः।

४५८. ॐ सात्त्विक्यै नमः।

४५९. ॐ सत्त्वसंसिद्धायै नमः।

४६०. ॐ सत्त्वसेव्यायै नमः।

४६१. ॐ सुखोदयायै नमः।

४६२. ॐ सत्त्ववृद्धिकर्यै नमः।

४६३. ॐ शान्तायै नमः।

४६४. ॐ सत्त्व-संहर्ष-मानसायै नमः।

४६५. ॐ सत्त्वज्ञानायै नमः।

४६६. ॐ सत्त्वविद्यायै नमः।

४६७. ॐ सत्त्व-सिद्धान्त-कारिण्यै नमः।

४६८. ॐ सत्त्ववृद्ध्यै नमः।

४६९. ॐ सत्त्वसिद्ध्यै नमः।

४७०. ॐ सत्त्व-सम्पन्न-मानसायै नमः।

४७१. ॐ चारूरूपायै नमः।

४७२. ॐ चारूदेहायै नमः।

४७३. ॐ चारू-चञ्चल-लोचनायै नमः।

४७४. ॐ छद्मिन्यै नमः।
४७५. ॐ छद्मसंकल्पायै नमः।
४७६. ॐ छद्मवार्तायै नमः।
४७७. ॐ क्षमाप्रियायै नमः।
४७८. ॐ हठिन्यै नमः।
४७९. ॐ हठ-सम्प्रीति-र्हठवार्तायै नमः।
४८०. ॐ हठोद्यमायै नमः।
४८१. ॐ हठकार्यायै नमः।
४८२. ॐ हठधर्मायै नमः।
४८३. ॐ हठकर्म-परायणायै नमः।
४८४. ॐ हठ-सम्भोग-निरतायै नमः।
४८५. ॐ हठात्कार-रति-प्रियायै नमः।
४८६. ॐ हठ-सम्भेदिन्यै नमः।
४८७. ॐ हृद्यायै नमः।
४८८. ॐ हृद्यवार्तायै नमः।
४८९. ॐ हरिप्रियायै नमः।
४९०. ॐ हरिण्यै नमः।
४९१. ॐ हरिणी-दृष्टि-र्हरिणी-मांस-भक्षणायै नमः।
४९२. ॐ हरिणाक्ष्यै नमः।
४९३. ॐ हरिणपायै नमः।
४९४. ॐ हरिणी-गण-हर्षदायै नमः।
४९५. ॐ हरिणी-गण-संहन्त्र्यै नमः।

४९६. ॐ हरिणी-परिपोषिकायै नमः।
४९७. ॐ हरिणी-मृगयासक्तायै नमः।
४९८. ॐ हरिणी-मान्पुरःसरायै नमः।
४९९. ॐ दीनायै नमः।
५००. ॐ दीन-कृतिर्दूनायै नमः।
५०१. ॐ द्राविण्यै नमः।
५०२. ॐ द्राविणप्रदायै नमः।
५०३. ॐ द्रविणाचल-सम्वासायै नमः।
५०४. ॐ द्रवितायै नमः।
५०५. ॐ द्रव्य-संयुक्तायै नमः।
५०६. ॐ दीर्घायै नमः।
५०७. ॐ दीर्घप्रदायै नमः।
५०८. ॐ दृश्यायै नमः।
५०९. ॐ दर्शनीयायै नमः।
५१०. ॐ दृढ़ाकृत्यायै नमः।
५११. ॐ दृढ़ायै नमः।
५१२. ॐ दुष्ट-मतिर्दुष्टायै नमः।
५१३. ॐ द्वेषिण्यै नमः।
५१४. ॐ द्वेषिभंजिन्यै नमः।
५१५. ॐ दोषिण्यै नमः।
५१६. ॐ दोष-संयुक्तायै नमः।
५१७. ॐ दुष्ट-शत्रु-विनाशिन्यै नमः।

५१८. ॐ देवतार्तिहरायै नमः।

५१९. ॐ दुष्टदैत्य-संघ-विनाशिन्यै नमः।

५२०. ॐ दुष्टदानव-हन्त्र्यै नमः।

५२१. ॐ दुष्ट-दैत्य-निषूदिन्यै नमः।

५२२. ॐ देवता-प्राणदायै नमः।

५२३. ॐ देव्यै नमः।

५२४. ॐ देव-दुर्गति-नाशिन्यै नमः।

५२५. ॐ नटनायक-संसेव्यायै नमः।

५२६. ॐ नर्त्तक्यै नमः।

५२७. ॐ नर्तक-प्रियायै नमः।

५२८. ॐ नाट्य-विद्यायै नमः।

५२९. ॐ नाट्यकर्त्र्यै नमः।

५३०. ॐ नादिन्यै नमः।

५३१. ॐ नादकारिण्यै नमः।

५३२. ॐ नवीनायै नमः।

५३३. ॐ नूतनायै नमः।

५३४. ॐ नव्यायै नमः।

५३५. ॐ नवीन-वस्त्र-धारिण्यै नमः।

५३६. ॐ नव्यभूषायै नमः।

५३७. ॐ नव्यमाल्यायै नमः।

५३८. ॐ नव्यालंकार-शोभितायै नमः।

५३९. ॐ नकारवादिन्यै नमः।

५४०. ॐ नम्यायै नमः।

५४१. ॐ नवभूषण-भूषितायै नमः।

५४२. ॐ नीचमार्गायै नमः।

५४३. ॐ नीच-भूमिर्नीचमार्ग-गतिर्गत्यै नमः।

५४४. ॐ नाथसेव्यायै नमः।

५४५. ॐ नाथभक्तायै नमः।

५४६. ॐ नाथानन्द-प्रदायिन्यै नमः।

५४७. ॐ नम्रायै नमः।

५४८. ॐ नम्र-गति-र्नेत्र्यै नमः।

५४९. ॐ निदान-वाक्य-वादिन्यै नमः।

५५०. ॐ नारीमध्य-स्थितायै नमः।

५५१. ॐ नार्यै नमः।

५५२. ॐ नारी-मध्यगता-ऽनघायै नमः।

५५३. ॐ नारीप्रीति-र्नराराध्यायै नमः।

५५४. ॐ नरनाम-प्रकाशिन्यै नमः।

५५५. ॐ रत्यै नमः।

५५६. ॐ रति-प्रियायै नमः।

५५७. ॐ रम्यायै नमः।

५५८. ॐ रतिप्रेमायै नमः।

५५९. ॐ रतिप्रदायै नमः।

५६०. ॐ रति-स्थान-स्थिताऽऽराध्यायै नमः।

५६१. ॐ रतिहर्ष-प्रदायिन्यै नमः।

५६२. ॐ रतिरूपायै नमः।

५६३. ॐ रतिर्ध्यानायै नमः।

५६४. ॐ रति-रीति-सुधारिण्यै नमः।

५६५. ॐ रतिरास-महोल्लासायै नमः।

५६६. ॐ रतिरास-विहारिण्यै नमः।

५६७. ॐ रतिकान्त-स्तुतायै नमः।

५६८. ॐ राश्यै नमः।

५६९. ॐ राशि-रक्षण-कारिण्यै नमः।

५७०. ॐ अरूपायै नमः।

५७१. ॐ शुद्धरूपायै नमः।

५७२. ॐ सुरूपायै नमः।

५७३. ॐ रूपगर्वितायै नमः।

५७४. ॐ रूप-यौवन-सम्पन्नायै नमः।

५७५. ॐ रूपराश्यै नमः।

५७६. ॐ रमावत्यै नमः।

५७७. ॐ रोधिन्यै नमः।

५७८. ॐ रोषिण्यै नमः।

५७९. ॐ रुष्टायै नमः।

५८०. ॐ रोषिरुद्धायै नमः।

५८१. ॐ रसप्रदायै नमः।

५८२. ॐ मादिन्यै नमः।

५८३. ॐ मदनप्रीतायै नमः।

५८४. ॐ मधुमत्तायै नमः।

५८५. ॐ मधुप्रदायै नमः।

५८६. ॐ मद्यपायै नमः।

५८७. ॐ मद्यपध्येयायै नमः।

५८८. ॐ मद्यप-प्राण-रक्षिण्यै नमः।

५८९. ॐ मद्यपानन्दसन्द्रायै नमः।

५९०. ॐ मद्यप-प्रेम-ताषितायै नमः।

५९१. ॐ मद्यपानरतायै नमः।

५९२. ॐ मत्तायै नमः।

५९३. ॐ मद्यपान-विहारिण्यै नमः।

५९४. ॐ मदिरायै नमः।

५९५. ॐ मदिरा-रक्तायै नमः।

५९६. ॐ मदिरापान-हर्षिण्यै नमः।

५९७. ॐ मदिरापान-सन्तुष्टायै नमः।

५९८. ॐ मदिरापान-मोहिन्यै नमः।

५९९. ॐ मदिरामानसायै नमः।

६००. ॐ मुग्धायै नमः।

६०१. ॐ माध्वीपायै नमः।

६०२. ॐ मदिराप्रदायै नमः।

६०३. ॐ माध्वी-दान-सदानन्दायै नमः।

६०४. ॐ माध्वीपानरतायै नमः।

६०५. ॐ सदायै नमः।

६०६. ॐ मोदिन्यै नमः।

६०७. ॐ मोदसन्दात्र्यै नमः।

६०८. ॐ मुदितायै नमः।

६०९. ॐ मोद-मानसायै नमः।

६१०. ॐ मोदकर्त्र्यै नमः।

६११. ॐ मोददात्र्यै नमः।

६१२. ॐ मोद-मंगल-कारिण्यै नमः।

६१३. ॐ मोदकादान-सन्तुष्टायै नमः।

६१४. ॐ मोदक-ग्रहणक्षमायै नमः।

६१५. ॐ मोदकालब्धि-संक्रुद्धायै नमः।

६१६. ॐ मोदक-प्राप्ति-तोषिण्यै नमः।

६१७. ॐ मांसादायै नमः।

६१८. ॐ मांस-सम्भक्षायै नमः।

६१९. ॐ मांस-भक्षण-हर्षिण्यै नमः।

६२०. ॐ मांस-पाक-परप्रेमायै नमः।

६२१. ॐ मांसपाकालय-स्थितायै नमः।

६२२. ॐ मत्स्यमांस-कृतास्वादा-मकार-पंचकार्चितायै नमः।

६२३. ॐ मुद्रायै नमः।

६२४. ॐ मुद्रान्वितायै नमः।

६२५. ॐ मातायै नमः।

६२६. ॐ महामोहा-मनस्विन्यै नमः।

६२७. ॐ मुद्रिकायै नमः।

६२८. ॐ मुद्रिकायुक्तायै नमः।

६२९. ॐ मुद्रिकाकृतलक्षणायै नमः।

६३०. ॐ मुद्रिकालंकृतायै नमः।

६३१. ॐ माद्र्यै नमः।

६३२. ॐ मन्दराचल-वासिन्यै नमः।

६३३. ॐ मन्दराचल-संसेव्यायै नमः।

६३४. ॐ मन्दराचल-भाविन्यै नमः।

६३५. ॐ मन्दराध्येय-पादाब्जायै नमः।

६३६. ॐ मन्दरारण्य-वासिन्यै नमः।

६३७. ॐ मन्दुरावासिन्यै नमः।

६३८. ॐ मन्दायै नमः।

६३९. ॐ मारिण्यै नमः।

६४०. ॐ मारिकायै नमः।

६४१. ॐ मितायै नमः।

६४२. ॐ महामार्यै नमः।

६४३. ॐ महामारी-शमिन्यै नमः।

६४४. ॐ शव-संस्थितायै नमः।

६४५. ॐ शवमांसकृताहारायै नमः।

६४६. ॐ श्मशानालयवासिन्यै नमः।

६४७. ॐ श्मशान-सिद्धि-संहृष्टायै नमः।

६४८. ॐ श्मशान-भवन-स्थितायै नमः।

६४९. ॐ श्मशान-शयनागारायै नमः।

६५०. ॐ श्मशान-भस्म-लेपितायै नमः।

६५१. ॐ श्मशान-भस्म-भीमांग्यै नमः।

६५२. ॐ श्मशानावास-कारिण्यै नमः।

६५३. ॐ शामिन्यै नमः।

६५४. ॐ शमनाराध्यायै नमः।

६५५. ॐ शमन-स्तुति-वन्दितायै नमः।

६५६. ॐ शमनाचार-सन्तुष्टायै नमः।

६५७. ॐ शमनागार-वासिन्यै नमः।

६५८. ॐ शमन-स्वामिन्यै नमः।

६५९. ॐ शान्त्यै नमः।

६६०. ॐ शान्त-सज्जन-पूजितायै नमः।

६६१. ॐ शान्ता-पूजा-परायै नमः।

६६२. ॐ शान्तायै नमः।

६६३. ॐ शान्तागार-प्रभोजिन्यै नमः।

६६४. ॐ शान्त-पूज्यायै नमः।

६६५. ॐ शान्त-वन्द्यायै नमः।

६६६. ॐ शान्त-ग्रह-सुधारिण्यै नमः।

६६७. ॐ शान्तरूपायै नमः।

६६८. ॐ शान्तियुक्तायै नमः।

६६९. ॐ शान्त-चन्द्रप्रभाऽमलायै नमः।

६७०. ॐ अमलायै नमः।

६७१. ॐ विमलाऽम्लानायै नमः।

६७२. ॐ मालती-कुंज-वासिन्यै नमः।

६७३. ॐ मालती-पुष्प-सम्प्रीतायै नमः।

६७४. ॐ मालती-पुष्प-पूजितायै नमः।

६७५. ॐ महोग्रायै नमः।

६७६. ॐ महत्यै नमः।

६७७. ॐ मध्यायै नमः।

६७८. ॐ मध्यम-ध्वनि-कारिण्यै नमः।

६७९. ॐ मध्यम-ध्वनि-सम्प्रीतायै नमः।

६८०. ॐ मध्यमायै नमः।

६८१. ॐ मध्यम-प्रीतिर्मध्यम-प्रेम-पूरितायै नमः।

६८२. ॐ मध्यांग-चित्र-वसनायै नमः।

६८३. ॐ मध्य-खिन्नायै नमः।

६८४. ॐ महोद्धतायै नमः।

६८५. ॐ महेन्द्रसुर-सम्पूज्यायै नमः।

६८६. ॐ महेन्द्र-परिवन्दितायै नमः।

६८७. ॐ महेन्द्र-जाल-संयुक्तायै नमः।

६८८. ॐ महेन्द्र-जाल-कारिण्यै नमः।

६८९. ॐ महेन्द्र-मानितायै नमः।

६९०. ॐ मान्यायै नमः।

६९१. ॐ मानिनी-गण-मध्यगायै नमः।

६९२. ॐ मानिनी-मान-सम्प्रीतायै नमः।

६९३. ॐ मान-विध्वंस-कारिण्यै नमः।

६९४. ॐ मानिन्या-कर्षिणी नमः।

६९५. ॐ मुक्ति-र्मुक्ति-दात्र्यै नमः।

६९६. ॐ सुमुक्तिदायै नमः।

६९७. ॐ मुक्ति-द्वेषकर्यै नमः।

६९८. ॐ मूल्यकारिण्यै नमः।

६९९. ॐ मूल्यहारिण्यै नमः।

७००. ॐ निर्मूलायै नमः।

७०१. ॐ मूल-संयुक्तायै नमः।

७०२. ॐ मूलिन्यै नमः।

७०३. ॐ मूल-मन्त्रिण्यै नमः।

७०४. ॐ मूलमन्त्र-कृतार्हाद्यायै नमः।

७०५. ॐ मूलमन्त्रार्घ-हर्षिण्यै नमः।

७०६. ॐ मूलमन्त्र-प्रतिष्ठात्र्यै नमः।

७०७. ॐ मूलमन्त्र-प्रहर्षिण्यै नमः।

७०८. ॐ मूलमन्त्र-प्रसन्नास्यायै नमः।

७०९. ॐ मूलमन्त्र-प्रपूजितायै नमः।

७१०. ॐ मूलमन्त्र-प्रणेत्र्यै नमः।

७११. ॐ मूलमन्त्र-कृतार्चनायै नमः।

७१२. ॐ मूलमन्त्र-प्रहृष्टात्मायै नमः।

७१३. ॐ मूलविद्यायै नमः।

७१४. ॐ मलापहायै नमः।

७१५. ॐ विद्याऽविद्यायै नमः।

७१६. ॐ वटस्थायै नमः।
७१७. ॐ वट-वृक्ष-निवासिन्यै नमः।
७१८. ॐ वटवृक्ष-कृत-स्थानायै नमः।
७१९. ॐ वटपूजा-परायणायै नमः।
७२०. ॐ वटपूजा-परिप्रीतायै नमः।
७२१. ॐ वट-दर्शन-लालसायै नमः।
७२२. ॐ वटपूजा-कृता-ह्लादायै नमः।
७२३. ॐ वटपूजा-विवर्द्धिन्यै नमः।
७२४. ॐ वशिन्यै नमः।
७२५. ॐ विवशाराध्यायै नमः।
७२६. ॐ वशीकरण-मन्त्रिण्यै नमः।
७२७. ॐ वशीकरण-सम्प्रीतायै नमः।
७२८. ॐ वशीकारक-सिद्धिदायै नमः।
७२९. ॐ बटुकायै नमः।
७३०. ॐ बटुकाराध्यायै नमः।
७३१. ॐ बटुकाहार-दायिन्यै नमः।
७३२. ॐ बटुकार्चापरायै नमः।
७३३. ॐ पूज्यायै नमः।
७३४. ॐ बटुकार्चा-विवर्द्धिन्यै नमः।
७३५. ॐ बटुकानन्दकर्त्र्यै नमः।
७३६. ॐ बटुकप्राणरक्षिण्यै नमः।
७३७. ॐ बटुकेज्या-प्रदाऽपारायै नमः।

७३८. ॐ पारिण्यै नमः।

७३९. ॐ पार्वती-प्रियायै नमः।

७४०. ॐ पर्वताग्र-कृंता-वासायै नमः।

७४१. ॐ पर्वतेन्द्र-प्रपूजितायै नमः।

७४२. ॐ पार्वती-पति-पूज्यायै नमः।

७४३. ॐ पार्वती-पति-हर्षदायै नमः।

७४४. ॐ पार्वती-पति-बुद्धिस्थायै नमः।

७४५. ॐ पार्वती-पति-मोहिन्यै नमः।

७४६. ॐ पार्वती-यद्विजाराध्यायै नमः।

७४७. ॐ पर्वतस्थायै नमः।

७४८. ॐ प्रतारिण्यै नमः।

७४९. ॐ पद्मलायै नमः।

७५०. ॐ पद्मिन्यै नमः।

७५१. ॐ पद्मायै नमः।

७५२. ॐ पद्ममाला-विभूषितायै नमः।

७५३. ॐ पद्मजेढ्यपदायै नमः।

७५४. ॐ पद्ममाला-लंकृत-मस्तकायै नमः।

७५५. ॐ पद्मार्चित-पद-द्वन्द्वायै नमः।

७५६. ॐ पद्महस्तायै नमः।

७५७. ॐ पयोधिजायै नमः।

७५८. ॐ पयोधि-पारंगत्र्यै नमः।

७५९. ॐ पयोधि-परिकीर्तितायै नमः।

७६०. ॐ पाथोधिपारगायै नमः।

७६१. ॐ पूतायै नमः।

७६२. ॐ पल्वलाम्बु-प्रतर्पितायै नमः।

७६३. ॐ पल्वलान्तायै नमः।

७६४. ॐ पयोमग्नायै नमः।

७६५. ॐ पवमान-गतिर्गत्यै नमः।

७६६. ॐ पयपानायै नमः।

७६७. ॐ पयोदात्र्यै नमः।

७६८. ॐ पानीय-परिकांक्षिण्यै नमः।

७६९. ॐ पयोज-माला-भरणायै नमः।

७७०. ॐ मुण्डमाला-विभूषणायै नमः।

७७१. ॐ मुण्डिन्यै नमः।

७७२. ॐ मुण्डहन्त्र्यै नमः।

७७३. ॐ मुण्डितायै नमः।

७७४. ॐ मुण्ड-शोभितायै नमः।

७७५. ॐ मणिभूषायै नमः।

७७६. ॐ मणिग्रीवायै नमः।

७७७. ॐ मणिमाला-विराजितायै नमः।

७७८. ॐ महामोहायै नमः।

७७९. ॐ महाशौर्यायै नमः।

७८०. ॐ महामायायै नमः।

७८१. ॐ महाहवायै नमः।

७८२. ॐ मानव्यै नमः।
७८३. ॐ मानवीपूज्यायै नमः।
७८४. ॐ मनुवंश-विवर्द्धिन्यै नमः।
७८५. ॐ मठिन्यै नमः।
७८६. ॐ मठसंहन्त्र्यै नमः।
७८७. ॐ मठ-सम्पत्ति-हारिण्यै नमः।
७८८. ॐ महाक्रोधवत्यै नमः।
७८९. ॐ मूढायै नमः।
७९०. ॐ मूढ-शत्रु-विनाशिन्यै नमः।
७९१. ॐ पाठीन-भोजिन्यै नमः।
७९२. ॐ पूर्णायै नमः।
७९३. ॐ पूर्णहार-विहारिण्यै नमः।
७९४. ॐ प्रलयानल-तुल्याभायै नमः।
७९५. ॐ प्रलयानल-रूपिण्यै नमः।
७९६. ॐ प्रलयार्णव-संमग्नायै नमः।
७९७. ॐ प्रलयाब्धि-विहारिण्यै नमः।
७९८. ॐ महाप्रलय-सम्भूतायै नमः।
७९९. ॐ महाप्रलय-कारिण्यै नमः।
८००. ॐ महाप्रलय-सम्प्रीतायै नमः।
८०१. ॐ महाप्रलय-साधिन्यै नमः।
८०२. ॐ महाप्रलय-सम्पूज्यायै नमः।
८०३. ॐ महाप्रलय-मोदिन्यै नमः।

८०४. ॐ छेदिन्यै नमः।

८०५. ॐ छिन्न-मुण्डोग्रायै नमः।

८०६. ॐ छिन्नायै नमः।

८०७. ॐ छिन्नरूहार्थिन्यै नमः।

८०८. ॐ शत्रुसंछेदिनी-छिन्नायै नमः।

८०९. ॐ क्षोदिन्यै नमः।

८१०. ॐ क्षोदकारिण्यै नमः।

८११. ॐ लक्षिण्यै नमः।

८१२. ॐ लक्ष्यसम्पूज्यायै नमः।

८१३. ॐ लक्षितायै नमः।

८१४. ॐ लक्षणान्वितायै नमः।

८१५. ॐ लक्षशस्त्र-समायुक्तायै नमः।

८१६. ॐ लक्षबाण-प्रमोचिन्यै नमः।

८१७. ॐ लक्षपूजा-पराऽलक्ष्यायै नमः।

८१८. ॐ लक्षकोदण्ड-खण्डिन्यै नमः।

८१९. ॐ लक्षकोदण्ड-संयुक्तायै नमः।

८२०. ॐ लक्षकोदण्ड-धारिण्यै नमः।

८२१. ॐ लक्षलीला-लयायै नमः।

८२२. ॐ लभ्यायै नमः।

८२३. ॐ लक्षागार-निवासिन्यै नमः।

८२४. ॐ लक्षलोभपरायै नमः।

८२५. ॐ लोलायै नमः।

८२६. ॐ लक्षभक्त-प्रपूजितायै नमः।

८२७. ॐ लोकिन्यै नमः।

८२८. ॐ लोक-सम्पूज्यायै नमः।

८२९. ॐ लोक-रक्षण-कारिण्यै नमः।

८३०. ॐ लोकवन्दित-पादाब्जायै नमः।

८३१. ॐ लोक-मोहन-कारिण्यै नमः।

८३२. ॐ ललितायै नमः।

८३३. ॐ लालितायै नमः।

८३४. ॐ लीनायै नमः।

८३५. ॐ लोक-संहार-कारिण्यै नमः।

८३६. ॐ लोक-लीलाकर्यै नमः।

८३७. ॐ लोक्यायै नमः।

८३८. ॐ लोक-सम्भव-कारिण्यै नमः।

८३९. ॐ भूत-शुद्धिकर्यै नमः।

८४०. ॐ भूत-रक्षिण्यै नमः।

८४१. ॐ भूत-पोषिण्यै नमः।

८४२. ॐ भूत-वेताल-संयुक्तायै नमः।

८४३. ॐ भूत-सेना-समावृतायै नमः।

८४४. ॐ भूत-प्रेत-पिशाचादि-स्वामिन्यै नमः।

८४५. ॐ भूत-पूजितायै नमः।

८४६. ॐ डाकिनी-शाकिनी-डेयायै नमः।

८४७. ॐ डिण्डि-मारावकारिण्यै नमः।

८४८. ॐ डमरू-वाद्य-सन्तुष्टायै नमः।

८४९. ॐ डमरू-वाद्य-कारिण्यै नमः।

८५०. ॐ हूंकार-कारिण्यै नमः।

८५१. ॐ होत्र्यै नमः।

८५२. ॐ हाविन्यै नमः।

८५३. ॐ हवनार्थिन्यै नमः।

८५४. ॐ हासिनी हासिन्यै नमः।

८५५. ॐ हास्य-हर्षिण्यै नमः।

८५६. ॐ हठवादिन्यै नमः।

८५७. ॐ अट्टाट्टहासिन्यै नमः।

८५८. ॐ टीकायै नमः।

८५९. ॐ टीका-निर्माण-कारिण्यै नमः।

८६०. ॐ टंकिन्यै नमः।

८६१. ॐ टंकितायै नमः।

८६२. ॐ टंकायै नमः।

८६३. ॐ टंकमात्र-सुवर्णदायै नमः।

८६४. ॐ टंकारिण्यै नमः।

८६५. ॐ टकाराढ्यायै नमः।

८६६. ॐ शत्रु-त्रोटन-कारिण्यै नमः।

८६७. ॐ त्रुटितायै नमः।

८६८. ॐ त्रुटिरूपायै नमः।

८६९. ॐ त्रुटि-सन्देह-कारिण्यै नमः।

८७०. ॐ तर्षिण्यै नमः।

८७१. ॐ तृट्परि-क्लान्तायै नमः।

८७२. ॐ क्षुत्क्षामायै नमः।

८७३. ॐ क्षुत्परिप्लुतायै नमः।

८७४. ॐ अक्षिण्यै नमः।

८७५. ॐ तक्षिण्यै नमः।

८७६. ॐ भिक्षा-प्रार्थिन्यै नमः।

८७७. ॐ शत्रु-भक्षिण्यै नमः।

८७८. ॐ कांक्षिण्यै नमः।

८७९. ॐ कुट्टिन्यै नमः।

८८०. ॐ क्रूरायै नमः।

८८१. ॐ कुट्टिनीवेश्म-वासिन्यै नमः।

८८२. ॐ कुट्टिनी-कोटि-सम्पूज्यायै नमः।

८८३. ॐ कुट्टिनी-कुलमार्गिण्यै नमः।

८८४. ॐ कुट्टिनी-कुल-संरक्षायै नमः।

८८५. ॐ कुट्टिनी-कुल-रक्षिण्यै नमः।

८८६. ॐ कालपाशा-वृताय नमः।

८८७. ॐ कन्या-कुमारी-पूजनप्रियायै नमः।

८८८. ॐ कौमुद्यै नमः।

८८९. ॐ कौमुदी-हृष्टायै नमः।

८९०. ॐ करुणादृष्टि-संयुतायै नमः।

८९१. ॐ कौतुकाचार-निपुणायै नमः।

८९२. ॐ कौतुकागार-वासिन्यै नमः।

८९३. ॐ काकपक्ष-धरायै नमः।

८९४. ॐ काक-रक्षिण्यै नमः।

८९५. ॐ काक-संवृतायै नमः।

८९६. ॐ काकांक-रथ-संस्थानायै नमः।

८९७. ॐ काकांकस्यन्दन-स्थितायै नमः।

८९८. ॐ काकिन्यै नमः।

८९९. ॐ काक-दृष्टिश्चयै नमः।

९००. ॐ काक-भक्षण-दायिन्यै नमः।

९०१. ॐ काकमातायै नमः।

९०२. ॐ काकयोन्यै नमः।

९०३. ॐ काक-मण्डल-मण्डितायै नमः।

९०४. ॐ काक-दर्शन-संशीलायै नमः।

९०५. ॐ काक-संकीर्ण-मन्दिरायै नमः।

९०६. ॐ काक-ध्यानस्थायै नमः।

९०७. ॐ देहादिध्यान-गम्याऽथमावृतायै नमः।

९०८. ॐ धनिन्यै नमः।

९०९. ॐ धनिसंसेव्यायै नमः।

९१०. ॐ धनच्छेदन-कारिण्यै नमः।

९११. ॐ धुन्धुरायै नमः।

९१२. ॐ धुन्धुराकारायै नमः।

९१३. ॐ धूम्रलोचन-घातिन्यै नमः।

११४. ॐ धूंकारिण्यै नमः।

११५. ॐ धूं मन्त्र-पूजितायै नमः।

११६. ॐ धर्म-नाशिन्यै नमः।

११७. ॐ धूम्रवर्णिन्यै नमः।

११८. ॐ धूम्राक्ष्यै नमः।

११९. ॐ धूम्राक्षासुर-घातिन्यै नमः।

१२०. ॐ धूं बीज-जप-सन्तुष्टायै नमः।

१२१. ॐ धूं बीज-जप-मानसायै नमः।

१२२. ॐ धूं बीज-जप-पूजार्हायै नमः।

१२३. ॐ धूं बीज-जपकारिण्यै नमः।

१२४. ॐ धूं बीजाकर्षितायै नमः।

१२५. ॐ धृष्यायै नमः।

१२६. ॐ धर्षिण्यै नमः।

१२७. ॐ धृष्ट-मानसायै नमः।

१२८. ॐ धूलिप्रक्षेपिण्यै नमः।

१२९. ॐ धूलि-व्याप्त-धम्मिल्ल-धारिण्यै नमः।

१३०. ॐ धूं बीज-जप-मालाढ्यायै नमः।

१३१. ॐ धूं बीज-निन्दकान्तकायै नमः।

१३२. ॐ धर्म-विद्वेषिण्यै नमः।

१३३. ॐ धर्म-रक्षिण्यै नमः।

१३४. ॐ धर्मतोषितायै नमः।

१३५. ॐ धारा-स्तम्भकर्यै नमः।

१३६. ॐ धर्तायै नमः।
१३७. ॐ धारा-वारि-विलासिन्यै नमः।
१३८. ॐ धां धीं धूं धैं मन्त्रवर्णायै नमः।
१३९. ॐ धौं धः स्वाहा-स्वरूपिण्यै नमः।
१४०. ॐ धरित्री-पूजितायै नमः।
१४१. ॐ धूर्वायै नमः।
१४२. ॐ धान्यच्छेदन-कारिण्यै नमः।
१४३. ॐ धिक्कारिण्यै नमः।
१४४. ॐ सुधीपूज्यायै नमः।
१४५. ॐ धामोद्यान-निवासिन्यै नमः।
१४६. ॐ धामोद्यान-पयोदात्र्यै नमः।
१४७. ॐ धाम-धूलि-प्रधूलितायै नमः।
१४८. ॐ महाध्वनिमत्यै नमः।
१४९. ॐ धूप्यायै नमः।
१५०. ॐ धूपामोद-प्रहर्षिण्यै नमः।
१५१. ॐ धूपादानमति-प्रीतायै नमः।
१५२. ॐ धूपदान-विनोदिन्यै नमः।
१५३. ॐ धीवरीगण-सम्पूज्यायै नमः।
१५४. ॐ धीवरी-वर-दायिन्यै नमः।
१५५. ॐ धीवरीगण-मध्यस्थायै नमः।
१५६. ॐ धीवरी-धाम-वासिन्यै नमः।
१५७. ॐ धीवरीगण-गोप्त्र्यै नमः।

१५८. ॐ धीवरी-गण-तोषितायै नमः।

१५९. ॐ धीवरी-धन-दात्र्यै नमः।

१६०. ॐ धीवरी-प्राण-रक्षिण्यै नमः।

१६१. ॐ धात्रीशायै नमः।

१६२. ॐ धातृ-सम्पूज्यायै नमः।

१६३. ॐ धात्री-वृक्ष-समाश्रयायै नमः।

१६४. ॐ धात्री-पूजन-कर्त्र्यै नमः।

१६५. ॐ धात्री-रोपण-कारिण्यै नमः।

१६६. ॐ धूम्रपान-रतासक्तायै नमः।

१६७. ॐ धूम्रपान-रतेष्टदायै नमः।

१६८. ॐ धूम्रपान-करानन्दायै नमः।

१६९. ॐ धूम्रवर्षण-कारिण्यै नमः।

१७०. ॐ धन्य-शब्द-श्रुति-प्रीतायै नमः।

१७१. ॐ धुन्धुकारि-जनच्छिदायै नमः।

१७२. ॐ धुन्धुकारीष्ट-सन्दात्र्यै नमः।

१७३. ॐ धुन्धुकारि-सुमुक्तिदायै नमः।

१७४. ॐ धुन्धु-कार्याराध्य-रूपायै नमः।

१७५. ॐ धुन्धुकारिमन-स्थितायै नमः।

१७६. ॐ धुन्धुहिताकांक्ष्यै नमः।

१७७. ॐ धुन्धुकारि-हितैषिण्यै नमः।

१७८. ॐ धिन्धिमा-राविण्यै नमः।

१७९. ॐ ध्यात्र्यै नमः।

९८०. ॐ ध्यानगम्यायै नमः।

९८१. ॐ धनार्थिन्यै नमः।

९८२. ॐ धोरिण्यै नमः।

९८३. ॐ धोरण-प्रीतायै नमः।

९८४. ॐ धारिण्यै नमः।

९८५. ॐ घोर-रूपिण्यै नमः।

९८६. ॐ धरित्री-रक्षिण्यै नमः।

९८७. ॐ देव्यै नमः।

९८८. ॐ धरा-प्रलय-कारिण्यै नमः।

९८९. ॐ धराधर-सुताऽशेष-धाराधर-समद्युत्यै नमः।

९९०. ॐ धनाध्यक्षायै नमः।

९९१. ॐ धनप्राप्तिर्द्धनधान्य-विवर्द्धिन्यै नमः।

९९२. ॐ धनाकर्षणकर्त्र्यै नमः।

९९३. ॐ धनाहरण-कारिण्यै नमः।

९९४. ॐ धनच्छेदन-कर्त्र्यै नमः।

९९५. ॐ धनहीनायै नमः।

९९६. ॐ धनप्रियायै नमः।

९९७. ॐ धनसंवृद्धि-सम्पन्नायै नमः।

९९८. ॐ धनदान-परायणाय नमः।

९९९. ॐ धनहृष्टायै नमः।

१०००. ॐ धनपुष्टायै नमः।

१००१. ॐ दानाध्ययन-कारिण्यै नमः।

१००२. ॐ धनरक्षायै नमः।

१००३. ॐ धनप्राणायै नमः।

१००४. ॐ धनानन्दकर्यै नमः।

१००५. ॐ शत्रुहन्त्र्यै नमः।

१००६. ॐ शवारूढायै नमः।

१००७. ॐ शत्रु-संहार-कारिण्यै नमः।

१००८. ॐ शत्रुपक्ष-क्षतिप्रीतायै नमः।

१००९. ॐ शत्रुपक्ष-निषूदिन्यै नमः।

१०१०. ॐ शत्रु-ग्रीवाच्छिदायै नमः।

१०११. ॐ छायायै नमः।

१०१२. ॐ शत्रु-पद्धति-खण्डिन्यै नमः।

१०१३. ॐ शत्रु-प्राण-हरा-हार्यायै नमः।

१०१४. ॐ शत्रून्मूलन-कारिण्यै नमः।

१०१५. ॐ शत्रुकार्य-विहन्त्र्यै नमः।

१०१६. ॐ सांगशत्रु-विनाशिन्यै नमः।

१०१७. ॐ सांगशत्रु-कुलच्छेत्र्यै नमः।

१०१८. ॐ शत्रुसद्म-प्रदाहिन्यै नमः।

१०१९. ॐ सांग-सायुध-सर्वारि-सर्व-सम्पत्तिनाशिन्यै नमः।

१०२०. ॐ सांगसायुध-सर्वारि-देह-गेह-प्रहातिन्यै नमः।

ॐ अनया पूजया श्री धूमावती प्रियताम् न मम।



अध्याय 16

 श्री धूमावती आरती 

अपने इष्ट देवता अथवा आराध्य देव या देवी की पूजा-अर्चना तथा मन्त्र-जप के उपरान्त उनकी आरती तथा क्षमा-याचना करने का विधान है। इससे देवी अथवा देवता का सानिध्य एवं कृपा प्राप्त होती है और मन को बहुत शान्ति मिलती है। इसलिए सभी साधकों को मेरा परामर्श है कि पूजा-अर्चना के उपरान्त आरती तथा क्षमा-याचना अवश्य करें।

मूल रूप से भगवती धूमावती की आरती कहीं भी उपलब्ध नहीं है। लेकिन उनकी आराधना करते समय मैं जो आरती करता हूं, वह तारापीठ पर गायी जाती है। भगवती तारा भी चूंकि भगवती धूमावती का पूर्व स्वरूप हैं, इसलिए यही आरती उचित प्रतीत होती है। यहां मैं साधकों की सुविधा के लिए आरती का हिन्दी अनुवाद भी लिख रहा हूं।

आरती-1

देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं त्वमीश्वरी देवि
चराचरस्य॥१॥
आधारभूता जगतस्त्वमेका महीस्वरूपेण यतः स्थितासि।
अपां स्वरूपस्थितया त्वयैतदाप्यायते
कृत्स्नमलंघ्यवीर्ये॥२॥
त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या विश्वस्य बीजं परमासि माया।
सम्मोहितं देवि समस्तमेतत् त्वं वै प्रसन्ना भुवि
मुक्तिहेतुः॥३॥
विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला
जगत्सु॥४॥
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत् का ते स्तुतिः स्तव्यपरा
परोक्तिः॥५॥
सर्वभूता यदा देवी स्वतर्गमुक्ति प्रदायिनि।
त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः॥६॥
सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते।
स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते॥७॥
कलाकाष्ठादिरूपेण परिणामप्रदायिनि।
विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि नमोऽस्तुते॥८॥

सर्वमंगलमंगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते॥९॥
सृष्टिस्थिति-विनाशानां शक्तिभूते सनातनि।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तुते॥१०॥
शरणागत-दीनार्त-परित्राण-परायणे।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तुते॥११॥
काकयुक्तरथस्थे ब्रह्माणिरूप-धारिणि।
कौशाम्भःक्षरिके देवि नारायणि नमोऽस्तुते॥१२॥
शूपचन्द्राहिधरे महावृषभवाहिनि।
माहेश्वरी-स्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तुते॥१३॥
मयूरकुक्कुटवृते महाशक्तिधरेऽनघे।
कौमारी-रूप-संस्थाने नारायणि नमोऽस्तुते॥१४॥
शंख-चक्र-गदाशारंग-गृहीत-परमायुधे।
प्रसीद वैष्णावीरूपे नारायणि नमोऽस्तुते॥१५॥
गृहीतोग्र-महाचक्रे दंष्ट्रोद्धृत-वसुंधरे।
वराह-रूपिणि शिवे नारायणि नमोऽस्तुते॥१६॥
नृसिंह-रूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे।
त्रैलोक्य-त्राण सहिते नारायणि नमोऽस्तुते॥१७॥
किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्ज्वले।
वृत्रप्राणहरे चैन्द्रि नारायणि नमोऽस्तुते॥१८॥
शिवदूती-स्वरूपेण हतदैत्यमहाबले।
घोररूपे महाराव नारायणि नमोऽस्तुते॥१९॥

दंष्ट्रा-करालवदने शिरोमालाविभूषणे।
चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि नमोऽस्तुते॥२०॥
लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टिस्वधे ध्रुवे।
महारात्रि महाऽविद्ये नारायणि नमोऽस्तुते॥२१॥
मेधे सरस्वति वरे भूति बाभ्रवि तामसि।
नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तुते॥२२॥
सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति-समन्विते।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तुते॥२३॥

भावार्थ– शरणागतों की पीड़ा को दूर करने वाली हे देवि! हम पर प्रसन्न हो जाओ। सम्पूर्ण जगत् की माता! प्रसन्न हो जाओ। विश्वेश्वरि! विश्व की रक्षा करो। देवी आप ही इस चराचर जगत् की स्वामिनी हो। तुम ही इस संसार का एकमात्र आधार हो, क्योंकि पृथ्वी के रूप में भी तुम ही हो। देवि! आपका पराक्रम अलंघनीय है। आप ही जल के रूप में स्थित होकर समस्त जगत् को तृप्ति प्रदान करती हो। आप अत्यन्त बलशाली वैष्णवी शक्ति हो। इस संसार की कारणभूता परामाया हो। देवि! आपने इस सम्पूर्ण जगत् को मोहित कर रखा है। आप ही प्रसन्न होकर इस पृथ्वी पर मोक्ष की प्राप्ति कराती हो। देवि! समस्त विद्याएं आपके ही पृथक्-पृथक् स्वरूप हैं। इस संसार में जितनी भी स्त्रियां हैं, वे सब आपकी ही प्रतिमाएं हैं। हे जगदम्बा! एकमात्र आपने ही इस संसार को व्याप्त कर रखा है। आपकी क्या स्तुति की जा सकती है? आप तो स्तुति करने योग्य पदार्थों से भी परे एवं परावाणी हो। जब आप सर्वस्वरूपा देवी हो और और स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करने वाली हो, तब इस स्वरूप में आपकी स्तुति तो स्वतः ही हो गयी। आपकी स्तुति के लिए इससे अच्छा

उदाहरण और क्या हो सकता है? बुद्धि के रूप में समस्त मनुष्यों के हृदय में विराजित रहने वाली और स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करने वाली हे नारायणी देवि! आपको नमस्कार है। कला-काष्ठा आदि के रूप में परिणाम (अवस्था परिवर्तन) की ओर ले जाने वाली एवं विश्व का उपसंहार करने में समर्थ नारायणि! तुम्हें नमस्कार है। नारायणि! तुम सब प्रकार का मंगल प्रदान करने वाली मंगलमयी हो। कल्याणदायिनी शिवा हो। सब पुरुषार्थों को सिद्ध करने वाली, शरणागतों की वत्सला, त्रिनेत्रा एवं गौरी हो। तुम्हें नमस्कार है। तुम सृष्टि, स्थिति और संहार की शक्तिभूता सनातनी देवी, गुणों का आधार तथा सर्वगुणमयी हो। नारायणि! तुम्हें नमस्कार है। शरण में आये हुए दीनों तथा पीड़ितों की रक्षा में लगी रहने वाली तथा सबकी पीड़ा दूर करने वाली नारायणी देवि! तुम्हें नमस्कार है। नारायणि! तुम ब्रह्माणी का रूप धारण करके कौए से जुते रथ पर बैठती तथा कुशा से मिश्रित जल छिड़कती रहती हो। तुम्हें नमस्कार है। माहेश्वरी के रूप में त्रिशूल, चन्द्रमा एवं सर्प को धारण करने वाली तथा महान वृषभ की पीठ पर बैठने वाली नारायणी देवी तुम्हें नमस्कार है। मोरों तथा मुर्गों से घिरी रहने वाली तथा महाशक्ति धारण करने वाली कौमारी रूप धारिणी निष्पापी नारायणि! तुम्हें नमस्कार है। शंख, चक्र, गदा और शारंग धनुष रूप उत्तम आयुधों को धारण करने वाली वैष्णवी शक्तिरूपा नारायणि! तुम प्रसन्न हो जाओ। तुम्हें नमस्कार है। हाथ में भयानक महाचक्र लिये और दाढ़ों पर पृथ्वी को उठाये वाराहीरूपा कल्याणमयी नारायणि! तुम्हें नमस्कार है। भयंकर नृसिंह के रूप में दैत्यों के वध के लिए उद्योग करने वाली तथा त्रिभुवन की रक्षा में रत् रहने वाली नारायणि! तुम्हें नमस्कार है। मस्तक पर किरीट और हाथ में महावज्र धारण करने वाली, हजारों नेत्रों के कारण उद्दीप्त दिखायी देने वाली और वृत्रासुर

के प्राणों का हरण करने वाली इन्द्रशक्तिरूपा नारायणी देवि! तुम्हें नमस्कार है। शिवदूती रूप से दैत्यों की विशाल सेना का संहार करने वाली भयंकर स्वरूपा तथा विकट गर्जना करने वाली नारायणि! तुम्हें नमस्कार है। दाढ़ों के कारण विकराल मुख वाली मुण्डमाला से विभूषित मुण्डमर्दिनी चामुण्डारूपा नारायणि! तुम्हें नमस्कार है। लक्ष्मी, लज्जा, महाविद्या, श्रद्धा, पुष्टि, स्वधा, ध्रुवा, महारात्री तथा महा अविद्यारूपा नारायणि! तुम्हें नमस्कार है। मेधा, सरस्वती, श्रेष्ठा, ऐश्वर्यरूपा, भूरे रंग की अर्थात् पार्वती, तामसी अर्थात् महाकाली, नियता अर्थात् संयम रखने वाली तथा ईशा अर्थात् सबकी अधीश्वररूपिणी नारायणि! तुम्हें नमस्कार है। सर्वस्वरूपा, सर्वेश्वरी तथा सब प्रकार की शक्तियों से सम्पन्न दिव्यरूपा दुर्गे देवि! सभी प्रकार के भय से हमारी रक्षा करो, तुम्हें नमस्कार है। जयकारा बम बम, जयकारा बम बम, जयकारा बम बम, जयकारा बम बम।

आरती-2

जगजननी जय! जय! मां!! जगजननी जय! जय!!
भयहारिणि, भवतारिणि, भवभामिनि जय! जय!!
जगजननी ....

तू ही सत-चित्त-सुखमय शुद्ध ब्रह्मरूपा।
सत्य सनातन सुन्दर परशिव सुर - भूपा॥
जगजननी ....

आदि अनादि अनामय अविचल अविनाशी।
अमल अनन्त अगोचर अज आनंदराशी॥
जगजननी ....

अविकारी, अघहारी, अकल, कलाधारी।
कर्त्ता विधि, भर्त्ता हरि, हर संहारकारी।।
जगजननी ....

तू विधिवधू, रमा, तू उमा, महामाया।
मूल प्रकृति विद्या तू, तू जननी, जाया।।
जगजननी ....

रामकृष्ण तू, सीता, व्रजरानी राधा।
तू वांछाकल्पद्रुम, हारिणि सब बाधा।।
जगजननी ....

दश विद्या, नव दुर्गा, नानाशस्त्रकरा।
अष्टमातृका, योगिनि, नव नव रूप धरा।।
जगजननी ....

तू परधाम - निवासिनि, महाविलासिनि तू।
तू ही श्मशान-विहारिणि, ताण्डवलासिनि तू।।
जगजननी ....

सुर - मुनि - मोहिनि सौम्या तू शोभाऽऽधारा।
विवसन विकट - सरूपा, प्रलयमयी धारा।।
जगजननी ....

तू ही स्नेह - सुधामयि, तू अति गरलमना।
रत्नविभूषित तू ही, तू ही अस्थितना।।
जगजननी ....

मूलाधार - निवासिनि, इह - पर - सिद्धिप्रदे।
कालातीता काली, कमला तू वरदे॥
जगजननी ....

शक्ति शक्तिधर तू ही नित्य अभेदमयी।
भेद - प्रदर्शिनि वाणी विमले! वेदत्रयी॥
जगजननी ....

हम अति दीन दुखी मां! विपत जाल घेरे।
हैं कपूत अति कपटी, पर बालक तेरे॥
जगजननी ....

निज स्वभाववश जननी! दयादृष्टि कीजै।
करुणा कर करुणामयि! चरण शरण दीजै॥
जगजननी ....



(इति शुभं भूयात्)

××××

: श्री योगेश्वरानन्द द्वारा लिखित एवं प्रकाशित अन्य ग्रन्थ :

- श्री बगलामुखी साधना और सिद्धि
- मन्त्र-साधना
- षोडशी महाविद्या (श्रीयन्त्र पूजन-पद्धति, ससपर्या)
- षट्कर्म-विधान
- आगम-रहस्य
- श्री प्रत्यंगिरा साधना-रहस्य
- श्री बगलामुखी तन्त्रम्
- श्री कामाख्या रहस्यम्
- यन्त्र-साधना
- अघोरी (वामाचार साधना-रहस्य)
- शाबर मन्त्र सर्वस्व
- श्री तारा-तन्त्रम्

: आगामी ग्रन्थ :

- मन्त्र-सिद्धि-रहस्य
- सूर्य; आस्था से स्वास्थ्य तक
- श्री बगलामुखी साधना-रहस्य (ब्रह्मास्त्र-साधना)
- महाकाली साधना और सिद्धि
- शरभशालुव पक्षिराज-प्रयोग
- महाविद्या-साधना विधान
- शत्रु-दमन प्रयोग
- श्रीविद्या-साधना कल्प (ससपर्या)
- श्री बगलामुखी यन्त्र-पूजन एवं नामार्चन पद्धति